सी० बी०-दो संख्या 305

लोक-सभा

सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक

1974

(संयुक्त समिति का प्रतिवेदन)

[1 अप्रैल, 1976 को पेश किया गया]

लोक सभा सचिवालय

नई दिल्ली

अप्रैल, 1976/चैत्र, 1898(शक)

विषय-सूची

	पृष्ठ
संयुक्त समिति की रचना	तीन
संयुक्त समिति का प्रतिवेदन	छः
विशेष टिप्पण	सैंतालीस
संयुक्त समिति द्वारा प्रतिवेदित रूप में विधेयक	1

सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 1974

संबंधी संयुक्त समिति

समिति की रचना

श्री एल0 डी0 कटकी — सभापति

सदस्य

लोक-सभा

2. श्री आर0 वी0 वड़े
3. श्री टी0 दास कृष्णैया
4. श्री नरेन्द्र सिंह सिष्ट
5. श्री चन्द्रिका प्रसाद
6. श्री ए0 एम0 चेलाचामी
7. श्री एम0 सी0 डागा
* 8. श्री तुलसीदास दासप्पा
9. सरदार महेन्द्र सिंह गिल
10. श्री एच0 आर0 गोखले
11. श्री दिनेश जोरदार
12. श्री वी0 आर0 कावड़े
13. श्रीमती टी0 लक्ष्मीकांतम्मा
? 14. श्री मधु लिमये
15. श्री वी0 मायावन
16. श्री मोहम्मद ताहिर
17. श्री सुरेन्द्र महतो
18. श्री मुस्तफा हुडा
19. श्री डी0 के0 पंडा
20. श्री के0 प्रधानी
21. श्री राजदेव सिंह

---

* श्री प्रभुदास पटेल द्वारा त्यागपत्र देने पर उनके स्थान पर 2.12.74 से नियुक्त हुए।

? 22.3.76 से लोकसभा की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया

23. श्रीमती सावित्रीश्याम

24. श्री आर0 एन0 शर्मा

25. श्री सत्येन्द्र नारायण सिन्हा

26. श्री टी0 सोहन लाल

27. श्री सिद्धरामेश्वर स्वामी

% 28. श्री सी0 एम0 स्टीफन

29. श्री आर0 जी0 तिवारी

** 30. डा0 (श्रीमती) सरोजिनी महिषी

राज्य-सभा

31. श्री सरदार अमजद अली

= 32. श्री मोहम्मद उस्मान आरिफ

33. श्री वीरचन्द्र देव बर्मन

34. श्री कृष्णराव नारायण धुलप

35. श्री कांची कल्याणसुन्दरम

×36. श्री वी0 पी0 नागराजमूर्ति

37. श्री सैयद निजामुद्दीन

38. श्री डी0 वाई पंवार

39. श्री एम0 सी0 केशवराव

40. श्री वीरेन्द्र कुमार सखलेचा

41. श्री द्विजेन्द्र लाल सेनगुप्त

42. श्री एम0 पी0 शुक्ल

43. श्री अवधेश्वर प्रसाद सिंह

44. श्री डी0 पी0 सिंह

45. श्री सवाई सिंह सिसोदिया

** श्री नीतिराज सिंह चौधरी द्वारा त्यागपत्र देने पर उनके स्थान पर 19.12.74 से नियुक्त किए हुए ।

= श्री बिपिनपाल दास द्वारा त्यागपत्र देने पर उनके स्थान पर 11.12.74 से नियुक्त हुए ।

%श्री देवेन्द्र नाथ महाता के निधन पर उनके स्थान पर 20.3.75 से नियुक्त हुए ।

× श्री नवल किशोर के निधन पर उनके स्थान पर 14.5.75 से नियुक्त हुए ।

विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय (विधायी विभाग)
का प्रतिनिधि

श्री एस0 के0 मैत्रा — संयुक्त सचिव और विधायी परामर्शदाता ।

सचिवालय

1. श्री पी0 के0 पटनायक, अपर सचिव ।
2. श्री वाई0 सहाय, मुख्य विधायी समिति अधिकारी ।

संयुक्त समिति का प्रतिवेदन

मैं इस संयुक्त समिति का सभापति, जिसे सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 और परिसीमा अधिनियम, 1963 में और संशोधन करने संबंधी विधेयक सौंपा गया था, समिति की ओर से प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के लिये उसके द्वारा प्राधिकृत किये जाने पर, समिति का प्रतिवेदन, समिति द्वारा संशोधित रूप में विधेयक सहित जो उसके साथ संलग्न है, प्रस्तुत करता हूं ।

2. यह विधेयक 8 अप्रैल, 1974 को लोक-सभा में पुरः स्थापित किया गया था । विधेयक को दोनों सदनों की संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव 2 मई, 1974 को विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय में तत्कालीन राज्य-मंत्री, श्री नीतिराज सिंह चौधरी द्वारा लोकसभा में पेश किया गया था और स्वीकृत हो गया था (परिशिष्ट - एक)

3. राज्य-सभा ने 14 मई, 1974 को उपर्युक्त प्रस्ताव पर अपनी सहमति प्रकट की (परिशिष्ट - 2)

4. राज्य सभा से प्राप्त संदेश 15 मई, 1974 को लोक-सभा समाचार भाग 2 में प्रकाशित किया गया ।

5. समिति की कुल मिलाकर 51 बैठकें हुईं ।

6. समिति की पहली बैठक अपना कार्यक्रम तैयार करने के लिये 12 जून, 1974 को हुई । समिति ने निर्णय किया कि उच्चतम न्यायालय/उच्च न्यायालयों के पंजीकारों (रजिस्ट्रार्स), बार कौंसिल आफ इंडिया/राज्य बार कौंसिलों, उच्चतम न्यायालय बार एसोसियेशन/उच्च न्यायालय बार एसोसियेशनों, अन्य एसोसियेशनों तथा संगठनों और विधेयक की विषय-वस्तु में रुचि रखने वाले अन्य

दिनांक 8 अप्रैल, 1974 के भारत के असाधारण राजपत्र भाग दो, खंड-दो, में प्रकाशित ।

सभी व्यक्तियों से लिखित ज्ञापन आमंत्रित किये जायें । समिति ने यह भी निर्णय किया कि इस बारे में एक प्रेस विज्ञप्ति जारी की जाये जिसमें ज्ञापन प्राप्त करने की अंतिम तारीख 30 जून, 1974 निर्धारित की गई हो, समिति ने यह भी निर्णय किया कि सभी राज्य सरकारों/संघ राज्य-क्षेत्रों के मुख्य सचिवों से कहा जाये कि वे प्रेस विज्ञप्ति की विषय-वस्तु की ओर राज्य और जिला दोनों स्तरों की विभिन्न बार काउंसिलों और बार एसोसियेशनों का ध्यान दिलायें ।

समिति ने विधेयक के उपबंधों पर मौखिक साक्ष्य लेने का भी निर्णय किया ।

7. 3 जुलाई, 1974 को हुई अपनी दूसरी बैठक में समिति ने निर्णय किया कि समिति को ज्ञापन प्रस्तुत करने की तारीख 31 जुलाई, 1974 तक बढ़ा दी जाये और समिति ने लोक-सभा सचिवालय को इस बारे में एक प्रेस विज्ञप्ति जारी करने के लिये प्राधिकृत कर दिया । तदनुसार 4 जुलाई, 1974 को इस बारे में एक प्रेस विज्ञप्ति जारी कर दी गई ।

8. समिति को विधेयक के संबंध में विभिन्न एसोसियेशनों, संगठनों आदि से 77 ज्ञापन प्राप्त हुए । (परिशिष्ट - तीन)

9. 4 जुलाई, 1974 को हुई अपनी तीसरी बैठक में समिति ने निर्णय किया कि विधेयक के उपबंधों के संबंध में एक प्रश्नावली तैयार करने के प्रयोजन हेतु प्रश्नों के रूप में अपनी टिप्पणियां/सुझाव लोकसभा सचिवालय को भेजें । समिति ने 30 अगस्त, 1974 को हुई अपनी बैठक में विधेयक के उपबंधों से संबंधित प्रश्नावली (परिशिष्ट - चार) का अनुमोदन कर दिया ।

समिति को 35 एसोसियेशनों, संगठनों, व्यक्तियों आदि से प्रश्नावली के उत्तर प्राप्त हुये (देखिये परिशिष्ट - पांच में दी गई सूची) ।

10. 2 अगस्त, 1974 को हुई अपनी बैठक में समिति ने निर्णय किया कि नई दिल्ली में होने वाली बैठकों में विभिन्न एसोसियेशनों, संगठनों आदि के प्रतिनिधियों का साक्ष्य पूरी समिति द्वारा लिया जायेगा और साक्ष्य के प्रयोजन हेतु दिल्ली से बाहर की जाने वाली बैठकों के लिये समिति स्वयं को तीन उप-समितियों में विभाजित कर लेगी। उप-समितियों ने निम्नलिखित ब्यौरे के अनुसार विभिन्न स्थानों पर अपनी बैठकें कीं ——

(एक) उप-समिति 'क' की मद्रास में 16 से 18 सितम्बर तक और बंगलौर में 19 से 21 सितम्बर, 1974 तक बैठकें हुईं।

(दो) उप-समिति 'ख' की अहमदाबाद में 7 से 9 अक्तूबर तक और बंबई में 10 से 12 अक्तूबर, 1974 तक बैठकें हुईं।

(तीन) उप-समिति 'ग' की कलकत्ता में 30 और 31 दिसम्बर, 1974 एवं 1 जनवरी, 1975 को तथा भुवनेश्वर में 2 और 3 जनवरी, 1975 को बैठकें हुईं।

22 नवम्बर, 1974 को हुई अपनी बैठक में समिति ने निर्णय किया कि मौखिक साक्ष्य लेने हेतु दिल्ली से बाहर की जाने वाली बैठकों के लिये समिति स्वयं को तीन उप-समितियों के स्थान पर दो उप-समितियों में विभाजित करे। निम्नलिखित दो उप-समितियों ने नीचे दिये गये ब्यौरे के अनुसार विभिन्न स्थानों पर अपनी बैठकें कीं :-

(एक) उप-समिति-1 की गौहाटी में 9, 10 और 13 जनवरी, 1975 को और शिलांग में 11 जनवरी, 1975 को बैठकें हुईं।

(दो) उप-समिति-2 की लखनऊ में 17 और 18 जनवरी, 1975 को तथा चण्डीगढ़ में 29 और 30 मई, 1975 को बैठकें हुईं।

11. समिति ने नई दिल्ली में भी 31 अक्तूबर, 1 और 2 नवम्बर, और 1974 को 27 से 29 जनवरी तक, 10 और 11 फरवरी को और 16 से 18 जून, 1975 तक हुई अपनी बैठकों में विभिन्न एसोसियेशनों, संगठनों के प्रतिनिधियों तथा अन्य

व्यक्तियों का मौखिक साक्ष्य लिया ।

समिति/उप-समितियों के समक्ष जिन विभिन्न एसोसियेशनों, संगठनों, व्यक्तियों, आदि ने साक्ष्य दिया उनकी एक सूची परिशिष्ट- छः में दी गई है ।

12. समिति ने विधेयक के उपबंधों के संबंध में समिति को प्रस्तुत किये गये ज्ञापनों में तथा समिति तथा उप-समितियों के समक्ष दिये गये साक्ष्य के दौरान उठाये गये विभिन्न प्रश्नों पर । जुलाई से 21 नवम्बर तक की अवधि के तथा 16 दिसम्बर, 1975 को दौरान/हुई अपनी बैठकों में सामान्य चर्चा की ।

13. 2 जुलाई, 1975 को हुई अपनी बैठक में समिति ने निर्णय किया कि (एक) समिति के समक्ष दिया गया साक्ष्य दोनों सदनों के सभापटलों पर रखा जाये ; और (दो) विभिन्न संस्थाओं, संगठनों आदि से समिति को प्राप्त हुये ज्ञापनों की दो-दो प्रतियां, समिति का प्रतिवेदन प्रस्तुत हो जाने के बाद, संसद् सदस्यों के अवलोकनार्थ संसद् ग्रंथालय में रख दी जायें ।

14. समिति का प्रतिवेदन 20 दिसम्बर, 1974 तक प्रस्तुत किया जाना था । समिति को इसके लिये समय बढ़ाने की मंजूरी तीन बार दी गई । पहली बार 11 दिसम्बर, 1974 को 25 जुलाई, 1975 तक के लिये दूसरी बार 25 जुलाई, 1975 को 6 फरवरी, 1976 तक के लिये तथा तीसरी बार 28 जनवरी, 1976 को बजट सत्र, 1976 के अंतिम दिन तक समय बढ़ाने की मंजूरी दी गई ।

15. समिति ने 2 से 5 दिसम्बर तक, 17 और 26 दिसम्बर, 1975 तथा 16 से 18 फरवरी तक तथा 26 और 27 फरवरी को तथा । और 2 मार्च, 1976 को हुई अपनी बैठकों में विधेयक पर खंड-वार विचार किया ।

16. समिति ने 25 मार्च, 1976 को हुई अपनी बैठक में प्रतिवेदन पर विचार किया और उसे स्वीकार किया ।

17. विधेयक में प्रस्तावित मुख्य परिवर्तनों के संबंध में समिति के विचार अगले पैराग्राफों में दिये गये हैं ।

18. खंड 2 — (एक) समिति महसूस करती है :

आंध्रप्रदेश राज्य के अनुसूचित क्षेत्र को भी, जिसमें पूर्वी गोदावरी, पश्चिमी गोदावरी तथा विशाखापत्तनम् एजेंसियां हैं जिन्हें संहिता के प्रवर्त्तन-क्षेत्र से बाहर रखा गया है, संहिता के क्षेत्र के अधीन लाया जाये । तदनुसार खंड ख का, प्रस्तावित उप-धारा (3) के परन्तुक सहित, लोप कर दिया गया है ।

(दो) समिति ने नोट किया है कि संहिता का आसाम के जन जातीय क्षेत्रों पर विस्तार नहीं है । किन्तु प्रस्तावित उप-धारा(तीन) के खंड (ग) में पद ''जनजाति क्षेत्रों'' को इस प्रकार परिभाषित किया गया है कि उनमें वे क्षे. शामिल नहीं किये गये हैं जो शिलांग की नगर पालिका की सीमाओं के अन्दर आते हैं । साक्ष्य के दौरान समिति को बताया गया कि शिलांग की नगरपालिका के केवल तीन वार्ड जनजाति क्षेत्र के अंतर्गत नहीं आते और शेष वार्ड जनजाति क्षेत्रों के अंतर्गत आते हैं । समिति महसूस करती है कि इन परिस्थितियों में और जो "शिलांग की नगरपालिका की सीमाओं के अन्दर के क्षेत्रों से भिन्न हैं" शब्दों का लोप कर दिया जाना चाहिये, जिससे कि शिलांग की नगरपालिका के अन्तर्गत आने वाले विभिन्न क्षेत्रों के बीच कोई अन्तर न रहे ।

(तीन) समिति ने नोट किया है कि इस संहिता के लागू होने के संबंध में लक्षद्वीप क्षेत्र में प्रवृत्त विनियमों/अध्यधीन रहते हुये संहिता का लक्षद्वीप

संघ राज्य क्षेत्र पर भी विस्तार किया गया है । समिति महसूस करती है कि यही उपबंध, अनुसूचित क्षेत्रों पर भी, जिनमें पूर्वी गोदावरी, पश्चिमी गोदावरी तथा विशाखापतनम् एजेंसियां है और जिन पर संहिता का विस्तार किया जा रहा है, लागू किया जाये तदनुसार, प्रस्तावित उपधारा (3) के खंड (घ) को एक नई उप-धारा (4) द्वारा प्रति स्थापित किया गया है ।

19. खंड 3: (क) समिति ने नोट किया है कि संहिता में दी गयी ''डिक्री'' शब्द की परिभाषा के अनुसार धारा 47 के अंतर्गत आने वाले किसी प्रश्न के अवधारण का अर्थ डिक्री होता है और इसलिये ऐसे अवधारण के संबंध में पहली अपील तथा दूसरी अपील की जा सकेगी । समिति का विचार है कि संहिता का यह उपबंध डिक्रियों के निष्पादन में होने वाले विलंब का मुख्य कारण है : इसलिये समिति महसूस करती है कि ''डिक्री'' शब्द की परिभाषा को इस प्रकार संशोधित किया जाना चाहिये जिससे कि धारा 47 के अंतर्गत आने वाले प्रश्न के अवधारण का अर्थ डिक्री न माना जाये ।

(दो) समिति का यह भी विचार है कि प्रारंभिक डिक्री और अंतिम डिक्री के बीच अंतर को दूर करने के लिये ''डिक्री'' शब्द की परिभाषा में प्रस्तावित संशोधन वांछनीय नहीं है । इसलिये समिति का विचार है कि इस परिभाषा को यथावत् बनाये रखा जाये : विधेयक का खंड 3 तदनुसार संशोधित किया गया है :

20. खंड 4 - समिति महसूस करती है कि प्रस्तावित नई धारा 11 क में प्रयुक्त शब्दों ''जहां तक हो सके'' से पूर्व-न्याय के सिद्धांतों, जो निष्पादन कार्यवाही में लागू होंगे, की व्यापकता के संबंध में संदेह उत्पन्न हो सकता है : समिति को बताया गया कि प्रिवी काउंसिल तथा उच्चतम न्यायालय के पहले ही निर्णय दे चुके हैं कि आनुषंगिक पूर्व-न्याय संबंधी सिद्धांत निष्पादन कार्यवाहियों में लागू होते हैं । अतः समिति महसूस करती है कि नई धारा 11 के को अंतः स्थापित करने के बजाय धारा 11 में इस प्रकार संशोधन किया जाना चाहिये जिससे कि यह सुनिश्चित किया जा सके कि पूर्व- न्याय संबंधी सिद्धांत निष्पादन कार्यवाहियों पर पूर्ण व्यापक रूप से लागू हो सकेंगे इसलिये संहिता

की धारा ।। में एक नया स्पष्टीकरण अंतः- स्थापित किया गया है :

समिति यह भी महसूस करती है कि नई धारा ।। क खंड (ख), जिससे वाद से भिन्न प्रत्येक सिविल कार्यवाही पर पूर्व-न्याय संबंधी सिद्धांतों का विस्तार करने का प्रस्ताव है, बहुत ही व्यापक है और इसका प्रभाव यह हो सकता है कि पूर्व-न्याय संबंधी सिद्धांतों का ऐसी सभी कार्यवाहियों पर,

जो कि न्यायिक कार्यवाहियां नहीं हैं, विस्तार हो जाये । संहिता की धारा ।। में समिति द्वारा प्रस्तावित संशोधन को देखते हुये और उन कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुये जो नई धारा ।। क के खंड (ख) को स्वीकार करने पर उत्पन्न हो सकती है ; समिति ने धारा ।। का लोप करने का निर्णय किया ।

समिति को यह बताया गया था कि विधि आयोग ने यह सुनिश्चित करने के लिए कुछ सिफारिशें की हैं कि पूर्व-न्याय के सिद्धांत उन वादों पर भी लागू हों जो सीमित अधिकारिता वाले न्यायालयों द्वारा विचारणीय हैं। वादों पर गहराई से विचार करने के पश्चात् समिति का यह विचार है कि सीमित अधिकारिता वाले न्यायालयों के निर्णय जहाँ तक ये निर्णय सीमित अधिकारिता वाले न्यायालयों के निर्णय, जहाँ तक ये निर्णय सीमित अधिकारिता वाले न्यायालयों की सक्षमता के भीतर हों, किसी पश्चात्वर्ती वाद में पूर्व-न्याय के रूप में लागू होने चाहिए, यद्यपि यह हो सकता है कि सीमित अधिकारिता वाले न्यायालय को ऐसे पश्चात्वर्ती वाद या ऐसे किसी वाद पर विचार करने का अधिकार न हो जिसमें वाद में ऐसा प्रश्न उठाया गया हो। तदनुसार संहिता की धारा 11 में एक नया स्पष्टीकरण अंतः स्थापित कर दिया गया है। है कि

21. खंड 7 .-(एक) समिति की राय है कि किसी निगम को, ऐसे किसी स्थान पर जहाँ उसका कोई अधीनस्थ कार्यालय हो उत्पन्न होने वाले किसी वाद हेतुक के संबंध में वाद चलाने के प्रयोजन के लिए, ऐसे स्थान पर भी कारबार चलाने वाला समझा जाना चाहिए। अतः समिति यह अनुभव करती है कि संहिता के विद्यमान स्पष्टीकरण 2 में की गयी व्यवस्था, इस खंड के प्रस्तावित स्पष्टीकरण 1 में की गयी व्यवस्था, इस खंड के प्रस्तावित स्पष्टीकरण 1 में की गयी व्यवस्था की तुलना में कहीं अधिक उपयुक्त है। अतः संहिता में इस समय विद्यमान स्पष्टीकरण 2 को इस खंड द्वारा प्रस्थापित किये जाने वाले प्रस्तावित स्पष्टीकरण के स्थान पर बनाये रखा गया है।

(दो) समिति ने नोट किया है कि विधेयक में अतः स्थापित किये जाने के लिए प्रस्तावित स्पष्टीकरण 2 में किया गया उपबंध इस धारा में किये गये उस आधारभूत उपबंध के विपरीत है जिसमें यह व्यवस्था की गयी है कि वाद उस स्थान पर चलाया जाना चाहिए जहाँ प्रतिवादी (न कि वादी)

स्वेच्छा से निवास करता है या कारबार चलाता है या व्यक्तिगत रूप से लाभ के लिए काम करता है । इसके अलावा, समिति का यह विचार है कि इस तरह के उपबंध से गरीब एवं धनहीन श्रेणियों को बहुत अधिक कठिनाइयां होंगी । अतः प्रस्तावित स्पष्टीकरण 2 का जिसका इस खंड द्वारा अतः स्थापित किये जाने के लिए प्रस्ताव किया गया है, लोप कर दिया गया है ।

22. खंड 9. इस खंड में किया गया संशोधन प्रासंगिक है ।

23. मूल खंड 11 - समिति ने नोट किया है कि प्रस्तावित नयी धारा 24 के द्वारा किसी वाद को सीमित अधिकारिता वाले न्यायालय से उपयुक्त अधिकारिता वाले न्यायालय को अंतरित करने की व्यवस्था की गयी है जिससे कि उस वाद में किये गये निर्णय को पूर्व-न्याय के रूप में लागू किया जा सके । समिति का विचार है कि संहिता की धारा 11 के संबंध में समिति द्वारा प्रस्तावित संशोधन को देखते हुए इस खंड में अंतर्विष्ट उपबंध आवश्यक नहीं हैं । अतः इस खंड का लोप कर दिया गया है ।

24. खंड 12 (मूल खंड 13) जब कोई समन राज्य से बाहर के किसी न्यायालय को तामील के लिए भेजा जाता है, तो उस समन की तामील का रिकार्ड सामान्यतः उस राज्य के न्यायालय की भाषा में रखा जाता है । यदि उस न्यायालय की भाषा जिसके द्वारा ऐसा समन तामील कराया गया है, उस न्यायालय की भी भाषा न हो जिसके द्वारा समन जारी किया गया हो तो ऐसी दशा में वाद पर विचार करने वाले न्यायालय के लिए यह निर्णय करना कठिन हो सकता है कि समन समुचित रूप से जारी किये गये हैं या नहीं । समिति का विचार है कि ऐसी स्थिति में उस न्यायालय के लिये जो कि समन जारी करने वाले न्यायालय को समन वापस लौटाये यह अनिवार्य बना दिया जाना चाहिये कि वह समन तामील किये जाने की कार्यवाही के अभिलेख का, जहां ऐसे अभिलेख की भाषा अंग्रेजी या हिन्दी से भिन्न हो, हिन्दी या अंग्रेजी

28. खंड 21 /मूल खंड 22/ -- समिति का विचार है कि संहिता की धारा 51 के परंतुक को खंड (क) (एक) तथा खंड (ख) में 'बिना विधिपूर्ण कारण के' शब्दों को अतः स्थापित करने से केवल डिक्रीधारी पर भार बढ़ेगा तथा उस पर आने वाले खर्चों में कमी न होने के साथ साथ विलंब भी अधिक होगा । समिति की राय में प्रस्तावित संशोधन वांछनीय नहीं है ।

तथापि समिति का विचार है कि गिरफ्तारी तथा कारागार में निरोध द्वारा डिक्री के निष्पादन का उपबंध जैसा कि धारा 51 के खंड (ग) में उपबंधित किया गया है, संहिता की धारा 58 के उपबंधों से मेल खाता हुआ होना चाहिए । खंड में तदनुसार संशोधन कर दिया गया है ।

29. खंड 22 /मूल खंड 23/ -- संहिता की धारा 58, अपने वर्तमान रूप में, न्यायालय को इस संबंध में कोई विवेकाधिकार नहीं देती कि धनराशि के भुगतान संबंधी डिक्री के निष्पादन स्वरूप किसी व्यक्ति को कितने समय तक सिविल कारागार में निरुद्ध रखा जाये । अतः समिति का विचार है कि न्यायालय को यह विवेकाधिकार प्रदत्त किया जाना चाहिये ।

डिक्री पचास रुपये से अधिक होने की स्थिति में इस धारा में छः सप्ताह तक सिविल कारागार में निरुद्ध करने अथवा किसी अन्य मामले में छः सप्ताह तक निरुद्ध करने की भी व्यवस्था है । समिति का विचार है कि धन की यह सीमा बढ़ाकर एक हजार रुपये कर दी जानी चाहिये । इसके अतिरिक्त जहाँ डिक्री एक हजार रुपये से अधिक की हो, वहाँ कारावास की अधिकतम अवधि कम करके तीन महीने की जानी चाहिये और अन्य किसी मामले में छः सप्ताह होनी चाहिये ।

समिति का यह विचार भी है कि जहाँ डिक्री की राशि पाँच सौ रुपये से अधिक की न हो, वहाँ किसी व्यक्ति को सिविल कारागार में निरुद्ध नहीं किया जाना चाहिये, जिससे कि ऋणी लोगों को सिविल कारागार में निरुद्ध कराकर परेशान न किया जाये ।

खंड में तदनुसार संशोधन कर दिया गया है ।

30. खंड 23 /_मूल खंड 24_7:— (एक) समिति ने यह देखा है कि महंगाई भत्ता वेतन में मिला दिये जाने के कारण किसी डिक्री के निष्पादन स्वरूप वेतन के कुर्की योग्य भाग में भी वृद्धि हो गई है । वेतन(जिसका काफी बड़ा भाग/इससे पहले कुर्की योग्य नहीं था) के कुर्की योग्य भाग में वृद्धि के कारण होने वाली संभावित कठिनाई को देखते हुए, समिति का विचार है कि किसी डिक्री के निष्पादन स्वरूप किसी वेतन की कुर्की से मुक्त राशि की सीमा बढ़ाकर चार सौ रुपए तथा शेष बचने वाले वेतन का दो-तिहाई भाग कर दिया जाना चाहिए । उप-खंड(एक) (ग) (एक) में तदनुसार संशोधन कर दिया गया है ।

(दो) उप-खंड (एक) (ग) (दो) के परंतुक में किया गया संशोधन स्पष्टीकरण के लिए है ।

(तीन) समिति ने नोट किया है कि जिन निधियों पर लोक भविष्य निधि अधिनियम 1968 लागू होता है, उनमें जमा सभी जमाराशियाँ इस संहिता के उपबंधों के अंतर्गत कुर्की से मुक्त हैं । तथापि समिति का यह विचार है कि अधिक-निरापद यह होगा कि संहिता में ही यह व्यवस्था कर दी जाये कि उक्त अधिनियम के अंतर्गत जमा राशियाँ कुर्की से मुक्त होंगी, जिससे कि उस अधिनियम के उपबंधों को नजरंदाज़ न किया जाये ।

तदनुसार खंड के उप-खंड (एक)(ड.) में एक नया खंड (ट क) जोड़ दिया गया है ।

(चार) समिति का विचार है कि ''मज़दूर'' की परिभाषा में अकुशल श्रमिक भी सम्मिलित किया जाना चाहिये । उपखंड(एक) (क) के प्रस्तावित स्पष्टीकरण में तदनुसार संशोधन कर लिया गया है ।

(पांच) समिति का यह विचार है कि इस संहिता के उपबंधों के अंतर्गत कुर्की से मुक्ति की अनुमति प्रदान करने के प्रयोजनार्थ कृषक का अर्थ एक ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जो खेती स्वयं अथवा अपने मज़दूरों अथवा अपने परिवार के किसी सदस्य अथवा नकद या जिन्सों पर मज़दूरी पर कार्य करने वाले नौकरों अथवा श्रमिकों से कराता हो और जो अपने जीवन-निर्वाह के लिए मुख्यतया कृषि भूमि की आय पर निर्भर करता हो ।

इस खंड के उप-खंड( ) (एक) के प्रस्तावित स्पष्टीकरण पांच में, तदनुसार संशोधन कर दिया गया है । एक नया स्पष्टीकरण छः भी यह स्पष्ट करने के लिए अतः स्थापित कर दिया गया है कि स्पष्टीकरण पांच के प्रयोजनार्थ किस कृषक को खुद खेती करने वाला कृषक समझा जायेगा ।

31. खंड 26 /मूल खंड 27/:- समिति का विचार है न्यायालय को तकनीकी तथा विशेषज्ञ जांच पड़ताल के लिए विशेषज्ञों तथा तकनीकी व्यक्तियों को लगाने का अधिकार भी दिया जाना चाहिए । खंड में तदनुसार संशोधन कर दिया गया है ।

32. खंड 27 /मूल खंड 28/ :— समिति का यह विचार है कि संहिता की धारा 80 का लोप करना, जैसा कि विधेयक में प्रस्ताव किया गया है, जनहित में नहीं होगा । संभव है कि समाज की भलाई के लिए सरकार को कोई कदम उठाने से रोकने के लिए यह लोगों को सरकार के विरुद्ध मुकदमें दायर करने के लिए प्रेरित करे और यह विकासात्मक कार्यों की गति में भी बाधा डाल सकता है । अतः समिति का यह विचार है कि संहिता की धारा 80 में अंतर्विष्ट उपबंधों को बाद में बताये गये संभेदों के अध्यधीन बनाये रखना चाहिये ।

तथापि समिति का विचार है कि संहिता की धारा 80 के उपबंधों उदार बनाये जाने की आवश्यकता है, जिससे कि कोई व्यक्ति अविलंब अथवा तत्काल राहत प्राप्त करने के अवसर से, जहां ऐसी राहत अनिवार्य हो, वंचित न रह जाये । इन परिस्थितियों में समिति अनुभव करती है कि संहिता की धारा 80 में मुकदमा चलाने की व्यवस्था की जानी चाहिए ताकि सरकार से अथवा किसी लोक आफिसर से, ऐसे कार्य के संबंध में जो ऐसे लोक आफिसर द्वारा अपने पद की हैसियत से किया गया होने का दावा किया गया हो, अविलंब अथवा तत्काल राहत प्राप्त की जा सके और धारा 80 के अधीन कोई नोटिस न देना पड़े, परंतु ऐसे मामले में मुकदमें में मांगी गई राहत के संबंध में सरकार अथवा लोक आफिसर को, जो भी स्थिति हो, कारण बताने का उचित अवसर देने के पश्चात् राहत देनेके सिवाय न्यायालय द्वारा कोई और राहत नहीं दी जानी चाहिये ।

समिति का यह विचार भी है कि यह देखते हुए कि बहुत से व्यक्तियों के उचित दावे तकनीकी आधारों पर रद्द न हो । जायें, केवल किसी तकनीकी दोष अथवा नोटिस में गलती के कारण अथवा रदी वादी का नाम, वितरण और निवास इस प्रकार दिया गया हो कि उपयुक्त प्राधिकारी अथवा लोक आफिसर नोटिसों की तामील करने वाले व्यक्ति को पहचान सके , और नोटिस उपयुक्त प्राधिकारी के कार्यालय में दे दिया अथवा छोड़ दिया गया हो, तथा वाद हेतुक और मांगी गयी राहत नोटिस में स्पष्ट रूप से बताई गई हो तो सरकार अथवा किसी लोक आफिसर के विरुद्ध मुकदमा खारिज नहीं किया जाना चाहिए । खंड में तदनुसार संशोधन कर दिया गया है ।

33. खंड 28 तथा खंड 29 — संहिता की धारा 82 में, जैसी कि इस समय है, यह उपबंध है कि जब सरकार अथवा किसी लोक आफिसर के विरुद्ध कोई डिक्री पास की गई हो, तो डिक्री में यथा विनिर्दिष्ट किया जायगा जिसमें इस बात की तुष्टि की जायगी कि यदि यथाविनिर्दिष्ट समय में अथवा जहां समय विनिर्दिष्ट न किया गया हो वहां डिक्री की तारीख से तीन मास के अंदर डिक्री की तुष्टि न की जाए तो न्यायालय द्वारा राज्य सरकार को मुकदमे की रिपोर्ट दी जानी होगी तथा ऐसी किसी डिक्री को निष्पादित करने का आदेश तभी जारी किया जायगा, यदि इस डिक्री की तुष्टि उक्त रिपोर्ट की तारीख से संगणित तीन मास की अवधि में नहीं कर दी जाती । विधेयक में सरकार को रिपोर्ट देने की आवश्यकता समाप्त कर दी गई है । परंतु यह प्रस्ताव किया गया था कि न्यायालय को उस अवधि का विस्तार करने की शक्ति प्रदान की जानी चाहिए जिस के दौरान डिक्री निष्पादित नहीं की जायगी । समिति के विचार में न्यायालय को उस समय का विस्तार करने की शक्ति नहीं प्रदान की जानी चाहिए, जिसके दौरान डिक्री निष्पादित नहीं की जायगी ताकि डिक्रीधारी अनिश्चित काल तक अपनी डिक्री के परिणाम से वंचित न रहे । उपधारा (2) में प्रस्तावित संशोधन में उपान्तरण कर दिया गया है, तथा उप-धारा (4) का, जैसी कि मूलतः स्थापित करने का प्रस्ताव था, लोप कर दिया गया है ।

समिति का यह भी विचार है कि सरकारी अधिवक्ता को, जिससे आशा की जाती है कि उसे डिक्री की जानकारी होनी चाहिए, डिक्री की सूचना देना बिल्कुल आवश्यक नहीं है । तदनुसार, उप-धारा (5) का, जैसी की अंतः स्थापित करने का प्रस्ताव था, लोप कर दिया गया है ।

34. खण्ड 30 (मूल खण्ड 31) - इस खण्ड में किया गया संशोधन प्रासंगिक संबंधी है ।

35. खण्ड 33 (मूल खण्ड 34) - समिति के विचार में आदेश नियम 22 में किए गए संशोधन को ध्यान में रखते हुए संहिता की धारा 96 की उप-धारा (1) में अन्तःस्थापित किया जाने वाला प्रस्तावित स्पष्टीकरण आवश्यक नहीं है । अतः खण्ड के उप-खण्ड (1) का लोप कर दिया गया है ।

36. मूल खण्ड 35 - समिति के विचार में विधेयक के खण्ड 3 में प्रस्तावित संशोधन को ध्यान में रखते हुए संहिता की धारा 97 में इस खण्ड में यथा प्रस्तावित संशोधन की आवश्यकता नहीं है । तदनुसार, इस खण्ड का लोप कर दिया गया है ।

37. खण्ड 37 (मूल खण्ड 39) - विधेयक में संहिता की धारा 100 के एक नयी धारा से प्रतिस्थापित करने का प्रस्ताव है ताकि द्वितीय अपीलों का विस्तार निर्दिष्ट किया जा सके ।

समिति ने इस प्रश्न पर सावधानीपूर्वक विचार किया है कि क्या संहिता की धारा 100 को इसके विद्यमान रूप में बनाए रखा जाए अथवा इसमें किसी रूपान्तरण की आवश्यकता है । विधि आयोग द्वारा की गई टिप्पणियों तथा समिति के समक्ष दिए गए साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए, समिति का विचार है कि द्वितीय अपीलों का विस्तार निर्दिष्ट किया जाना चाहिए ताकि मुकदमे लम्बे समय तक न चलें । अतः समिति का विचार है कि विधेयक में प्रस्तावित संशोधन को कतिपय उपान्तरणों के साथ बनाए रखा जाना चाहिए । विधेयक में सम्मिलित किए गए संशोधन के अनुसार न्यायालय को यह प्रमाणित करना होगा कि मुकदमे में विधि का सारवान् प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है, समिति का विचार है कि यदि न्यायालय को विधि का सारवान प्रश्न बनाना पड़ता है तो यही पर्याप्त होना चाहिए । समिति का यह विचार भी है कि न्यायालय से विधि के किसी प्रश्न के बनाने के कारणों को बताने की अपेक्षा नहीं की जानी चाहिए ।

समिति का यह विचार भी है कि विधि के किसी अन्य सारवान प्रश्न पर अपील सुनने का न्यायालय का विवेकाधिकार वापिस नहीं लिया जाना चाहिए ताकि पक्षों के बीच न्याय किया जा सके । तदनुसार, खण्ड उपान्तरित कर दिया गया है ।

38. खण्ड 40 (मूल खण्ड 42) - समिति का विचार है कि द्वितीय अपील विधि के सारवान प्रश्न तक सीमित होगी, "तथ्य का" शब्द आवश्यक नहीं है । तदनुसार, खण्ड में संशोधन कर दिया गया है ।

39. खण्ड 43 (मूल खण्ड 45) - विधेयक के खण्ड 45 द्वारा संहिता की धारा 115 का लोप करने का प्रस्ताव किया गया था । समिति ने इस प्रश्न पर सावधानीपूर्वक विचार किया कि क्या धारा 115 को बनाये रखने की आवश्यकता भी है । विधि आयोग ने विचार व्यक्त किया है कि संविधान के अनुच्छेद 227 को ध्यान में रखते हुए संहिता की धारा 115 अब आवश्यक नहीं है । तथापि, समिति का विचार है कि संविधान के अनुच्छेद 227 में उपबन्धित उपचार से अधिक विलम्ब और अधिक व्यय होने की संभावना है । दूसरी ओर धारा 115 में उपबन्धित उपचार सस्ता और आसान है । अतः समिति का विचार है कि धारा 115 का, जिससे एक उपयोगी उद्देश्य पूरा होता है, विशेष: इस आधार पर पूर्ण लोप नहीं किया जाना चाहिए कि संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत एक वैकल्पिक उपचार उपलब्ध है । तथापि, समिति का विचार है कि अन्तर्वर्ती आदेशों के विरुद्ध पुनरीक्षण के लिए आवेदनों के विस्तार पर धारा 115 में अन्तर्विष्ट निर्बन्धों के अतिरिक्त एक समग्र निर्बन्ध लगाया जाना चाहिए ।

विधि आयोग द्वारा अपने चौवनवें और सत्ताइसवें प्रतिवेदनों में की गई सिफारिशों को देखते हुए, समिति सिफारिश करती है कि संहिता की धारा 115 को इस उपान्तरण के साथ बनाए रखा जाना चाहिए कि किसी अन्तर्वर्ती आदेश के विरुद्ध कोई संशोधन संबंधी आवेदन तब तक नहीं किया जा सकेगा जब तक कि निम्नलिखित कोई एक शर्त पूरी न होती हो, अर्थात् :-

(एक) कि यदि आदेश आवेदक के पक्ष में किया गया हो, तो इससे वाद अथवा अन्य कार्यवाही का अंतिम रूप से निपटारा हो जाएगा, अथवा

(दो) कि यदि आदेश ज्यों का त्यों बना रहने दिया जाये तो इससे न्याय की विफलता अथवा अपूर्ण हानि होने की संभावना है ।

समिति महसूस करती है कि शब्द 'विनिश्चित मामले' की परिभाषा की जानी चाहिए जिससे यह सन्देह, कि क्या धारा 115 किसी अन्तर्वर्ती आदेश पर लागू होती है या नहीं, दूर किया जा सके। समिति ने धारा 115 के साथ तदनुसार, एक परन्तुक और एक स्पष्टीकरण जोड़ दिया है।

40. मूल खण्ड 47 - समिति का यह विचार है कि संहिता की धारा 132 बनाए रखी जानी चाहिए, क्योंकि इस धारा का लोप सामाजिक रीति के प्रतिकूल होगा और इसके न रहने से वर्तमान मुकदमेबाज निर्दोष और अनभिज्ञ महिलाओं को भी जो कि सार्वजनिक स्थानों पर नहीं जाती हैं, व्यक्तिगत रूप से न्यायालय में पेश होने के लिए बाध्य कर सकेंगे। खण्ड का, तदनुसार, लोप कर दिया गया है।

41. खण्ड 45 (मूल खण्ड 48) - समिति को बताया गया था कि संसद सदस्यों की संहिता की धारा 135 क में विशेष उल्लेख न होने के कारण देश के कुछ भागों में उक्त धारा के उपबन्धों का सही सही अर्थ नहीं लगाया जाता है तथा संसद सदस्यों को उनके अन्तर्गत प्राप्त छूट प्राप्त नहीं होती है। समिति का विचार है कि किसी प्रकार की अस्पष्टता को दूर करने तथा यह सुनिश्चित करने के लिए कि देश में सभी विधायी निकायों के सदस्यों को अपने कृत्यों को निष्पादित करने से रोका न जाए, संहिता के उपबन्धों में उपयुक्त संशोधन किया जाना चाहिए। धारा 135 क की उप-धारा (1) में, तदनुसार, संशोधन कर दिया गया है।

42. खण्ड 49 (मूल खण्ड 52) - इस खण्ड में किया गया संशोधन प्रारूपण संबंधी है।

43. खण्ड 50 (मूल खण्ड 53) - समिति का विचार है कि जहां प्रस्तावित नई धारा 148 क की उप-धारा (1) के अंतर्गत कोई चेतावनी जारी की गई हो, वहां ऐसी चेतावनी अनिश्चित काल तक के लिए लागू नहीं रहनी चाहिए और इसके लिए नब्बे दिन की समय-सीमा निर्धारित की जानी चाहिए। खण्ड में, तदनुसार, संशोधन कर दिया गया है।

44. खण्ड 55 (मूल खण्ड 58) - (एक) समिति ने इस प्रश्न पर विचार किया था कि क्या आदेश पांच के नियम 1 के प्रस्तावित परन्तुक को बनाए रखा जाना चाहिए।

समिति का विचार है कि चूंकि उक्त परन्तुक केवल आदेश पांच के नियम 1 के उपबन्धों को प्रभावी बनाने के लिए है, अतः इस परन्तुक का लोप करने की कोई आवश्यकता नहीं है। तथापि, समिति का विचार है कि उक्त परन्तुक में आये शब्द समुचित मामलों में अनावश्यक हैं। उक्त शब्दों का, तदनुसार, लोप कर दिया गया है।

(दो) समिति की राय है कि ऐसे प्रतिवादी को, जो अपने निवास स्थान पर नहीं मिलता है तथा जिसके एक उचित अवधि के भीतर अपने निवास स्थान पर पाये जाने की संभावना नहीं होती है और यदि सभी प्रकार का आवश्यक और उचित परिश्रम करने के बाद भी सम्मन तामील करने वाले अधिकारी का प्रतिवादी नहीं मिलता है, तो आदेश पांच के नियम 17 में उल्लिखित प्रक्रिया के अनुसार उसको सम्मन जारी किये जायें। इस खण्ड के उप खण्ड (iii) में तदनुसार संशोधन कर दिया गया है।

(तीन) समिति की यह राय है कि यह सिद्ध करने के लिए कि प्रतिवादी को विधिवत सम्मन तामील हो गये हैं तो साथ साथ तामील के लिए रजिस्ट्री रसीदी डाक द्वारा सम्मन भेजे जाने चाहिए। प्रस्तावित नए नियम 19 क के उप-नियम (1) में तदनुसार संशोधन कर दिया गया है।

(चार) समिति यह भी महसूस करती है कि तामील के लिए रजिस्ट्री द्वारा भेजे गये सम्मनों के मामले में, प्रतिवादी को दिये जाने पर यदि वह सम्मन लेने से इंकार करता है, अथवा रसीद गुम हो जाती है या गलत स्थान पर रखी जाती है या किसी अन्य कारण से सम्मन जारी करने की तारीख से तीस दिनों के भीतर न्यायालय को वापस प्राप्त नहीं हो जाती है, तो न्यायालय को यह मान लेने का प्राधिकार दिया जाना चाहिए कि प्रतिवादी को सम्मन विधिवत तामील हो गये हैं। प्रस्तावित नए नियम 19 क के उप नियम (2) में तदनुसार, संशोधन कर दिया गया है।

(पांच) समिति ने नोट किया है कि पाकिस्तान में रह रहे प्रतिवादी को सम्मन जारी करने के बारे में नियम 25 में उल्लेख किया गया है। समिति महसूस करती है कि बंगलादेश के अविर्भाव को देखते हुए, नियम में बंगला देश का नाम भी शामिल किया जाना चाहिए। इस खण्ड में, तदनुसार एक नया उप-खण्ड (iv क), जिसमें नियम 25 में आवश्यक संशोधन करने का प्रस्ताव है, अंतःस्थापित कर दिया गया है।

45. खंड 56/_मूलखंड 59_/ — (एक) समिति का विचार है कि यह सुनिश्चित करने के लिए कि किसी मुकदमे के प्रकार वाद में कभी यह न कहें कि अभिवचन में उल्लिखित गलत तारीखों, राशियों अथवा संख्याओं का कारण आकस्मिक, लेखन संबंधी अथवा टाइप की गलती है, किसी अभिवचन में तारीखें, राशियां और संख्यायें शब्दों में भी दी जायें। आदेश 6 के प्रस्तावित नये नियम 2 के उप-नियम (3) में तदनुसार संशोधन किया गया है।

(दो) समिति का विचार है कि आदेश 6 के नियम 17 का प्रस्तावित नया उप-नियम (2) जिसमें न्यायालय को उन मामलों में भी वादपत्र में संशोधन करने की अनुमति देने की शक्ति दी गई है, जिनमें संशोधन का परिणाम मुकदमे को न्यायालय की अधिकारिता से हटाकर समुचित न्यायालय में पेश करने के लिए वापस लेना हो, वांछनीय नहीं है। ऐसे उपबंध से कुछ मुकदमेबाज़ कार्यवाही को अनिश्चित काल तक खींच ले जायेंगे। वे अपने वादपत्र में एक ऐसा संशोधन कर देंगे जिस पर विचारण करने के लिए वह न्यायालय सक्षम न हो ताकि मामला दूसरे न्यायालय में चला जाये। अतः इस खंड के उप-खंड (चार) का लोप कर दिया गया है।

46. खंड 57/_मूल खंड 60_/ (एक) समिति नोट करती है कि आदेश 7 के नियम 10 में वाद-पत्र को वापस लेने की व्यवस्था है और प्रस्तावित नये नियम 10 क में एक प्रक्रिया निर्धारित की गई है जिसे वाद-पत्र वापस करने से पहले पूरा किया जाना है। समिति का विचार है कि विद्यमान नियम 10 और नये नियम 10क में अंतर्विष्ट उपबंधों के बीच एक स्पष्टता होनी चाहिए। उपर्युक्त उद्देश्य प्राप्त करने के लिए इस खंड में एक नया उप-खंड (पांच क) अंतःस्थापित किया गया है।

(दो) समिति नोट करती है कि आदेश 7 के प्रस्तावित नये नियम 10ख में वाद के अंतरण का निर्देश सही प्रतीत नहीं होता क्योंकि जब वाद-पत्र वापस किया जाता है तब ऐसा कोई वाद नहीं होता जिसका अंतरण किया जा सके।

अतः नये नियम 10 ख में वाद-पत्र की वापसी से संबंधित उपबंधों के अनुरूप संशोधन किया गया है ।

47. खंड 58 [मूल खंड 61], —प्रस्तावित नये नियम 6ङ में किये गये संशोधन स्पष्टीकरण के लिए हैं ।

48. खंड 59 [मूल खंड 62], —(एक) विधेयक में यह व्यवस्था की गई है ऐसी स्थिति में जब वादी न्यायालय में उपस्थित हो और प्रतिवादी उपस्थित न हो और यदि यह सिद्ध हो जाये कि समन की सम्यक रूप से तामील की गई थी तो न्यायालय एक पक्षीय कार्यवाही कर सकता है और इस आधार पर निर्णय दे सकता है कि वाद-पत्र में दिये गये तथ्य सही हैं । समिति का विचार है कि तब तक न्यायालय को एक पक्षीय डिक्री पारित करने की शक्ति नहीं दी जानी चाहिए जब तक उसके समक्ष ऐसा कोई प्रमाण न हो जिससे यह पता चले कि यदि ऐसे प्रमाण पर विवाद न उठाया गया हो तो वादी डिक्री का हकदार होगा । इन परिस्थितियों में समिति महसूस करती है कि यथापूर्व स्थिति बनाई रखी जानी चाहिए । नियम 6 के उपनियम (1) के प्रस्तावित खंड(क) में तदनुसार संशोधन किया गया है ।

(दो) नियम 13 के प्रस्तावित स्पष्टीकरण में, जैसा विधेयक में दिया गया है, यह व्यवस्था है कि यदि पारित एक-पक्षीय डिक्री के विरुद्ध अपील की गई हो और अपील निपटा दी गई हो तो ऐसी स्थिति में एक-पक्षीय डिक्री अपास्त करने के लिए कोई आवेदन नहीं किया जा सकेगा । समिति का विचार है कि ऐसी स्थिति में जब अपील वापस ले ली गई हो ऐसा प्रतिबंध नहीं किया जाना चाहिए । चूंकि पारित एक पक्षीय डिक्री के विरुद्ध किसी अपील में जांच की परिधि पारित की गई एक पक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए किये गये आवेदन की परिधि से भिन्न है, अतएव प्रतिवेदी को डिक्री अपास्त करने के लिए आवेदन फाइल करने के अवसर से वंचित नहीं किया जाना चाहिए यदि उसने एक पक्षीय

डिक्री के विरुद्ध अपील वापस ले ली हो । तथापि समिति परिसीमा की अवधि बढ़ाने का प्रस्ताव नहीं करती ताकि प्रतिवादी जो एक-पक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए आवेदन फाइल करना चाहे, वह परिसीमा अधिनियम, 1963 की अपेक्षाओं को पूरा करे ।

अतः उक्त उद्देश्य की प्राप्ति के लिए विधेयक में प्रस्तावित स्पष्टीकरण में संशोधन किया गया है ।

49. खंड 62 [मूल खंड 65] - समिति नोट करती है कि चूंकि आदेश 12 के नियम 2 में दस्तावेज़ फाइल करने के लिए कोई समय सीमा निर्धारित नहीं की गई है, जिसके कारण मुकदमों के निपटान में अनावश्यक विलंब होता है । समिति का विचार है कि मुकदमों के शीघ्र निपटान की दृष्टि से दस्तावेज़ फाइल करने के लिए पन्द्रह दिन की समय-सीमा निर्धारित की जाये । इस खंड में उपखंड (1), जिसमें आदेश 12 के नियम 2 के संशोधन का प्रस्ताव है, तदनुसार अंतः स्थापित किया गया है ।

50. खंड 66 [मूल खंड 69] -आदेश 16 जिसे विधेयक द्वारा प्रतिस्थापित करने का प्रस्ताव है, के नियम 1(1) में यह व्यवस्था है कि जिस तारीख को मामले निपटाये गये हों उसके बाद दस दिन के अंदर साक्षियों की सूची फाइल की जाये । समिति का विचार है कि पक्षकारों द्वारा उन साक्षियों की सूची देने के लिए, जिन्हें वे साक्ष्य देने अथवा दस्तावेज़ देने के लिए बुलाना चाहते हों, दस दिन की अवधि पर्याप्त नहीं है और इस अवधि को बढ़ाकर पन्द्रह दिन किया जाये । आदेश 16 के नियम 1 के उपनियम (1) में तदनुसार संशोधन किया गया है ।

51. खंड 69 [मूल खंड 72]- (एक) विधेयक में यह व्यवस्था है कि यदि साक्ष्य अंग्रेजी में दिया गया हो तो उसे अंग्रेजी में रिकार्ड किया जाये । समिति नोट करती है कि संहिता में इस आशय का कोई उपबंध नहीं है कि यदि साक्ष्य किसी अन्य भाषा में दिया गया हो तो उसे अंग्रेजी में रिकार्ड किया जाये ।

समिति का विचार है कि चूंकि देश के विभिन्न भागों में अलग-अलग भाषाएं बोली जाती हैं और संचार साधनों के तीव्र विस्तार को देखते हुए उत्तर भारत के किसी व्यक्ति पर दक्षिण भारत के किसी न्यायालय में तथा दक्षिण भारत के किसी व्यक्ति पर उत्तर भारत के किसी न्यायालय में मुकदमा चलाये जाने की संभावना है, अतः संहिता में इस आशय का उपबंध किया जाये कि यदि दोनों पक्षकार सहमत हों तो साक्ष्य अंग्रेजी में लिखा जाये भले ही वह साक्ष्य अंग्रेजी को छोड़कर किसी भी अन्य भाषा में दिया गया हो । तदनुसार, आदेश 18 के नियम 9 में उप-नियम (2) अंतःस्थापित किया गया है ।

(दो) समिति को सूचित किया गया कि आदेश 18 के नियम 18 के अंतर्गत न्यायालय को स्थानीय निरीक्षण करने की शक्ति प्राप्त है किंतु ऐसा कोई विशिष्ट उपबंध नहीं किया गया है जिसके अंतर्गत न्यायालय के लिए निरीक्षण के परिणाम का अभिलेखन करना अपेक्षित हो । इस प्रश्न के संबंध में न्यायिक निर्णयों में परस्पर विरोध है कि क्या किसी न्यायाधीश द्वारा निरीक्षण के परिणामों का अभिलेखन न कराये जाने पर कार्यवाही दूषित होती है अथवा नहीं । समिति का विचार है कि न्यायिक निर्णयों में जो परस्पर विरोध है उसे एक ऐसा विशेष उपबंध बनाकर दूर किया जाना चाहिए जिसके अंतर्गत स्थानीय निरीक्षण करने वाले न्यायाधीश के लिए ऐसे निरीक्षण में उसके द्वारा देखे गये संगत तथ्यों का एक ज्ञापन तैयार करना तथा ऐसे ज्ञापन का अभिलेख रखना अपेक्षित हो । तदनुसार, इस खंड में उप-खंड (1×) अंतःस्थापित किया गया है ।

52. खंड 70 [मूल खंड 73] — (एक) साक्ष्य के दौरान समिति के समक्ष कई साक्षियों ने शिकायत की कि मामलों की सुनवाई समाप्त होने के पश्चात् निर्णय रोके रखे जाते हैं और यह कि उसके बाद निर्णय सुनाने में अत्यधिक विलंब किया जाता है । सम्पूर्ण भारत में लगातार यह मांग

की गई थी कि मामले की सुनवाई के पश्चात् निर्णय सुनाने के लिए समय-सीमा निर्धारित की जानी चाहिए। समिति के समक्ष दिये गये साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए और न्यायालयों के पास अधिक कार्य को देखते हुए समिति का विचार है कि विधेयक में इस आशय का एक उपबंध किया जाना चाहिए कि मामले की सुनवाई समाप्त होने पर निर्णय, यदि तत्काल न दिया जा सके, तो सामान्यतः सुनवाई समाप्त होने के पन्द्रह दिन के भीतर सुनाया जाना चाहिए और यदि ऐसा करना व्यवहार्य न हो, तो निर्णय तीस दिन के भीतर सुनाया जाना चाहिए किंतु यदि तीस दिन के भीतर भी निर्णय देना व्यवहार्य न हो तो न्यायालय को चाहिए कि वह ऐसे विलंब के कारणों का अभिलेखन करे और निर्णय की घोषणा के लिए कोई आगे की तारीख निश्चित करे। इस प्रकार निश्चित की गई तारीख की सूचना पक्षकारों अथवा उनके प्लीडरों को दी जानी चाहिए।

तदनुसार, आदेश 20 के नियम 1 के उप-नियम (1) में दो परंतुक अंतःस्थापित किये गये हैं।

(दो) समिति ने नोट किया है कि खुले न्यायालय में आशुलिपिक से निर्णय लिखवाने के लिए आदेश 20 के नियम 1 में कोई उपबंध नहीं किया गया है। समिति की राय है कि खुले न्यायालय में किसी आशुलिपिक से निर्णय लिखवाकर उस की घोषणा करने के लिए न्यायाधीश को प्राधिकृत किया जाये बशर्ते उसे उच्च न्यायालय द्वारा ऐसा करने की शक्ति दी गई हो। तदनुसार, आदेश 20 के नियम 1 का उप-नियम (3) अंतःस्थापित किया गया है।

(तीन) समिति ने नोट किया है कि इस खंड के उप-खंड (iii) में अंतःस्थापित किये जाने वाले नये नियम 5 के के अनुसार न्यायालय के लिए यह आवश्यक है कि वह न्यायालय में उपस्थित पक्षकारों को, न कि उनका प्रतिनिधित्व करने वाले प्लीडरों को, यह इत्तिला दे कि किस न्यायालय में अपील की जा सकती है और ऐसी अपील दायर करने के लिए परिसीमा की अवधि

कितनी है । समिति का विचार है कि यदि इत्तिला का अभिलेख नहीं रखा जाता तो न्यायालय द्वारा दी गई इत्तिला के संबंध में बाद में विवाद उत्पन्न हो सकते हैं । अतः समिति की यह राय है कि यह सुनिश्चित करने के लिए कि बाद में कोई विवाद न हो, न्यायाधीश के लिए यह आवश्यक बना दिया जाना चाहिए कि वह पक्षकारों को दी गई इत्तिला के सुस्पष्ट स्वरूप का अभिलेख रखे । तदनुसार आदेश 20 में प्रस्तावित नये नियम 5 क में संशोधन कर दिया गया है ।

(चार) समिति का विचार है कि न्यायालय के लिए यह बाध्यकर बना दिया जाना चाहिए कि वह निर्णय सुनाने की तारीख से पन्द्रह दिन के भीतर डिक्री तैयार करे । यदि इस प्रकार निर्धारित अवधि के भीतर डिक्री तैयार करना संभव न हो, तो न्यायालय को चाहिए कि वह डिक्री के विरुद्ध अपील करने के लिए इच्छुक किसी पक्षकार के अनुरोध पर यह प्रमाणित करे कि डिक्री तैयार नहीं की गई है और साथ ही प्रमाणपत्र में विलंब के कारणों का भी उल्लेख करे । जैसा कि पहले ही प्रस्ताव किया गया है, निर्णय के अंतिम पैरा की प्रति पेश करने के बाद अपील की जा सकती है किंतु डिक्री तैयार हो जाने पर निर्णय के अंतिम पैरा या डिक्री का प्रभाव समाप्त माना जाये । तदनुसार, आदेश 20 के प्रस्तावित नये नियम 6क के उप-नियम (2) में संशोधन किया गया है ।

(पांच) समिति की राय है कि आदेश 20 के नियम 12 के उप-नियम (1) के खंड (ख) के अंतर्गत किराये अथवा अंतःकालीन लाभ के दावे में डिक्री पारित करते समय न्यायालय को चाहिए कि वह न केवल किराये अथवा अंतःकालीन लाभ, जो सम्पत्ति पर प्राप्त हुआ हो को ध्यान में रखे अपितु उस किराये अथवा अंतःकालीन लाभ पर भी जो डिक्री धारी को सम्पत्ति से प्राप्त हो उचित तत्परता से निर्धारित करे । तदनुसार, आदेश 20 के नियम 12 के उपनियम (1) (ख) में संशोधन किया गया है ।

(छः) समिति ने नोट किया है आदेश 20 में अंतःस्थापित किये जाने के लिए प्रस्तावित नया 12ख किसी डिक्री के अनुसरण में किसी दस्तावेज़ के निष्पादन या परक्राम्य लिखत के पृष्ठांकन के बारे में है, जब कि आदेश 20

निर्णय और डिक्री की विषय-वस्तु से संबंधित है । अतः समिति का विचार है कि प्रस्तावित नियम 20 में न रखकर आदेश 21 में रखना उचित होगा । समिति ने यह भी नोट किया है कि प्रस्तावित नियम 12 ख कुछ उपांतरों के साथ आदेश 21 के नियम 34 की लगभग शब्दशः प्रतिलिपि है । अतः समिति का विचार है कि प्रस्तावित नियम 12 ख का आदेश 20 से लोप कर दिया जाए और नियम 34 का लोप करने के स्थान पर उसे विधि आयोग द्वारा सुझाये गए उपांतरण कर दिये जाने चाहिये । तदनुसार प्रस्तावित नियम 12 ख का लोप कर दिया गया है ।

53. खंड 71 (मूल खंड 74) -- समिति ने नोट किया है कि प्रस्तावित नये आदेश 20क के नियम 2 के अंतर्गत एक उपबंध किया गया है कि खर्चों की संगणना करने में प्लीडर की फीस के रूप में कोई रकम तब तक सम्मिलित नहीं की जायेगी जब तक प्लीडर द्वारा हस्ताक्षरित पावती या एक लिखित प्रमाणपत्र जो उसके द्वारा हस्ताक्षरित हो और जिसमें प्रत्येक रकम कथित हो, न्यायालय में पेश न कर दिया गया हो । समिति महसूस करती है कि चूंकि प्लीडर की फीस उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित नियम-मानों के अनुसार ही अनुज्ञात की जाती है, अतः ऐसे उपबंध से कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा नहीं होगा । इसके अतिरिक्त, ऐसे उपबंध से न केवल कठिनाइयां पैदा होंगी बल्कि ऐसे मामलों में जिनमें कि प्लीडर की फीस आस्थगित कर दी जाती है – जैसा कि सरकार या किसी सरकारी क्षेत्र के उपक्रम या कम्पनी द्वारा देय फीस के मामलों में होता है डिक्रियां लेखबद्ध करने में विलंब भी हो सकता है । तदनुसार प्रस्तावित नये आदेश 20क के नियम 2 का लोप कर दिया गया है ।

54. खंड 72 (मूल खंड 75) — (एक) समिति ने नोट किया है कि संहिता में ऐसा कोई उपबंध नहीं है जिसके अंतर्गत किसी डिक्री के अंतर्गत न्यायालय के बाहर डिक्रीदार को डाक मनीआर्डर द्वारा या किसी बैंक की मार्फत या किसी अन्य रीति से किसी संदाय का लिखित साक्ष्य हो, किये गए संदाय के संबंध में हित समाप्ति की व्यवस्था हो । समिति का विचार है कि ऐसे मामले में उपर्युक्त संदाय की तारीख से हित समाप्त हो जाना चाहिए ।

। यदि डिक्रीदार डाक मनीआर्डर से या

बैंक की मार्फत भुगतान लेना अस्वीकार करता है तो जिस तारीख को उसे धन पेश किया गया या डाक प्राधिकारियों या बैंक द्वारा कारबार के मामूली अनुक्रम में उसे पेश किया जाता उस तारीख से उसका हित समाप्त हो जाना चाहिए । तदनुसार आदेश 21 के नियम 1 में उप-नियम (5) अंतःस्थापित किया गया है ।

(दो) इस खंड के उप-खंड (पन्द्रह) में किया गया संशोधन आदेश 20 के प्रस्तावित नये नियम 12 ख का लोप किये जाने के परिणामस्वरूप हुआ है ।

(तीन) समिति ने नोट किया है कि इस खण्ड के उपखण्ड (चौबीस) के नियम 57 के प्रस्तावित उपनियम (1) के अन्तर्गत दिये गये उपबन्ध से यह ज्ञात नहीं होता है कि डिक्री के खारिज होने के पश्चात् डिक्री के निष्पादन में कुर्की के आदेश कब तक प्रभावी रहेंगे। समिति का विचार है कि न्यायालय के लिये इस बात का उल्लेख करना बाध्यकर बना दिया जाना चाहिये कि कुर्की कितनी अवधि तक प्रभावी रहेगी अथवा किस दिन वह समाप्त हो जायेगी। समिति का यह भी विचार है कि यदि न्यायालय से कुर्की की अवधि का उल्लेख करने में चूक हो जाये तो कुर्की को निष्पादन मामले के खारिज हो जाने के पश्चात् समाप्त हुआ समझा जाना चाहिये। तदनुसार आदेश 21 के नियम 57 के उपनियम (1) तथा (2) में संशोधन कर दिया गया है।

(चार) समिति का विचार है कि कुछ मामलों में जहां कोई सम्पत्ति आदेश 21 के नियम 66 के उप-नियम (2) के अन्तर्गत डिक्री के निष्पादन में बेची जानी है ऐसा हो सकता है कि डिक्री दार द्वारा बताई गई सम्पूर्ण सम्पत्ति को बेचना आवश्यक न हो। इस लिये समिति का विचार है कि न्यायालय को इस आशय की शक्ति प्रदान की जानी चाहिये कि किसी ऐसे मामले में जहां न्यायालय का इस बारे में समाधान हो जाये कि सम्पत्ति के एक भाग की बिक्री डिक्री की तुष्टि के लिये पर्याप्त होगी तो न्यायालय को विक्रय की घोषणा में सम्पत्ति के केवल ऐसे भाग को विनिर्दिष्ट कर देना चाहिये आदेश 21 के नियम 66 के उप-नियम (2) के खण्ड (क) को तदनुसार संशोधित कर दिया गया है।

(पांच) समिति ने नोट किया है कि आदेश 21 के नियम 92 के उप-नियम (1) में प्रस्तावित संशोधन विधि आयोग के 27 वें प्रतिवेदन में व्यक्त आयोग के इस आशय को स्पष्ट नहीं करता है कि जहां डिक्री के निष्पादन में कुर्की के विरुद्ध दावा किया गया हो किन्तु इस प्रकार कुर्क की गई सम्पत्ति ऐसे दावे के अवधारण तक के लिये नीलामी द्वारा बेच दी गई है तो उस विक्रय को तब तक पुष्टि नहीं की जानी चाहिये जब तक दावा अन्तिम रूप से निपटा न दिया जाये। इस आशय को स्पष्ट करने के लिये उस खण्ड के खण्ड (32) के उप-खंड (क) में संशोधन किया गया है।

(छ) समिति ने नोट किया है कि आदेश 21 के प्रस्तावित नये नियम 104 में 'आदेश' शब्द प्रयुक्त हुआ है किन्तु वह उसी आदेश के प्रस्तावित नियम 98 तथा 100 में प्रयुक्त नहीं हुआ है। आदेश 21 के नियम 98 के उप-नियम (1) का तदनुसार पुन: प्रारूपण किया गया है।

(सात) समिति ने नोट किया है कि आदेश 21 के नियम 98 के प्रस्तावित उप-नियम (2) के अन्तर्गत निर्णीति। ऋणी या उसके द्वारा उकसाहट पर किसी अन्य व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से डाली गई बाधा शामिल है किन्तु उसके अन्तर्गत किसी अंतरिती द्वारा निर्णय हो जाने तक डाली गई बाधा शामिल नहीं है। इस कमी को दूर करने के लिये आदेश 21 के नियम 98 के उप-नियम (2) को संशोधित किया गया है।

(आठ) आदेश 21 के नियम 100 में किया गया संशोधन पारिणामिक है।

(नौ) समिति ने नोट किया है कि आदेश 21 का प्रस्तावित नियम 101 निष्पादन न्यायालय को, सम्पत्ति में अधिकार, हक या हित से सम्बन्धित प्रश्नों सहित सभी प्रश्नों का निर्णय करने का अधिकार प्रदान करता है। समिति का विचार है कि ऐसा हो सकता है कि डिक्री निष्पादक न्यायालय को प्रश्नाधीन सम्पत्ति में अधिकार, हक या हित सम्बन्धी प्रश्न का निर्णय करने को, धन सम्बन्धी अथवा अन्यथा, अधिकारिता न हो। इस प्रकार की अधिकारिता न होने पर मामले के निपटाने में विलम्ब हो सकता है। इस लिये समिति की यह राय है कि निष्पादक न्यायालय को ऐसे सभी प्रश्नों पर निर्णय करने की अधिकारिता प्रदान कर दी जानी चाहिये जिससे कि ऐसे प्रश्नों की सुनवाई की जा सके और अन्तिम निर्णय लिया जा सके। आदेश 21 के प्रस्तावित नियम 101 में तदनुसार संशोधन कर दिया गया है।

55. खंड 73 (मूल खंड 76) - (एक) साक्ष्य के दौरान विभिन्न साक्षियों ने समिति को बताया कि मृतक प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधियों

का प्रतिस्थापन करने में विलम्ब होना वादों के निपटान में विलम्ब होने का एक कारण है। समिति को यह भी बताया गया कि उपचारात्मक उपाय के रूप में कलकत्ता, मद्रास, कर्नाटक, तथा उड़ीसा उच्च न्यायालों ने आदेश 22 के नियम 4 में इस आशय का नया उप-नियम अन्तः स्थापित किया है कि प्रतिवाद न करने वाले प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधियों का प्रतिस्थापन करना आवश्यक नहीं होगा तथा वाद में दिया गया निर्णय उतना ही प्रभावी होगा जितना कि वह तब प्रभावी होता जब कि वह इस प्रकार दिया गया होता जब प्रतिवादी जीवित होता।

इस लिये समिति का विचार है कि मृतक प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधियों के प्रतिस्थापन में विलम्ब और उसके परिणामतः वादों के निपटान में होने वाले विलम्ब से बचने के लिये संहिता में ही इसी प्रकार का उपबन्ध कर दिया जाना चाहिये। तदनुसार आदेश 22 के नियम 4 में एक नया उप-नियम 3 क अन्तःस्थापित किया गया है।

(दो) समिति ने नोट किया है कि परिसीमा अधिनियम, 1963 में परिसीमन को कालावधि निर्दिष्ट की गई है। समिति का विचार है कि आदेश 22 के नियम 4 के नव प्रस्तावित उप-नियम (4) के खंड (क) में प्रयुक्त शब्द 'परिसीमा अधिनियम, 1963 में यथा उपबन्धित विहित कालावधि' ठीक नहीं है और इस लिये तदनुसार उसमें संशोधन किया गया है।

(तीन) साक्ष्य के दौरान यह प्रश्न उठाया गया था कि मुवक्किल की मृत्यु हो जाने पर प्लीडर के साथ हुई संविदा समाप्त हो जाती है और इस प्रकार मुवक्किल की मृत्यु हो जाने पर अपने मुवक्किल की ओर से कार्य करने का प्लीडर का दायित्व भी समाप्त हो जाता है। तथापि, समिति का विचार है कि प्लीडर के लिये यह बाध्यकर बना दिया जाना चाहिये कि वह न्यायालय को अपने मुवक्किल की मृत्यु के बारे में सूचना दे तथा इस प्रयोजन के लिये प्लीडर और मुवक्किल के बीच हुई संविदा

को बरकरार माना जाना चाहिये । आदेश 22 के नये प्रस्तावित नियम 10 क के उप-नियम (ग) में तदनुसार संशोधन कर दिया गया है ।

(चार) समिति का विचार है कि नये प्रस्तावित नियम 10 क के उप-नियम (1) में किये गये संशोधन को देखते हुए, नियम 10 क में प्रस्तावित उप-नियम (2) आवश्यक नहीं है क्योंकि इस उपबन्ध से प्लेडर को कठिनाई होने की सम्भावना है । तदनुसार आदेश 22 के नये प्रस्तावित नियम 10 क के उप-नियम (2) का लोप कर दिया गया है ।

56. खंड 75(मूलखंड 78) :- (एक) आदेश 26 के प्रस्तावित नये नियम 16क के उपबन्धों के अधीन कमीशनर को प्रश्न, उत्तर और आक्षेप आदि लिखने के लिये प्राधिकृत किया गया है । ऐसे अवसर भी उत्पन्न हो सकते हैं कि जहां साक्षी से पूंछे गए किसी प्रश्न पर किया गया आक्षेप विशेषाधिकार के आधार पर किया गया हो । यदि ऐसे किसी मामले में, कमिश्नर के लिये प्रश्न का उत्तर लिखना अपेक्षित हो, तो उस दशा में जिस विशेषाधिकार का दावा किया गया है वह समाप्त हो जाएगा । अत: समिति का विचार है कि ऐसे किसी मामले में कमिश्नर को किसी प्रश्न का उत्तर लिखने की अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए बल्कि विशेषाधिकार के प्रश्न के बारे में न्यायालय से निर्णय कराने की बात पक्षकार पर छोड़ते हुए उसे साक्षी की परीक्षा जारी रखने की अनुज्ञा दी जा सकती है । तदनुसार आदेश 26 के प्रस्तावित नये नियम 16 क के उप-नियम (1) में एक परन्तुक जोड़ दिया गया है ।

(दो) समिति का विचार है कि विलम्ब से बचने के लिये कमीशन जारी करने वाले न्यायालय को एक तारीख निश्चित कर देनी चाहिए जिस तारीख तक निष्पादन के बाद कमीशन न्यायालय को लौटा दिया जाना चाहिए । तदनुसार आदेश 26 में नया नियम 18 ख अन्त: स्थापित कर दिया गया है ।

(तीन) इस खंड के उप-खंड (आठ) में किया गया संशोधन आदेश 26 में नये नियम 18 ख के अन्तःस्थापित किये जाने के परिणाम-स्वरूप किया गया है ।

57 खंड 76 (मूल खंड 79) : समिति ने नोट किया है कि सरकार या किसी लोक अधिकारी के विरुद्ध किसी वाद के मामले में वाद पत्र का दाखिल करने के लिये न्यायालय कुल मिलाकर अधिकतम 2 महीने का समय दे सकता है जबकि अन्य प्रतिवादियों के मामले में लिखित वक्तव्य दाखिल करने के लिये समय देने के बारे में न्यायालय को शक्तियों के संबंध में ऐसा कोई प्रतिबन्ध नहीं है । समिति का यह विचार है कि इसे भेदभावपूर्ण माना जा सकता है । समिति का विचार है कि प्रारम्भिक रूप से न्यायालय को इस बात का विवेकाधिकार होना चाहिये कि वह सरकार द्वारा वाद पत्र का उत्तर दिये जाने के लिये ऐसा समय जो वह उचित समझे, निश्चित कर सके परन्तु जहाँ तक उस अवधि को आगे बढ़ाने का सम्बन्ध है इस तरह बढ़ाये जाने वाले समय को अवधि कुल मिलाकर दो महीने से अधिक नहीं होनी चाहिये । इस खंड के उप-खंड (1) का तदनुसार संशोधन कर दिया गया है ।

उत्तर

58. खंड 79 (मूल खंड 82) : समिति का विचार है कि ऐसे किसी मामले में जिस में वाद का पक्षकार कोई अप्राप्तवय है और उस वाद में कोई करार या समझौता दाखिल किया जाना है, वहां वाद के लिये उस अप्राप्त वय के वाद मित्र या संरक्षक के द्वारा किसी शपथ पत्र या प्लीडर द्वारा इस आशय का प्रमाण पत्र दिये जाने के बावजूद कि करार या समझौता अप्राप्त वय के लाभ के लिये है, इस बात को स्वतंत्र रूप से जांच करने के लिये कि करार या समझौता अप्राप्तवय के लाभ के लिये है या नहीं न्यायालय को प्राप्त शक्तियों को अप्रभावित रहने दिया जाना चाहिये । तदनुसार आदेश 32 के नियम 7 के प्रस्तावित नये उप-नियम (1क) में एक नया परन्तुक जोड़ दिया गया है ।

59 खंड 80 (मूल खंड 83) - (एक) समिति ने नोट किया है कि नये आदेश 32क में कौटुम्बिक बातों से संबंधित वादों के लिये प्रक्रिया के बारे में उपबन्ध किया गया है। परन्तु नियम 1 के उपनियम (2) के खंड (च) में निर्वसीयतता और उत्तराधिकार संबंधी वसीयतों के बारे में वाद अथवा कार्यवाही प्रभावित है। समिति का विचार है कि यह आवश्यक नहीं है कि ऐसे वाद अथवा कार्यवाहियां कुटुम्ब के सदस्य द्वारा लाई जायें। अत: समिति का विचार है कि इस खंड के उपबन्ध कुटुम्ब के सदस्य द्वारा लाए गए वाद अथवा कार्यवाही तक निर्बन्धित किये जाने चाहिये ताकि तृतीय पक्ष द्वारा फाइल किये गये मुकदमे अथवा कार्यवाहियां असाधारण प्रक्रिया के अन्तर्गत आयें। प्रस्तावित नये आदेश 32क के नियम 1 के उप-नियम (2) के खंड (च) में तदनुसार संशोधन कर दिया गया है।

(दो) समिति इस बात से अवगत है कि 'कुटुम्ब' का अभिप्राय जैसा कि नियम 6 में दिया गया है, आदेश 32 क के उद्देश्यों के लिये है, तथापि समिति का विचार है कि यह स्पष्ट किया जाना चाहिये कि नियम 6 में 'कुटुम्ब' की परिभाषा प्रवर्तमान किसी व्यक्तिगत कानून अथवा किसी अन्य कानून में उन शब्दों के अभिप्राय पर प्रतिकूल प्रभाव न डाले। नये आदेश 32 क के नियम 6 के स्पष्टीकरण में, तदनुसार संशोधन कर दिया गया है।

60. खंड 81 (मूलखंड 84) : (एक) समिति ने नोट किया है कि आदेश 33 के नियम 3 के अनुसार यह अपेक्षित है कि निर्धन व्यक्ति के तौर पर वाद लाने की अनुज्ञा के लिये आवेदन स्वयं आवेदक द्वारा उपस्थापित किया जाये। समिति का यह विचार है कि जहां वादियों की संख्या एक से अधिक हो, वहां यह आवश्यक नहीं होना चाहिये कि सभी वादी व्यक्तिगत रूप से आवेदन करें। ऐसे किसी मामले में यदि आवेदन उन वादियों में से किसी एक वादी द्वारा उपस्थापित कर दिया जाये तो इतना ही पर्याप्त होना चाहिये। आदेश 33 के नियम 3 में तदनुसार एक

परन्तुक जोड़ दिया गया है ।

(दो) समिति ने नोट किया है कि आदेश 33 के नियम 15 के प्रस्तावित नये उप-नियम (2) के पहले भाग में यह उपबन्ध किया गया है कि ऐसे व्यक्ति के मामले में जिसका निर्धन व्यक्ति के तौर पर वाद लाने की अनुज्ञा के लिये दिया गया आवेदन नामंजूर कर दिया गया हो, ऐसे व्यक्ति का कोई वाद तब तक ग्रहण नहीं किया जायेगा जब तक वह व्यक्ति निर्धन व्यक्ति के तौर पर वाद लाने की इजाजत के लिये दिये गये आवेदन का विरोध करने में राज्य सरकार और विरोधी पक्षकार द्वारा उपगत खर्चों को (यदि कोई हों न दे दे । इस प्रकार इस भाग में तब तक वाद ग्रहण करने का स्पष्ट रूप से निषेध किया गया है जब तक कि खर्चों का भुगतान न कर दिया जाये । लेकिन इसी के दूसरे भाग में यह उपबन्ध किया गया है कि जहां ऐसे खर्चे वाद के संस्थित किये जाने के समय पर या उसके पश्चात् ऐसी कालावधि के अन्दर जो न्यायालय द्वारा अनुज्ञात की जाये , नहीं दे दिये जाते हैं, वहां वाद पत्र नामंजूर कर दिया जायेगा ।

समिति का यह विचार है कि ऐसा हो सकता है कि उस व्यक्ति के पास जिसका निर्धन व्यक्ति के तौर पर वाद लाने की इजाजत के लिये किया गया आवेदन नामंजूर कर दिया गया है तथा जो मुकदमा दायर करना चाहता है, उतने साधन ही नहीं कि वह वाद संस्थित किये जाने के समय देय कोर्ट फीस के साथ साथ खर्चे भी उसके और यदि वाद संस्थित करने से पूर्व खर्चा अदा करने की शर्त अनिवार्य कर दी जाये तो, हो सकता है कि कोई ऐसा निर्धन व्यक्ति अपने दावे से वंचित रह जाये जिसका दावा असली हो ।

अत: समिति का विचार है कि यदि वाद लाने के समय अथवा तत्पश्चात उस समय में जिसको कि न्यायालय अनुमति दे, खर्चे संदत्त नहीं किये जाते, तो ऐसे वाद में वाद पत्र नामंजूर किया जाना चाहिये .. इस खंड के उप-खंड (X) में तदनुसार संशोधन कर दिया गया है ।

61. खण्ड 82 (मूल खण्ड 85) - समिति के समक्ष साक्ष्य के दौरान विभिन्न साक्षियों ने बताया कि प्रारंभिक और अंतिम डिक्री पारित करने संबंधी उपबंध को हटाने के प्रस्ताव से कार्य शीघ्र पूरा करने का उद्देश्य संभवतः पूरा न हो, क्योंकि इससे निष्पादन संबंधी कार्यवाही के दौरान पारित प्रत्येक आदेश के विरुद्ध अपील करके कार्यवाही में विलम्ब किये जाने की संभावना है । अतः इस बात की संभावना है कि प्रस्तावित संशोधन से उससे भी अधिक अपीलें हों जितनी कि इस समय होती हैं ।

समिति का विचार है कि चूंकि अन्यक संबंधी वादों से भिन्न वादों में शीघ्र में प्रारंभिक डिक्रियां और अंतिम डिक्रियां समाप्त नहीं की जा रही हैं, अतः अन्यक संबंधी वादों में ही प्रारंभिक डिक्री समाप्त करने से कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा नहीं होगा । तदनुसार, खण्ड में संशोधन कर दिया गया है ।

62. खण्ड 84 (मूल खण्ड 87) - आदेश 37 में प्रस्तावित नियम 1 के उप-नियम (1) खण्ड (ख) के परन्तुक में किया गया संशोधन प्रारूपण संबंधी है ।

(दो) समिति ने नोट किया है कि आदेश 37 में क्रम इस प्रकार है कि वाद के समन प्रतिवादी को पहले जारी किए जाते हैं और, जब प्रतिवादी उपस्थित होता है तो वादी को निर्णय के लिए प्रतिवादी पर समन तामील करने होते हैं । जब निर्णय के लिए समन तामील कर दिए जाते हैं, तो प्रतिवादी को वाद की प्रतिरक्षा करने के लिए न्यायालय की अनुज्ञप्ति लेनी पड़ती है । परन्तु नियम 2 के प्रस्तावित उप-नियम (3) में, जिसमें यह क्रम बदल दिया गया है, यह अपेक्षित है कि प्रतिवादी को न्यायालय में उपस्थित होने के समय वाद की प्रतिरक्षा करने संबंधी अनुज्ञप्ति लेनी पड़ेगी । चूंकि ऐसा आशय नहीं है, अतः आदेश 37 के नियम 2 के उप-नियम (3) में, तदनुसार, संशोधन कर दिया गया है ।

(तीन) समिति ने नोट किया है कि संहिता में ऐसे आधारों के बारे में कोई निर्देश नहीं हैं, जिनके अनुसार वाद की प्रतिरक्षा करने संबंधी अनुज्ञप्ति नहीं दी जाएगी समिति का विचार है कि यदि ऐसी अनुज्ञप्ति नहीं दी जाती तो प्रतिवादी वाद की प्रतिरक्षा के अवसर से वंचित हो जाएगा और उसके परिणाम स्वरूप प्रतिवादी को

उसके विरुद्ध मांगी गई डिक्री के परिणाम भुगतने पड़ेंगे । अतः समिति ने उपबन्ध किया है कि यदि न्यायालय की तुष्टि हो जाती है कि प्रतिवादी द्वारा कहे गये शब्दों से इस बात का पता नहीं चलता कि उसके पास प्रस्तुत करने के लिए सारवान प्रतिरक्षा है अथवा प्रस्तुत की जाने वाली प्रतिरक्षा तुच्छ अथवा कष्टप्रद है तो वाद की प्रतिरक्षा करने की अनुमति नहीं दी जाएगी ।

समिति का यह विचार भी है कि यदि कोई प्रतिवादी यह स्वीकार कर लेता है कि उसके द्वारा कोई राशि देय है, तो उसे तब तक प्रतिरक्षा करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए जब तक वह न्यायालय में स्वीकार की गई राशि जमा नहीं करा देता । आदेश 37 के नियम 3 के उप नियम (5) के दो परन्तुकों में, तदनुसार संशोधन कर दिए गए हैं ।

63. खण्ड 85 (मूल खण्ड 88) - (एक) समिति द्वारा धारा 58 में किए गए संशोधनों को ध्यान में रखते हुए इस खण्ड के उप-खण्ड (1) का लोप कर दिया गया है ।

(दो) समिति ने नोट किया है कि आदेश 38 के नियम 5 के नये उप-नियम (4) में किये गये प्रस्तावित संशोधन में यह उपबन्ध किया गया है कि नियम 5 में विनिर्दिष्ट प्रक्रिया का अनुपालन किये बिना की गई कुर्की शून्य होगी । परन्तु नियम 5 में कुर्की करने की कोई प्रक्रिया विनिर्दिष्ट नहीं की गई है । नियम 5 में केवल वे परिस्थितियां विनिर्दिष्ट की गई हैं जिनमें निर्णय से पूर्व कुर्की की जा सकती है । समिति का विचार है कि यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए कि नियम 5 के उप-नियम (1) के उपबन्धों का अनुपालन किये बिना निर्णय से पूर्व की गई कुर्की शून्य होगी । तदनुसार, आदेश 38 के नियम 5 के प्रस्तावित उप-नियम (4) का लोप कर दिया गया है ।

64. खण्ड 86 (मूल खण्ड 89) - (एक) साक्ष्य के दौरान यह बताया गया था कि आदेश 39 के नियम 3 में अन्तःस्थापित किये जाने वाले प्रस्तावित परन्तुक का उद्देश्य पूरा होने के बजाए प्रतिकूल प्रभाव होगा । समिति का विचार है कि

यदि व्यादेश के लिये प्रार्थना करने वाले पक्षकार से यह अपेक्षा की जाती है, इससे पूर्व कि न्यायालय अंतः कालीन व्यादेश अनुदत्त करें, वह व्यादेश के लिये आवेदन की प्रति या अन्य दस्तावेजों की प्रति विरोधी पक्षकार को परिदत्त करें, प्रतिवादी को अस्थायी व्यादेश के लिये आसन्न आवेदन का पता चल जायेगा और वह ऐसी आपत्ति, जिसको प्रस्तावित व्यादेश द्वारा रोका जाना था, करने में शीघ्रता करेगा । अतः समिति की राय है कि नियम 3 को संशोधित किया जाना चाहिये और यह उपबंध किया जाना चाहिये कि प्रतिवादी को आवेदन, इत्यादि की प्रतियां व्यादेश अनुदत्त किये जाने के तत्काल बाद (और न कि व्यादेश के लिये आदेश दिये जाने से पूर्व) भेजी या परिदत्त की जानी चाहिये तथा व्यादेश के लिये आवेदक द्वारा एक शपथ पत्र फाइल किया जाना चाहिये जिसमें यह बताया गया हो कि प्रति भेज दी गई है ।

समिति का यह विचार भी है कि अंतःकालीन व्यादेश अनुदत्त करने से पूर्व न्यायालय के लिये यह अनिवार्य बना दिया जाना चाहिये कि वह अपनी इस राय के लिये, कि विलंब के कारण व्यादेश अनुदत्त करने का उद्देश्य ही निष्फल हो जायेगा, कारणों को अभिलिखित करे । आदेश 39 के नियम 3 के प्रस्तावित परन्तुक में तदनुसार, संशोधन किया गया है ।

(दो) समिति को बताया गया था कि पक्षकार द्वारा जब एक बार अस्थायी व्यादेश के लिये आदेश प्राप्त कर लिया जाता है, तब वह वाद को शीघ्र निपटाने की उत्सुकता नहीं दिखाता है और परिणामतः, व्यादेश अत्यधिक लंबी अवधि तक लागू रहता है । व्यादेश लंबी अवधि तक जारी रखने से न केवल वादियों को कठिनाई होगी, बल्कि सरकार द्वारा चलाई जा रही बहुत ही कल्याण परियोजनाओं के कार्य में भी बाधा पड़ेगी । इन परिस्थितियों में विधेयक में यह उपबंध किया गया था कि अस्थायी व्यादेश सामान्यतः तीस दिन से अधिक की कालावधि के लिये प्रवृत्त नहीं रहना चाहिये, किन्तु विरोधी पक्षकार की सम्मति से व्यादेश के प्रवर्त्तन की कालावधि पैंतालीस दिन तक बढ़ाई जा सकेगी और यह कि पैंतालीस दिनों की कालावधि से आगे अवधि बढ़ाने की अनुमति नहीं होगी । समिति का विचार है कि विरोधी पक्षकार से अन्य सीमा बढ़ाने के बारे में सम्मति प्राप्त करना कठिन होगा । तदनुसार, विरोधी पक्षकार की सम्मति से इस प्रकार

समय-सीमा बढ़ाने के लिये यह उपबंध व्यवहार्य प्रतीत नहीं होता है । इसके अतिरिक्त, कड़ी समय-सीमा लागू करने से कठिनाइयाँ पैदा नहीं होंगी क्योंकि ऐसे अवसर आ सकते हैं जब समय न मिल पाने के कारण न्यायालय, जिस तारीख को उसके द्वारा अंतः-कालीन व्यादेश प्रदत्त किया गया था उस तारीख से लेकर तीस दिनों की कालावधि समाप्त होने से पूर्व, अस्थायी व्यादेश के लिये आवेदन को न निपटा सके । तथापि, समिति का विचार है कि वादों को निपटाने में लगने वाले विलंब को रोकने के लिये, न्यायालय के लिये यह अनिवार्य बना दिया जाना चाहिये कि जिस तारीख को उसके द्वारा अंतःकालीन व्यादेश प्रदत्त किया जाये उस तारीख से तीस दिनों के भीतर व्यादेश के लिये आवेदन को निपटा दिया जाये ; और जहां ऐसा करना व्यवहार्य न हो वहां न्यायालय के लिये यह अनिवार्य होना चाहिये कि वह इस प्रकार की असमर्थता के लिये अपने कारण अभिलिखित करे। आदेश39 का प्रस्तावित नये नियम 3 क में, तदनुसार संशोधन कर दिया गया है ।

65. खंड 87(मूल खंड 90) ;- (एक) समिति ने नोट किया है कि आदेश 41 में नियम 3 के प्रस्तावित नये उप-नियम (1क) के अंतर्गत यदि अपीलार्थी अपील में विवाद ग्रस्त रकम का निक्षेप करने या ऐसी राशि के लिये प्रतिभूति देने में असफल रहता है तो अपील के ज्ञापन को प्रतिक्षेपित कर दिया जाना चाहिये। समिति का विचार है कि इस प्रकार के उपबंध से एक अच्छे मामले वाला निर्णीत-ऋणी, विवादग्रस्त रकम का निक्षेप करने या ऐसी राशि के लिये प्रतिभूति देने में अपनी असमर्थता के कारण आगे अपील करने से वंचित रह जायेगा ।

अतः समिति की राय है कि यह सुनिश्चित करने के लिये कि दोनों पक्षकारों के प्रति न्याय हो, प्रस्तावित उप-नियम को इस प्रकार संशोधित किया जाना चाहिये कि न तो निर्णीत-ऋणी आगे अपील करने के अपने अधिकार से वंचित रहे, और न ही डिक्रीदार अपने उपचार से । प्रस्तावित उप-नियम 1 क में यह उपबंध करने के लिये संशोधन कर दिया गया है कि डिक्री के निष्पादन को रोकने के लिये अनुमति तब तक नहीं दी जायेगी जब तक कि रकम का निक्षेप नहीं कर दिया जाता है या प्रतिभूति नहीं दे दी जाती है और इसको नियम 5 के अंतर्गत उपनियम (5) के रूप में बदल दिया गया है ।

(दो) समिति की राय है कि न्यायालय को डिक्री के निष्पादन को रोकने के लिये

अंतः कालीन अनुमति प्रदत्त करने की शक्ति तब तक नहीं दी जानी चाहिये, जब तक कि आदेश 41 के नियम 11 के अधीन सुनवाई के बाद न्यायालय अपील सुनने का निर्णय नहीं कर लेता है । आदेश 41 के प्रस्तावित नियम 3 क में उपनियम (3) तदनुसार, अंतः स्थापित कर दिया गया है ।

(तीन) नियम 5 के उपनियम (1) के स्पष्टीकरण में उपबंधित है कि डिक्री के निष्पादन को रोकने के लिये अपील-न्यायालय का आदेश प्रथम बार के न्यायालय को ऐसे आदेश की सूचना की तारीख से प्रभावी होगा, किन्तु निष्पादन को रोकने के लिये प्रथम बार के न्यायालय द्वारा प्लीडर के अपने वैयक्तिक जानकारी पर आधारित ऐसे शपथपत्र पर कार्य किया जायेगा जिसमें यह कथित हो कि डिक्री के निष्पादन को रोकने के लिये अपील न्यायालय द्वारा आदेश दे दिया गया है । समिति का विचार है कि इस प्रयोजनार्थ शपथ-पत्र फाइल करना प्लीडर के लिये आवश्यक नहीं होना चाहिये और अपीलार्थी द्वारा शपथ-पत्र देना ही पर्याप्त होगा। स्पष्टीकरण में तदनुसार संशोधन किया गया है ।

(चार) समिति द्वारा संहिता की धारा 2 की उप-धारा (2) में संशोधन किये जाने के परिणामस्वरूप आदेश 41 के नियम 11 के उपनियम (4) का लोप कर दिया गया है ।

(पांच) साक्ष्य के दौरान यह बताया गया कि अपीलें काफी समय तक अनिर्णीत पड़ी रहती हैं और परिणामतः न्याय मिलने में विलंब होता है । इस बात पर जोर दिया गया है कि अपीलों के निपटान के लिये सांविधिक समय-सीमा निर्धारित की जाये ।

समिति का विचार है कि अपीलों के निपटान के लिये सांविधिक समय-सीमा निर्धारित करना न तो संभव है और न ही वांछनीय ।

तथापि, समिति का विचार है कि लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के, निर्वाचन संबंधी मामलों के शीघ्र निपटान से संबंधित उपबंधों की ही तरह के उपबंध से अधिकांश मामलों में अपीलों के निपटान में तेजी आ जायेगी । तदनुसार आदेश 41 में एक नया नियम 11 क अंतः स्थापित किया गया है ।

(छः) समिति का विचार है कि प्रस्तावित नये नियम 12 क में किये गये उपबंध, जिनमें न्यायालय को कोई अपील अंशतः अथवा केवल विशिष्ट आधार पर स्वीकार करने की शक्ति दी गई है, पहली अपील के मामले में वांछनीय नहीं है किन्तु दूसरी अपील के मामले में ऐसा उपबंध किया जा सकता है। अतएव आदेश 41 के नये नियम 12 क का लोप कर दिया गया है और आदेश 42 में एक परिपार्श्विक संशोधन किया गया है।

(सात) इस खंड के उप-खंड (x) में किये गये संशोधन स्पष्टीकरण के लिये, प्रारूपण संबंधी तथा परिपार्श्विक हैं।

66. खंड 88 (मूल खंड 91)— इस खंड में किया गया संशोधन विधेयक के खंड 37 (मूल खंड 39) में और 87 (मूल खंड 90) में किये गये संशोधनों के परिणामस्वरूप किया गया है।

67. खंड 89 (मूल खंड 92)— समिति का विचार है कि अपीलार्थी को न केवल इस आधार पर कि समझौता अभिलिखित नहीं किया जाना चाहिये था, अपितु इस आधार पर भी कि समझौता अभिलिखित किया जाना चाहिये था डिक्री का प्रतिवाद करने का अधिकार होना चाहिये।

आदेश 43 के प्रस्तावित नये नियम 1 क के उप-नियम (2) में तदनुसार संशोधन किया गया है।

68. मूल खंड 98 — इस खंड का लोप संहिता के आदेश 34 में किये गये संशोधन के परिणामस्वरूप किया गया है।

69. खंड 1 और (अधिनियम सूत्र) — इनमें किये गये संशोधन औपचारिक हैं।

70. संयुक्त समिति सिफारिश करती है कि विधेयक को संशोधित रूप में पारित किया जाये।

71. चूंकि विधेयक का एक मुख्य उद्देश्य मुकदमेबाजी पर होने वाले व्यय में कमी करना है, अतः समिति महसूस करती है कि यद्यपि न्यायालय फीस का मामला संहिता की परिधि से बाहर है, तथापि इस मामले की ओर ध्यान दिया जाना चाहिये। समिति के लिये न्यायालय फीस संबंधी विधान तैयार करना संभव नहीं हो सका है क्योंकि न्यायालय फीस के बारे में विधान बनाने की संसद की सक्षमता अधः राज्य क्षेत्रों तक सीमित है और यह विषय (न्यायालय फीस) राज्य क्षेत्र में आता है (देखिये राज्य सूची की प्रविष्टि 3) तथापि, समिति महसूस करती

है कि पूरे देश में न्यायालय फीस के मापमान एक मोटे तौर पर समान होने चाहिये और न्यायालय फीस की दरें यदि नाम मात्र की न हो सकें तो बहुत कम होनी चाहिये, ताकि समुदाय का अपेक्षाकृत कम सम्पन्न वर्ग कानून के समक्ष समानता से वंचित न हो जाये । इसके अतिरिक्त यदि न्यायालय फीस प्रभारित की भी जाती है, तो इससे प्राप्त राजस्व सिविल न्याय संबंधी प्रशासन पर आने वाले व्यय से अधिक नहीं होना चाहिये । उच्चतम न्यायालय ने इस ओर बारम्बार ध्यान दिलाया है कि फीस और कर में अंतर है । जहां फीस प्रभारित की जाती है, वहां प्रभारित फीस का सरकार द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं के साथ उचित संबंध होना परमावश्यक है । दूसरे शब्दों में यह सिद्ध किया जाना चाहिये कि उद्ग्रहण, प्रदान की जाने वाली सेवाओं के एवज़ में है (ए0आई0आर(1971)एस0सी0 1182)

72. उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों तथा निर्धन व्यक्तियों को न्याय से वंचित न रहने देने के लिये मुकदमें बाजी पर होने वाले व्यय को कम करने की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए, समिति का विचार है कि केन्द्रीय सरकार को यह सुनिश्चित करने के लिये कारगर उपाय करने चाहिये कि पूरे देश में न्यायालय फीस की दरें समान हों और इन दरों में इतनी कमी की जानीचाहिये, जिससे कि निर्धन व्यक्ति न्यायालये से अपनी शिकायत दूर करवा सकें । केन्द्रीय सरकार को यह भी सुनिश्चित करना चाहिये कि यदि राज्य सरकार को न्यायालये फीसों से प्राप्त होने वाली धन राशि सिविल न्याय संबंधी प्रशासन पर होने वाले व्यय से बढ़ जाती है तो वह बढ़ी हुई धन राशि मुकदमें लड़ने वाले लोगों को सुविधायें प्रदान करने पर व्यय की जानी चाहिये ।

एल0 डी0 कटकी
सभापति
संयुक्त समिति

नई दिल्ली ।
मार्च, 1976
चैत्र, 1898(शक)

विशेष टिप्पण

एक

खंड 6

(मुख्य अधिनियम की धारा 11)

अतः स्थापित किया गया स्पष्टीकरण अनावश्यक है । आन्वयिक पूर्व-न्याय के सिद्धांत का उच्च न्यायालय के निर्णय के आधार पर पहले ही निष्पादन कार्यवाहियों पर भी विस्तार किया जा चुका है । यदि एक्कार को अपील करने का अधिकार नहीं है तो वह निर्णय पूर्व-न्याय के रूप में उसके विरुद्ध प्रवृत्त नहीं किया जाना चाहिये । इसके प्रतिकूल किसी उपबंध का किया जाना मूलतः गलत है ।

खंड 27

(मुख्य अधिनियम की धारा 80)

मूल विधेयक में सरकार इस सम्पूर्ण धारा का लोप करना चाहती थी । किंतु समिति ने ऐसा करना ठीक नहीं समझा तथा कुछ उपांतरण के साथ उसे बना रखा । किंतु मुझे यह कहते हुए खेद है कि इस उपाय के द्वारा जिस त्रुटि को दूर करने का विचार किया गया है वह उस त्रुटि से भी बुरा है । संशोधन में अब भी ऐसे नोटिस पर जोर दिया गया है जो सारवान लाभ हेतु प्रदान करता है । किंतु मूल विधेयक के पृष्ठ 107 पर खंडों पर टिप्पण में यह कहा गया है "किसी लोकतांत्रिक देश में नागरिकों और राज्य के बीच ऐसा कोई विभेद नहीं होना चाहिये जैसा कि धारा 80 में अनुकल्पित है । जिन मामलों में मुकदमा लाने वाला व्यक्ति अन्य पक्षकार को दावा तय करने का अवसर प्रदान किये बिना न्यायालय में मुकदमा चला देता है, उनमें खर्चा मंजूर किये जाने के साधारण नियम ही पर्याप्त होने चाहिये" और इसलिये

धारा 80 का लोप कर दिया गया । किंतु समिति का निष्कर्ष इससे भिन्न है मैं समिति के निष्कर्ष से सहमत नहीं हूँ । इस समय सरकार अनेक औद्योगिक तथा वाणिज्यिक उपक्रमों को चला रही है । सरकार वाणिज्यिक उपक्रमों को आरंभ करके व्यापार के क्षेत्र में प्रवेश कर जाती है और इससे निजी क्षेत्रों के हितों के साथ उसका विरोध हो जाता है । वाणिज्यिक उपक्रम सदैव मुकदमेबाजी में फंसे रहते हैं । धारा 80 में ऐसे मामलों के प्रतिभेद भाव करता गया है जिसका कोई औचित्य नहीं है अतः मैंने इसका विरोध किया था और उसके बाद समिति ने एक अन्य संशोधन (वर्तमान) प्रस्तुत किया ।

वर्तमान संशोधन में भी आदेश के बाद के लिये कोई गुंजाइश नहीं है । मैं चाहता हूँ कि इस धारा को इस रूप में संशोधित किया जाये -विधेयक के

पृष्ठ 9
पंक्ति 35

"वाद" के बाद "मात्र आदेश के लिये वाद को छोड़कर" अंतः स्थापित किया जाये । यदि ऐसा कर दिया जाता तो मेरा प्रयोजन पूरा हो जाता । इसलिये मैं धारा 80 में वर्तमान संशोधन का विरोध करता हूँ ।

खंड 37

(मूल अधिनियम की धारा 100)

यह उपबंध द्वितीय अपील के लिये किया गया है । इस धारा में यह व्यवस्था की गई है "जैसा इस संहिता में या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अभिव्यक्त रूप से उपबंधित है उसके सिवाय उच्च न्यायालय के अधीनस्थ किसी न्यायालय द्वारा अपील में पारित प्रत्येक डिक्री से अपील हो सकेगी, यदि उच्च न्यायालय उच्च न्यायालय/ का समाधान हो जाता है कि उस मामले में विधि का कोई सारवान प्रश्न अंतर्वलित है ।" विधेयक में अंतर्वलित विधि के उस सारवान प्रश्न का प्रतिफलतः अपील के ज्ञापन में कथन किया जायेगा । विधेयक के पृष्ठ 109 पर 'खंडों पर टिप्पण' में यह कहा गया है कि 'अतः धारा 100 का संशोधन यह उपबंध करने के लिये किया जा रहा है कि द्वितीय अपील करने का अधिकार उन्हीं मामलों तक सीमित होना चाहिये जिनमें विधि का प्रश्न अंतर्ग्रस्त है और ऐसा विधि का प्रश्न भी सारवान है ।' किंतु यह परिभाषित नहीं किया गया है अथवा बताया नहीं गया है कि सारवान से क्या तात्पर्य है । वर्तमान संशोधन

द्वितीय अपील के अधिकार को अस्तुतः समाप्त कर देगा । यह संशोधन अधीनस्थ न्यायालयों के निर्णयों की प्रवृत्ति के यथार्थपरक मूल्यांकन पर आधारित नहीं है, यह केवल विधि के सारवान प्रश्न पर ही आधारित है। हो सकता है कि द्वितीय अपील के लिये थोड़े बहुत मामला बनता हो अथवा कोई भी मामला न बनता हो । उच्चतम न्यायालय ने/ आल इंडिया रिपोर्टर, उच्चतम न्यायालय पृष्ठ संख्या 1340/ विधि के सारवान्प्रश्न का निर्वचन करके यह बताया है कि इस पद का क्या तात्पर्य है तथा यह कहा है कि यह एक अत्यंत जटिल प्रश्न है जिसके संबंध में न्यायिक निर्णयों में मतभेद है । प्रस्तावित संशोधन विधि अथवा प्रक्रिया की त्रुटि को दूर करने में बाधक होगा । इसलिये इसको यथावत् बनाये रखा जाना चाहिये । अतः मैं वर्तमान संशोधित धारा का विरोध करता हूँ ।

खंड 43

(मूल अधिनियम की धारा 115)

धारा 115 ऐसे मामले में जिसमें कि अपील नहीं की जा सकती उच्च न्यायालय को निर्णय का पुनर्विलोकन करने की शक्ति प्रदत्त करती है । यह धारा उच्च न्यायालय को अवर न्यायालय से ऐसे किसी मामले के जिसके बारे में अवर न्यायालय ने ऐसा किया हो अभिलेख को मंगवाने और ऐसी स्थिति में हस्तक्षेप करने की शक्ति प्रदान करती है जब कि अवर न्यायालय द्वारा ऐसे क्षेत्राधिकार का प्रयोग किया गया हो जो कि उसमें विधि द्वारा निहित नहीं है या वह ऐसे क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने में असफल रहा हो जो उसमें निहित है या उसने अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने में अवैध ढंग या सारवान अनियमितता से कार्य किया हो ।

यह सच है कि विधि आयोग के विचारानुसार संविधान में ऐसा कोई उपबंध नहीं है कि अनुच्छेद 227 के अंतर्गत क्षेत्राधिकार की गलतियों तथा अभिलेख के आधार पर स्पष्ट दिखाई देने वाली गलतियों को ठीक किया जा सकता है । किंतु धारा 115 का तीसरा खंड अनुच्छेद 227 के अंतर्गत नहीं आयेगा, अर्थात् जब न्यायालय कार्यवाही में अथवा अपने क्षेत्राधिकार के प्रयोग में सारवान अनियमितता करता है तो ये बातें संभवतः अनुच्छेद 227 के अंतर्गत नहीं आ सकेंगी ।

और मैं मुकदमा लड़ने वाले निर्धन लोगों के लिये महंगा भी पड़ेगा । अतः न्याय निर्णय के पुनरीक्षण के लिये आवेदन करने का विषय संहिता की पुरानी धारा 115 के अंतर्गत आयेगा । इस धारा को इस प्रकार से संशोधित करने के बजाय एक यह उपबंध किया जा सकता है कि किसी सिविल न्याय निर्णय के पुनरीक्षण संबंधी आवेदन को उस आवेदन के सुनवाई के लिये प्राप्त होने की तारीखके तीन महीने के भीतर निबटा दिया जाना चाहिये । यह प्रतिदिन देखने में आता है कि अधीनस्थ न्यायालयों के न्याय निर्णयों अथवा निर्णयों में भारी संख्या में गलतियाँ ठीक की जाति हैं और और उच्च न्यायालय अपने अवर न्यायालयों को उनकी सीमा में आबद्ध रखता है अतः इस धारा को इस प्रकार संशोधित करने के बजाय, न्याया निर्णय के पुनरीक्षण संबंधी शक्तियाँ उच्च न्यायालय के बजाय जिला न्यायाधीश को दे दी जानीचाहिये । समिति ने जिस नये संशोधन का सुझाव दिया है वह मूल धारा 115 के प्रयोजन को सिद्ध नहीं करता और नई संशोधित धारा के अंतर्गत मूल धारा 115 में अंतर्विष्ट सभी बातें पूरी तरह से नहीं आती । अतः मेरा यह दृढ़ विचार है कि धारा 115 को जो कि मुकदमा लड़ने वाले निर्धन लोगों के पक्ष में है, यथावत् रहने दिया जाये ।

आर० बी० बड़े

नई दिल्ली,
29 मार्च, 1976

जैसा कि मूल विधेयक के उद्देश्यों तथा कारणों के कथन में बताया गया है, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 में संशोधन करने वाला वर्तमान विधेयक निम्नलिखित मूलभूत बातों को ध्यानमें रखकर लाया गया है :—

"(I) कि मुकदमा करने वाले व्यक्ति को नैसर्गिक न्याय के मान्य सिद्धांतों के अनुसार उचित न्याय मिलना चाहिए;

(II) कि सिविल वादों तथा कार्यवाहियों के शीघ्र निपटाने के लिए भरसक प्रयत्न होना चाहिए जिससे कि न्याय करने में विलंब न हो;

(III) प्रक्रिया में पेचीदगी नहीं होनी चाहिए और यह यथासंभव सुनिश्चित होना चाहिये कि देश के ऐसे निर्धन वर्ग को, जिनके पास अपने मामलों की प्रतिरक्षा करने के लिए वकील रखने के साधन नहीं हैं, उचित न्याय मिले ।

इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, संहिता में सिद्धांत रूप में आधारभूत परिवर्तन करने आवश्यक हैं । विद्यमान संहिता जो ऐंग्लो-सैक्सन मूल की है, तकनीकी रूप से इतनी जटिल है कि इससे इस उद्देश्य की प्राप्ति नहीं की जा सकती । यत्र-तत्र संशोधन करना, जैसे कि वर्तमान विधेयक द्वारा किये गये हैं इस प्रयोजन के लिए पर्याप्त नहीं हैं । इस संबंध में मेरा सुझाव यह है कि हमें अपनी न्याय पंचायत प्रणाली में की गयी परिकल्पना के अनुसार अपनी न्याय प्रणाली को सुव्यवस्थित करने तथा अद्यतन बनाने का प्रयत्न करना चाहिये । इसके लिए हम समाजवादी देशों में प्रचलित न्याय प्रणाली को ध्यान में रखते हुए कार्य कर सकते हैं ।

इस बारे में मैं न्यायमूर्ति अय्यर की अध्यक्षता में गठित कानूनी सहायता संबंधी विशेषज्ञ समिति के प्रतिवेदन से कुछ अंश यहाँ उद्धृत हूँ :-

" III. न्याय के एक ऐसे साधन के रूप में जिसमें व्यक्तियों की केवल ग्राहक मानी भूमिका नहीं होती बल्कि वे स्वयं न्याय पंचायत में आयोजकों के रूप में भी कार्य करते है, ग्राम पंचायतों के कार्य

की शुक्रनीति के समय से लेकर भारतीय संविधान के समय तक प्रशंसा की गयी है और यदि उन्हें संविधान के अनुच्छेद 40 में बताये अनुसार स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करना है, तो निम्नतम स्तरों पर न्याय की व्यवस्था ग्रामीण जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा की जानी चाहिए। इस से यह हो सकता है कि न्याय प्रशासन का विकेन्द्रीकरण करने का तथा न्याय करने की शक्ति को जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों को सौंपने का विरोध किया जाये तथा उच्च वर्गों के व्यक्ति इसरे कुछ हो जायें। परन्तु, जैसा कि विधि आयोग के प्रख्यात चौदहवें प्रतिवेदन तथा न्याय पंचायतों के अध्ययन दल के प्रतिवेदन में भी निष्कर्ष निकाला गया है, इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं है कि यदि सारे देश में ये छोटी छोटी संस्थायें गठित कर दी जायें तो इस से मुकदमों की संख्या तथा उन पर होने वाले व्यय तथा उन में लगने वाले समय में कमी हो जायेगी।"(पृष्ठ 39)

"113 इंग्लैंड में जस्टिस आफ पीस, समाजवादी देशों में जन न्यायालयों तथा कई अन्य देशों में निम्नतम स्तरों पर जनता के निर्वाचित न्याय मूर्तियों ने पर्याप्त सफलतापूर्वक कार्य किया है तथा इससे हमें इस बात की प्रेरणा मिली है कि हम स्थानीय स्तर से तथा कम व्यय पर न्याय दिलाने के कार्य क्रम के अंग के रूप में उपर्युक्त न्याय व्यवस्था के समतुल्य अपनी अधिक व्यापक शक्ति प्राप्त प्राचीन भारतीय न्याय संस्थाओं को पुनरुज्जीवित करें "(पृष्ठ 40)

इसके अतिरिक्त, न्याय प्रणाली में सुधार करने की दृष्टि से न्यायाधीशों की भूमिका भी किसी प्रकार कम महत्वपूर्ण नहीं है। अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि न्यायाधीश जितने अधिक नियम निष्ठ और सक्षम होंगे, मामलों को उतनी ही तेजी से निपटाया जा सकेगा और वे जितनी अधिक उदारता बरतने वाले और अपेक्षित स्तर से नीचे के होंगे, मामलों का निर्णय करने में उतना ही अधिक विलम्ब होगा। विधि आयोग ने अपने चौवनवे प्रतिवेदन में कहा है कि :-

"53.3. पुनरावृत्ति होते हुए भी, हम इस बात पर बल देना चाहते हैं किसी भी प्रणाली की सफलता, विशेषकर न्याय-प्रणाली की सफलता, उसे चलाने वाले व्यक्तियों पर निर्भर करती है। न्याय प्रणाली के

कार्यपालन में न्यायाधीश महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं अतः यह आवश्यक है कि हम अपने कनिष्ठ न्यायाधीशों को उनके कार्य के लिए पर्याप्त रूप से तैयार करने के बारे में कुछ सिफारिशें और, इस प्रयोजन के लिए विधि आयोग ने न्यायिक प्रशिक्षण हेतु एक राष्ट्रीय अकादमी की स्थापना की सिफारिश की है ।

दूसरी ओर, न्याय प्रणाली में वकील जो भूमिका निभाते हैं, वह भी किसी अन्य की तुलना में किसी भी प्रकार से कम महत्वपूर्ण नहीं है । विधि आयोग ने अपने सौ नवें प्रतिवेदन में कहा है कि :—

"लेकिन बार एसोसिएशनों के सदस्यों का भी बहुत महत्वपूर्ण योगदान होता है तथा उनके इच्छापूर्ण और अबाध सहयोग से प्रणाली को सफलता पूर्वक चलाने में सहायता मिल सकती है ।"

लेकिन मुझे आशंका है कि उनका इच्छापूर्ण और निर्बाध सहयोग शायद ही प्राप्त किया जा सकता है क्योंकि हमारे वकीलों में एकाधिकार की प्रवृत्ति विद्यमान है जिसे इस व्यवसाय का पूर्ण राष्ट्रीयकरण करके ही समाप्त किया जा सकता है ।

जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ, विद्यमान संशोधन हमारी वर्तमान न्याय प्रणाली को यथावत् रखते हुए उसमें सुधार के लिए ईमानदारी से किए गए प्रयास हैं । परंतु जब तक स्वयं प्रणाली को ही न बदल दिया जाए तब तक ऐसा किये जा सकने की कोई संभावना नहीं है ।

जहां तक विद्यमान विधेयक का संबंध है, उस के बारे में मैं अपनी विगति टिप्पण दे रहा हूँ जो इस प्रकार है :—

खंड 27

मूल विधेयक में धारा 80 का लोप कर दिया गया था तथा भारत की लगभग सभी बार एसोसिएशनों ने इसका स्वागत किया है । परंतु मुझे अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि यह धारा फिर से जोड़ दी गई है यद्यपि इसका रूप बदल दिया गया है । मूल विधेयक के उद्देश्यों और कारणों के कथन में यह कहा गया है :—

"धारा 80 में सरकार या लोक आधिकारी के विरुद्ध वाद संस्थित करने के पूर्व अनिवार्य सूचना देने के लिये जो उपबंध है उसका लोप किया जा रहा है क्योंकि यह अनुभव किया गया है कि राज्य या लोक आधिकारी को गुलदस्ते के बारे में किसी नागरिक के मुकाबले में कोई विशेषाधिकार नहीं होना चाहिये तथा इस विषय में उसे मुकदमा करने वाले साधारण व्यक्ति से उच्चतर हैसियत नहीं मिलनी चाहिए ।"

यदि धारा 80 का लोप करने के पीछे यह सिद्धांत निहित है तो मैं इस धारा को पुनः जोड़े जाने का कोई औचित्य नहीं पाता ।

इसके अतिरिक्त विधि आयोग ने अपने सत्ताईसवें तथा चौवनवें दोनों प्रतिवेदनों में ही इस धारा के निकाले जाने की सिफारिश की है ।

खंड 28

चूंकि मेरी राय यह है कि धारा 80 का लोप कर दिया जाना चाहिये, अतः के अनुरूप धारा 82 का भी, जो कि डिक्री के निष्पादन के मामले में सरकार को कतिपय विशेषाधिकार प्रदान करती है, लोप कर दिया जाना चाहिए ।

खंड 37

मूल विधेयक में जो धारा 100 है उसका स्थान बदल दिया गया है । परंतु मेरे विचार में मूल अधिनियम की धारा 100 में किसी संशोधन की आवश्यकता नहीं है । इसके साथ ही मेरा विचार है कि कानून का प्रत्येक प्रश्न महत्वपूर्ण होता है । कानून के किसी प्रश्न को महत्वपूर्ण मानकर और अन्य किसी को महत्वहीन मानकर उनमें कोई भेदभाव नहीं किया जा सकता ।

खंड 38

लेटर्स पेटेंट के अधीन उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा जारी अपीली डिक्री के बारे में अपील करने के उपबंध को बनाये रखा जाना चाहिये ।

नई दिल्ली :
29 मार्च, 1976

वीरभद्र देव वर्मन

तीन

सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक 1974 संबंधी संयुक्त समिति ने बड़ा परिश्रम किया तथा अपना विचार-विमर्श पूरा करके इस विधेयक के संबंध में अपना प्रतिवेदन सभा में प्रस्तुत किया। यद्यपि विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय ने भी इस कार्य में काफी सहयोग दिया है, फिर भी मैं कुछ बातें कहना चाहता हूँ।

जब तक प्रक्रिया सरल, शीघ्रकारी तथा कम व्यय साध्य न हो, तब तक बाद में बनने वाले कानून चाहे कितने ही अच्छे क्यों न हों, अपना प्रयोजनक एवं उद्देश्य यद्यपि पूरा नहीं कर पायेंगे। अतः मैं इन शब्दों में, निवारण-पूर्व परामर्श करने का सुझाव देता हूँ :—

"किसी भी कार्यवाही में न्यायालय अपने स्वविवेकानुसार पक्षकारों के अटर्नियों को यह निदेश दे कि वे इन बातों पर परामर्श करने के लिए न्यायालय के समक्ष उपस्थित हों —

(1) मामलों के सरलीकरण।

(2) अभिवचनों में संशोधनों की आवश्यकता अथवा वांछनीयता,

(3) तथ्य की स्वीकृति तथा दस्तावेज, प्राप्त करने की संभावनाएं जिससे अनावश्यक प्रमाण की आवश्यकता नहीं पड़ेगी;

(4) विशेषज्ञ साक्षियों की संख्या के बारे में सीमा-निर्धारण।

(5) जूरी द्वारा विचारण की स्थिति में साक्ष्य के रूप में उपयोग हेतु निष्कर्ष जुटाने के लिये प्रारंभ में ही मास्टर को विवादक भेजने का औचित्य;

(6) ऐसे अन्य मामले जो कार्यवाही के निबटाने में सहायक हों।"

विश्व के अन्य देशों में वे निवारणपूर्व परामर्श बहुत सफल रहे हैं। उपयोग किया जाये, तो वाद की प्रारंभिक अवस्था में ही न्यायाधीश अथवा पीठासीन अधिकारी इस स्थिति में हो सकता है कि वह असंगत बातों को अलग कर सके और उन्हीं मामलों पर अपना ध्यान लगाये जिनके संबंध में पक्षकारों में आपस में मतभेद हो। वाद की प्रारंभिक अवस्था में ही मामले को पूरी तरह समझ लेने के फलस्वरूप न्यायाधीश सुनवाई के लिए और पर उस वाद को शीघ्र निपटा सकेगा। इससे वह

पक्षकारों के बीच विवादों को कम कर सकेगा और औपचारिक अथवा असंगत साक्ष्य लेने की आवश्यकता समाप्त कर सकेगा।

यद्यपि वर्तमान विधेयक के आदेश बत्तीस क में यह सिद्धांत स्वीकार किया गया है, फिर भी मेरा यह सुझाव है कि यह सभी मामलों में लागू होना चाहिए। इसके अतिरिक्त वाद की प्रकृति तथा परिस्थितियों के अनुसार जहां ऐसा करना संभव हो, न्यायालय का प्रथमतः यह प्रयास भी होना चाहिए कि वह वाद की विषय-वस्तु के बारे में पक्षकारों की बीच समझौता कराने के लिए उनकी सहायता करे।

मेरा दूसरा सुझाव यह है कि मूल अधिनियम की धारा 80 का लोप किया जाना चाहिये। संहिता की वर्तमान धारा 80 में यह अधिनियमित है कि सरकार के खिलाफ या ऐसे कार्य की बाबत, जिसके बारे में यह प्रकटतः अभिप्रेत है कि वह ऐसे लोक पदाधिकारी द्वारा अपनी पदीय हैसियत में किया गया है, लोकपदाधिकारी के खिलाफ कोई वाद तब तक संस्थित नहीं किया जायेगा जब तक कि लिखित सूचना दिये जाने के पश्चात् दो महीने की अवधि समाप्त न हो गयी हो।

इस धारा का उद्देश्य सरकार तथा सरकारी अधिकारी को कानूनी स्थिति पर विचार करने का तथा बिना मुकदमेबाजी के दावा निपटाने का, यदि ऐसी सलाह दी गई हो, अवसर प्रदान करना है।

किसी भी देश में, जहां एंग्लो-सैक्सन कानून द्वारा विद्यमान है, इस तरह का कोई उपबंध नहीं पाया जाता है। मेरा विचार है कि भारत जैसे लोकतंत्र में नागरिक तथा सरकार के बीच साधारणतया ऐसा कोई भेदभाव नहीं बरता जाना चाहिये जैसा कि धारा 80 में परिकल्पित है।

मैं इस धारा के लोप की सिफारिश करता हूँ।

नई दिल्ली
30 मार्च, 1976

एम० सी० डागा

चार

मैंने सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 1974 संबंधी संयुक्त समिति का प्रतिवेदन पढ़ा है और मेरा यह विचार है कि इसमें मुकदमेबाजी में होने वाले व्यय तथा विलंब के उन कारणों को समाप्त करने की पर्याप्त व्यवस्था नहीं की गई है जिनको समाप्तकरने के लिए यह विधेयक लाया गया है । अतः मुझे मजबूर होकर यह विमति टिप्पण देना पड़ रहा है क्योंकि विशेषकर खंड 10 , 11, 50 तथा 68 के विषय में मैं बहुमत रिपोर्ट से सहमत नहीं हूँ, यद्यपि रिपोर्ट के शेष भाग के बारे में सामान्यतः मैं बहुमत रिपोर्ट से सहमत हूँ । समिति ने इस मामले पर सभी चरणों में पूरी गंभीरता से विचार किया है और मेरा यह जो टिप्पण नीचे दिया गया है, इसको विमति टिप्पण न कहकर इस प्रतिवेदन का प्रत्युत्तर कहना अधिक उपयुक्त होगा । यह जो कुछ भी हो, अपनी बात कहने के पूर्व मैं यह कहना चाहता हूँ । कि अधिवक्ता अधिनियम, 1961 के लागू होने के बाद अब न तो कोई मुख्तयार है न कोई प्लीडर और न ही कोई बैरिस्टर है । केवल एक ही वर्ग अधिवक्ता है । अतः इस प्रतिवेदन तथा मूल अधिनियम में तदनुसार संशोधन किया जाना चाहिये और जहाँ कहीं भी 'प्लीडर' शब्द आये 'प्लीडर' के स्थान पर 'अधिवक्ता' प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए ।

खंड 10 और 11

जिला न्यायालय, उच्च न्यायालय अथवा भारत के उच्चतम न्यायालय, इन में से किसी के भी द्वारा अंतरिम आदेश पारित किये जाने के बाद वाद अथवा कार्यवाही पर पुनः विचार के फलस्वरूप पहले से मुकदमों के व्यय भार से दबे मुकदमे लड़ने वाले लोगों पर भारी व्यय तो पड़ता ही है, साथ ही इस प्रकार के वाद अथवा कार्यवाही के निपटारे में अक्सर भारी विलंब होता है ।

यदि आंकड़े लिये जाएं तो निश्चित रूप से यह प्रकट होगा कि किसी वाद या कार्यवाही में अन्तरग्रस्त पक्षकारों को वाद या कार्यवाही के पुन: विचारण के कारण असाधारण कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है । वास्तव में आवश्यक होने पर उन मामलों में वाद या कार्यवाही के पुन: विचारण के लिए आदेश जारी करना निश्चित रूप से उचित है । किन्तु यदि प्रत्येक मामले में अधीनस्थ न्यायालय को वाद या कार्यवाही के पुन: विचारण का या जब से यह वाद स्थानान्तरित किया गया था अथवा वापस लिया गया था तब से शुरू करने का विकल्प दिया जाता है, तो बहुधा ऐसे न्यायालय ऐसे मामलों को पुन: सुनवाई करने लगते हैं । अत: मेरा विचार है कि पुन: विचारण का विकल्प अधीनस्थ न्यायालयों को नहीं दिया जाना चाहिये, अपितु इसका निर्णय उच्चतर न्यायालयों, अर्थात् ज़िला न्यायालय, उच्च न्यायालय अथवा उच्चतम न्यायालय द्वारा जैसी भी स्थिति हो, किया जाना चाहिए, ताकि एक वाद या कार्यवाही को एक न्यायालय से दूसरे न्यायालय में स्थानान्तरित करते समय वे इस पहलू की ओर अधिक ध्यान दे सकें और वे अपने विचारों को उन विशेष निदेशों में शामिल कर सकें जो वे अधीनस्थ अन्तरिती न्यायालयों को देना चाहें । अत: मैं या तो उसका पुन:परीक्षण कर लूंगा या शब्दों का विरोध करता हूं जो मूल अधिनियम की धारा 24 की उप-धारा (2) में दिये गये हैं और मैं प्रतिवेदित रूप में विधेयक की धारा 25 की उप-धारा (3) के खण्ड 11 में इन शब्दों को अन्त:स्थापित करने का विरोध करता हूं ।

खण्ड 59 (मूल खण्ड 62)

किसी वाद का एक वादी जो यह जानता है कि उसका मामला इतना कमज़ोर है कि अन्ततः उसकी हार होगी, वाद दायर करने के बाद से ही अपने मामले को लम्बा करने के लिए हर तरह के ग़लत तरीके अपनाता है और इस प्रकार वह दूसरे पक्ष को अनावश्यक परेशानी पैदा करता है। अन्ततः जब वाद शुरुआ सुनवाई के लिए तैयार हो जाता है तो वादी एक ओर तो अनुपस्थित रहकर अपने वाद को खारिज होने देकर और दूसरी ओर वाद की इसकी मूल फाइल में बहाली के लिए न्यायालय में आवेदन करके प्रतिवादी के साथ शरारत करता रहता है। वह ऐसा जहां तक संभव हो सकता है करता रहता है। चूंकि उच्चतम न्यायालय और विभिन्न उच्च न्यायालयों का यह विनिर्णय है कि अधीनस्थ न्यायालयों को गुणदोष के आधार पर वाद का निपटारा करना चाहिए और वाद के किसी पक्षकार को वाद के एक पक्षकार की ओर से तकनीकी ग़लती के आधार पर निर्णीत मामले का लाभ नहीं उठाने दिया जाना चाहिए। अतः अधीनस्थ न्यायालय प्रतिवादी को कुछ मामूली खर्च दिलाकर वाद की बहाली के लिए वादियों की ऐसी याचिकाएं उदारता से स्वीकृत करते रहते हैं।

इसी प्रकार, वाद का एक ऐसा प्रतिवादी जो यह जानता है कि उसकी सफाई कमज़ोर है और अन्ततः उसकी हार ही होगी, वैसे ही तरीके अपनाता है, अर्थात् जिस दिन वाद की शुरुआ सुनवाई होनी होती है उस दिन अनुपस्थित रहता है, और इस प्रकार वादी को अपने विरुद्ध न्यायालय से एकपक्षीय डिक्री ले लेने देता है जिसमें कि उसका परीक्षा हेतु होता है। इसके तुरन्त बाद उसी दिन या अगले दिन कथित प्रतिवादी स्वयं न्यायालय में उपस्थित होता है, वादी ने जो एकपक्षीय डिक्री हासिल की थी उसे इस आधार पर रद्द करवाने की याचिका दायर

करता है कि उसे सुनवाई की तारीख के बारे में जानकारी नहीं थी अथवा ऐसे ही किसी अन्य आधार पर याचिका दायर करता है । ऐसा बार-बार किया जाता है और प्रतिवादी इस बात की परवाह नहीं करता कि उसे एकपक्षीय डिक्री रद्द करने के लिए न्यायालय द्वारा दिलाए गए खर्च का बार-बार भुगतान करना पड़ता है । विशेष रूप से जबकि वह धनी होता है और उसका विरोधी निर्धन, अथवा न्यायालय द्वारा दिलाए गए खर्च की राशि नाममात्र होती है ।

सिविल प्रक्रिया संहिता में यह एक बड़ी कमी है और इसे अवश्य दूर किया जाना चाहिए और वादी अथवा प्रतिवादी द्वारा जानबूझ कर उपस्थित न होने पर ऐसी अनुपस्थिति की नेकनीयती का पता लगाने के लिए और ऐसे मामलों के निपटारे के लिए न्यायालयों को पर्याप्त शक्तियां दी जानी चाहिये । इसके अलावा, इस मामले में भी सीमा निर्धारित की जानी चाहिए कि न्यायालय कितनी बार वादी के वाद को खारिज कर सकते हैं अथवा एकपक्षीय डिक्री को रद्द कर सकते हैं । मेरा दृढ़ मत है कि इससे वादों और कार्यवाहियों के शीघ्र निपटारे के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करने में काफी सहायता मिलेगी ।

तदनुसार, मैंने प्रस्ताव किया था कि आदेश 9 की प्रथम अनुसूची में मूल नियम 9(1) की पंक्ति 5-6 में सुनवाई के लिए " पुकार पड़ी थी, मेरी अनुपस्थिति के लिए पर्याप्त हेतु था, शब्दों के पश्चात और न्यायालय आवेदक की सद्भावना के बारे में पूरी तरह सन्तुष्ट हो जाता है" शब्द अन्त:स्थापित किये जायें ;

आदेश 9 की प्रथम अनुसूची में, नियम 9(1) की पंक्ति 8 के पश्चात, मैंने निम्नलिखित उपबन्ध जोड़ने का प्रस्ताव किया था -

"परन्तु न्यायालय ऐसे मामले में, जिसमें वादी का वाद पहले दो बार अनुपस्थित रहने के कारण खारिज कर दिया गया हो और

ऐसे दोनों ही पूर्ववर्ती अवसरों पर ऐसा खारिजी आदेश न्यायालय द्वारा रद्द कर दिया गया हो, खारिजी आदेश को रद्द करने का आदेश नहीं देगा ।" मैंने इनको अत्यावश्यक समझा था और अब भी मेरी यही राय है । इसी प्रकार मेरा विचार है कि आदेश 9 की प्रथम अनुसूची में मूल नियम 13 की, पंक्ति 5-6 में सुनवाई के लिए पुकार पड़ी थी, किसी पर्याप्त हेतु से उपसंजात होने से निवारित रहा था" शब्दों के प्रकाश और न्यायालय आवेदक की सदभावना के बारे में पूर्णतया संतुष्ट हो जाता है" शब्द अंत:स्थापित किये जा सकते है । मैंने यह सुझाव इस उद्देश्य से दिया है कि न्यायालय को चालाक मुकदमेबाजों की कपटपूर्ण चाल के मामले में स्वविवेक की पर्याप्त शक्तियां प्रदान की जा सकें ।

अन्त में, प्रतिवेदित रूप में खण्ड 59 के उप-खण्ड (पांच के पश्चात् नियम 13 का निम्नलिखित अतिरिक्त परन्तुक जोड़ा जाना चाहिए -"पांच (क) परन्तु यह और कि न्यायालय किसी ऐसे मामले में, जिसमें पहले दो बार एकपक्षीय डिक्री पारित की गई हो और ऐसी एकपक्षीय डिक्री न्यायालय द्वारा ऐसे दोनों पूर्ववर्ती अवसरों पर रद्द कर दी गई हो, एकपक्षीय डिक्री को रद्द करने का आदेश नहीं देगा ।"

इसी प्रकार किसी वाद अथवा कार्यवाही से सम्बद्ध पक्षकार, जो यह अच्छी तरह जानते हैं कि वे आगे बढ़कर कभी भी मुकदमा नहीं जीत सकते क्योंकि उन्होंने अपने अभिवचनों में जो आधार दिये हैं वे ठोस नहीं हैं, अक्सर मुकदमे को लम्बी अवधि तक खींचने तथा दूसरे पक्ष को परेशान करने के उद्देश्य से ही प्राय: बार बार मामले को स्थगित करवाने की युक्ति अपनाते हैं। ऐसी चाल बाजी करने वाले में पक्षकार मामले को स्थगित करवाने के लिये बहुत से सारहीन आधार देते हैं जिनमें वे अपने अधिवक्ताओं को गवाहों अथवा न्यायालय में उपस्थित होने में उनकी असमर्थतता का बहाना भी करते हैं। ऐसे सभी अनुचित कामों को रोकने के लिये समिति ने आदेश 17 की पहली अनुसूची के नियम 1 के उपनियम (2) का परन्तुक (घ) स्वीकार किया है। किन्तु मेरे विचार से अब भी इसमें कमी रह गई है और यदि 'स्थगन के लिये आवेदन करने वाला पक्षकार समय पर दूसरा प्लीडर नहीं रख सकता था' शब्दों के स्थान पर निम्नलिखित शब्द रख जाये तो परन्तुक को और अच्छा बनाया जा सकता है :

> 'स्थगन के लिये आवेदन करने वाले पक्षकार के अधिवक्ता की रुग्णता अथवा असमर्थता इतनी अकस्मात है कि पक्षकार समय पर कोई अन्य अधिवक्ता नहीं रख सकता था,'

इसके अतिरिक्त, मेरा यह दृढ़ मत है कि संसद् को ऐसे स्थगनों की कोई निश्चित संख्या निर्धारित करनी चाहिये और इस प्रयोजनार्थ आदेश 17 की पहली अनुसूची के नियम 1 के उपनियम (2) के अंतर्गत परन्तुक (घ) के बाद एक और परन्तुक (घघ) जोड़ा जाना चाहिये जो इस प्रकार हो :-

> '(घघ) ऐसे अपवादात्मक मामलों में भी किसी पक्षकार को दो बार से अधिक स्थगन मंजूर नहीं किये जायेंगे।'

जैसा कि पहले संशोधन के रूप में प्रस्तावित किया था। इससे कई श्रेणियों की पूर्ति होगी। वरिष्ठ अधिवक्ताओं के पास बहुत अधिक मामले नहीं रह पायेंगे। युवा अधिवक्ताओं को उभरने का अवसर मिलेगा मुकदमे में फंसे लोगों को असुविधा पैदा करने वाले विलम्ब तथा सुनवाई के बार बार स्थगित होने से न्यायालय का जो समय नष्ट होता उस पर काफी नियंत्रण हो सकेगा।

साथ ही मैं यह भी बताना चाहता हूं कि विपक्ष के प्रत्यर्थी पक्षकार यह जानते हुए भी कि उनमें कोई सार नहीं है प्राय: प्रारम्भिक आपत्तियां उनका उद्देश्य ही यह होता है कि प्रत्येक चरण में विलम्ब हो। ऐसे सभी मामलों में निरुत्साहकारी खर्च [illegible] की व्यवस्था की जानी चाहिये जिसे न्यायालय वसूल करे।

भारत जैसे निर्धन देश में, और बल्कि प्रत्येक लोकतांत्रिक देश में जहां तक संभव हो लोगों को प्रक्रियात्मक कानून की जटिलता से मुक्त किया जाये ताकि वे वकीलों की सहायता के बिना अपने अधिकार की रक्षा कर सकें। अतएव नियम बहुत आसान होने चाहिये। किन्तु हमारी सिविल प्रक्रिया संहिता इतनी जटिल है कि वकील और न्यायाधीश भी बड़ी कठिनाई से इसे समझ सकते हैं। विशेषरूप से मैं दस्तावेज की जांच करने और उन्हें प्रस्तुत करने विषयक आदेशों और नियमों में किये गये उपबंधों का उल्लेख करना चाहता हूं। दस्तावेजों के प्रकटीकरण उनके बारे में परि प्रश्न करने, शपथ पत्र के साथ आवेदन फाइल करने, दूसरे पक्ष द्वारा प्रतिशपथपत्र देने और उसके बाद सुनवाई जैसी विभिन्न अवस्थाओं के कारण रोग की अपेक्षा उपचार अधिक जटिल होगया है। इन सभी प्रक्रियाओं में काफी समय और धन लगजाता है। इससे भी बुरी बात यह है कि इन जटिल प्रक्रियाओं के कारण वकील की सहायता लेनी आवश्यक हो जाती है। मेरा विचार है कि इस संबंध में उपबंधों को और आसान बनाया जा सकता था।

इन शब्दों के साथ मैं सभा के विचारार्थ अपना टिप्पण प्रस्तुत करता हूं।

नई दिल्ली :

30 मार्च, 1976

द्विजेन्द्रलाल सेन गुप्त

पांच

यह बहुत जरूरी था कि न्यायिक प्रक्रिया और न्यायालय द्वारा मामले पर विचार करने की प्रक्रियाओं को आसान बनाया जाता, न्याय प्रशासन तथा वादों और मामलों को अंतिम रूप से निपटाने में विलम्बकारी कारणों को दूर किया जाता। न्याय को सस्ता और अविलम्ब बनाया जाता। प्रक्रिया तक कानूनों के बारे में बार बार किये गये संशोधनों और विभिन्न वरिष्ठ न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों के कारण उत्पन्न असंगतियां और जटिलताओं को ठीक किया जाता, न्यायालय की विचारण सुविधाओं को ग्राम स्तर तक ले जाया जाता, न्यायाधीशों की नियुक्ति की निर्वाचन विधि से करने की व्यवस्था की जाती और न्यायपालिका को संघर्षरत लोगों की बदलती हुई आकांक्षाओं के प्रति उत्तरदायी और संवेदनशील बनाया जाता।

2. सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 1974 और विधेयक में सुझाये गये संशोधनों पर दोनों सभाओं की संयुक्त समिति का प्रतिवेदन विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय द्वारा उद्देश्यों और कारणों के कथन में दिये गये सीमित उद्देश्य के संदर्भ में भी लोगों की आशाओं के अनुरूप नहीं है।

सिविल प्रक्रिया संहिता के उपबंधों में परिवर्तन लाने के लिये आधार तथा मार्गदर्शी सिद्धान्त यदि पूरी तरह से नहीं तो मुख्य रूप से, सरकार की मांग पर विधि आयोग द्वारा समय समय पर की गई सिफारिशों से लिये गये हैं। किन्तु विधि आयोग के उद्देश्यों की अपनी सीमाओं के कारण, यह संशोधनकारी विधेयक मुकदमों में फंसे लाखों लोगों, की समस्याओं के बारे में न्यूनतम अपेक्षाओं को भी पूरा करने में असमर्थ रहा है, मुकदमों में फंसे इन लोगों में अधिकांश उत्पादनकारी कार्य कलाप से संबंधित वर्गों के है। इनमें से अधिकांश अशिक्षित या अल्पशिक्षित तथा जटिल कानूनी प्रक्रिया व उसके निहितार्थों से अनभिज्ञ हैं। साथ ही इनके पास इतने साधन नहीं हैं कि वे दूर दूर स्थित न्यायालयों तक जाने के लिये बार बार यात्रायें कर सकें जिसमें कि उनकी उत्पादनकारी शक्ति नष्ट होती है।

न्यायालय की लम्बे समय तक चलने वाली कार्यवाहियों तथा उनकी निरंतर बढ़ती हुई जटिलताओं को तथा असीमित अप्रत्याशित और तबाह कर देने वाले व्यय को भी वे कम नहीं कर सकते साथ ही न्यायपीठ के यंत्रवत और उदासीन रवैये और वकीलों में फीस लेने की कभी संतुष्ट न होने वाली प्रवृत्ति से निपटने में भी वे असमर्थ रहते हैं ।

बहुत से साक्षियों का साक्ष्य लिया गया, अनेक संशोधन प्रस्तावित किये गये और उन पर चर्चा की गई, विधेयक में प्रस्तावित संशोधनों में कई परिवर्तन किये गये । यह मानते हुए कि दोनों सभाओं की संयुक्त समिति ने पर्याप्त प्रयास और कार्य किया है, यह कहना पड़ता है कि संशोधनकारी विधेयक न्याय प्रशासन और न्यायिक प्रक्रिया की आधारभूत समस्याओं के संबंध में संक्षेप में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं ला सका है और इस प्रकार स्थिति यथापूर्व बनी रह गई है । ।

विधेयक में शामिल किये गये विलम्ब और खर्च कम करने की दृष्टि से किये गये कई संशोधनों की महत्वपूर्ण बात यह है कि इस देश की न्यायिक व्यवस्था की बुराइयों के लिये मुकदमों में फंसे लोगों को जिम्मेदार बनाया गया है और उनके बहुत से अधिकारों और बचाव के क्षेत्र को संकुचित कर दिया गया है और उन पर और अधिक जिम्मेदारियां तथा भार डाल दिया गया है ताकि वे या तो न्याय की भूख शान्त करने की कोशिश में लगे रहें या न्यायालय छोड़कर चले जायें ।

अपवादात्मक व्यवस्थाओं के कारण न्यायिक उपचारों की स्थिति कमजोर हुई है और अतत: मुकदमों में फंसे सामान्य लोग प्रस्तावित उपायों के शिकार हो गये हैं । साधन सम्पन्न और समर्थ व्यक्ति न्यायिक स्पर्धा में अपने से कमजोर पक्ष की तुलना में ज्यादा देर तक टिक कर अनु लाभ उठा सकता है ।

वाद निपटाने में होने वाले विलंब के कारणों पर विचार करने के दौरान न्यायालयों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि न करने, विद्यमान रिक्त स्थानों को न भरने के लिए सरकार की जिम्मेदारी और साथ ही न्यायालयों तथा वकीलों की जिम्मेदारी और सबसे पहले तो न्यायिक प्रशासन की विद्यमान प्रणाली की सभी कमियों के लिए जिम्मेदारी, समुचित रूप से निर्धारित नहीं की गई है ।

वर्तमान व्यवस्था तथा विद्यमान स्थितियों को स्वीकार करते हुए भी, यहां प्रस्तावित परिवर्तनों के कुछ उदाहरण दिये जा सकते हैं ।

डिक्री धन पर ब्याज की दर बढ़ाकर डिक्रीधारियों को, जो कई मामलों में अपने प्रतिपक्षियों को इसलिए न्यायालयों में खींच ले जाता है कि निर्णीत ऋणियों के पास जो थोड़ी बहुत सम्पत्ति शेष है उस पर भी कब्जा कर लिया जाये, लाभ पहुँचाया गया है (खंड 13) ।

कोई सट्टेबाज मूल वाद में असली दावे रखने वाले अपने प्रतिपक्षी को मुकदमा जीतकर या उसके साक्षियों को नष्ट करके हटाने में सफल हो जाने पर विधेयक के उपबंधों को लागू करता कर उसकी शेष सम्पत्ति को अर्जित कर सकता है (खंड 24) ।

वाद निपटाने में होने वाले विलंब को, जो कि वर्तमान व्यवस्था में स्वाभाविक है, कम से कम करने का भार मुकदमेबाजों पर डाल दिया गया है (खंड 15 तथा 21) ।

मूल विधेयक में (धारा 80) सरकार को एक पक्ष बनाने हेतु मुकदमा दायर करने से पहले दो मास का नोटिस देने का लोप किया गया था किंतु इसके विरुद्ध वाद दायर करने के लिए उन्हीं शर्तों को फिर से लागू करने की सरकार की नीति खेद से परे ही नहीं आश्चर्यजनक भी है ।

नये संशोधनों में किये गये प्रस्तावों के अनुसार अपीलों, चाहे पहली अपील हो या बाद की अपीलें, क्षेत्र को नियन्त्रित करना एक गंभीर मामला है (खंड 33, 37 और 40) ।

अनभिज्ञ, निरक्षर तथा उदासीन जनजातीय लोगों और आदिवासियों तथा ऐसी ही श्रेणियों के लोगों के मामले में प्रक्रिया के शिकार होने की संभावना पर पूरी तरह से विचार नहीं किया गया है ।

सामाजिक उत्पीड़न और शोषण के शिकार लोगों को दी जाने वाली कानूनी सहायता के क्षेत्र का पर्याप्त विस्तार नहीं किया गया है ।

गरीब व्यक्तियों को निःशुल्क मुकदमा लड़ने संबंधी सुविधायें न्यूनतम कर दी गई हैं ।

पुरस्कार पर

मैं विधि, न्याय और और कम्पनी कार्य मंत्रालय के/सिविल मुकदमों के लिए एक समान और कम दरों पर न्यायालय फीस की व्यवस्था करने के राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों को दिये गये निदेशात्मक सिद्धांतों को अंतिम रूप में विधेयक में शामिल करने का स्वागत करता हूँ किंतु साथ ही मुझे विवश होकरकहना पड़ रहा है कि हमारे देश का न्यायिक प्रशासन अभी भी न्यायिक व्यापार की संस्था बना हुआ है ।

नई दिल्ली
31 मार्च, 1976

दिनेश जोरदार

का शुद्धिपत्र

पृष्ठ 3, पंक्ति 15, " धारा 21 की उस धारा" के स्थान पर "धारा 21 उस धारा" पढ़ें ।

पृष्ठ 5, पंक्ति 10 और 11, "(क) यदि अभिलेख का अनुवाद भी समन जारी करने वाले न्यायालय की भाषा हिन्दी है तो हिन्दी में; या" के स्थान पर "(क) यदि समन जारी करने वाले न्यायालय की भाषा हिन्दी है तो अभिलेख का अनुवाद भी हिन्दी में ; या " पढ़ें ।

पृष्ठ 5, पंक्ति 12, "वही" के स्थान पर "तो" पढ़ें ।

पृष्ठ 6, पंक्ति 8, "निम्न के और अभियोजन" के स्थान पर "निम्नलिखित को और अग्रसर करने" पढ़ें ।

पृष्ठ 8, पंक्ति 25, "मल" के स्थान पर "मूल" पढ़ें ।

पृष्ठ 11, पंक्ति 17, "किया जाएगा उपधारा (1)" के स्थान पर "किया जाएगा कि उपधारा (1)" पढ़ें ।

पृष्ठ 11, पंक्ति 18, "कि" का लोप करें ।

पृष्ठ 21, पंक्ति 34, "है" का लोप करें ।

पृष्ठ 32, पंक्ति 37 पार्श्वशीर्ष में "प्रतिदावी सफल होने पर प्रतिवादी अनुतोष" के स्थान पर "प्रतिवादी को अनुतोष" पढ़ें ।

पृष्ठ 33, पंक्ति 15, " तो" का लोप करें ।

पृष्ठ 35, पंक्ति 12 पार्श्वशीर्ष में, "11क" के स्थान पर "11 का" पढ़ें ।

पृष्ठ 42, पंक्ति 12 और 13, "करने के लिए निकाल सकेगा" के स्थान पर "करने के लिए कमीशन निकाल सकेगा" पढ़ें ।

पृष्ठ 49, पंक्ति 23, "सचना" के स्थान पर "सूचना" पढ़ें ।

पृष्ठ 54, पंक्ति 1, "प्रतोत" के स्थान पर "प्रतीत" पढ़ें ।

पृष्ठ 54, पंक्ति 22, "उदृष्टहीत" के स्थान पर "उद्ग्राहीत" पढ़ें ।

पृष्ठ 56, पंक्ति 5, "न्यायन्य" के स्थान पर "न्यायालय" पढ़ें ।

पृष्ठ 56, पंक्ति 32, "ईष्या" के स्थान पर "ईप्सा" पढ़ें ।

पृष्ठ 94, पंक्ति 7, "(विधुर विधवा विच्छिन्न-विवाह;" के स्थान पर "विधुर (विधवा) विच्छिन्न-विवाह" पढ़ें ।

पृष्ठ 97, पंक्ति 7, "वचारण" के स्थान पर "विचारण" पढ़े ।

पृष्ठ 98, पंक्ति 9, "ऐसे से किया जाएगा" के स्थान पर "ऐसे किया जाएगा" पढ़ें ।

[कोड आफ सिविल प्रोसीजर (अमेंडमेंट) बिल, 1974 का हिन्दी अनुवाद]

सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 1974

[जैसा संयुक्त समिति ने रिपोर्ट किया है]

[जिन शब्दों के पार्श्व में या नीचे रेखाएं खिची हैं वे समिति द्वारा सुझाए गए संशोधन हैं; जहां तारक चिन्ह हैं वहां लोप किया गया है]

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 और परिसीमा अधिनियम, 1963 का और संशोधन करने के लिए विधेयक

भारत गणराज्य के सत्ताईसवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :—

अध्याय 1

प्रारम्भिक

संक्षिप्त नाम और प्रारम्भ ।

1. (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1976 है ।

(2) यह उस तारीख को प्रवृत होगा जो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे और इस अधिनियम के विभिन्न उपबन्धों के लिए विभिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी और इस अधिनियम के प्रारम्भ के प्रति या सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1976 के प्रारम्भ के प्रति किसी उपबन्ध में किसी निर्देश का यह अर्थान्वयन किया जाएगा कि वह उस उपबन्ध के प्रवृत होने के प्रति निर्देश है ।

अध्याय 2

धाराओं का संशोधन

धारा 1 का संशोधन

2. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 में (जिसे इसमें इसके पश्चात् मूल अधिनियम कहा गया है) धारा 1 में उपधारा (3) के स्थान पर निम्नलिखित उपधाराएं रखी जाएंगी, अर्थात्:— 1908 का 5

'(3) इसका विस्तार, निम्नलिखित के सिवाय सम्पूर्ण भारत पर है —

(क) जम्मू-कश्मीर राज्य ;

* * * * *

(ख) नागालैण्ड राज्य और जनजाति क्षेत्र :

परन्तु यह कि राज्य सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, इस संहिता के ऐसे उपबन्धों का या उनमें से किसी का विस्तार, यथास्थिति, सम्पूर्ण नागालैण्ड राज्य या ऐसे जनजाति क्षेत्र या उसके किसी भाग पर ऐसे अनुपूरक, आनुषंगिक, या पारिणामिक उपान्तरों सहित, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएं ; कर सकेगी ।

स्पष्टीकरण—इस खण्ड में, "जनजाति क्षेत्र" से वे राज्य क्षेत्र अभिप्रेत हैं जो 21 जनवरी, 1972 के ठीक पहले संविधान की षष्ठम अनुसूची के पैरा 20 में यथानिर्दिष्ट आसाम के जनजाति क्षेत्र में सम्मिलित थे * * *

(4) अमीनदीवी द्वीपसमूह और पूर्वी गोदावरी, पश्चिमी गोदावरी और आन्ध्र प्रदेश राज्य में विशाखापत्तनम् एजेंसियों और लक्कादीव संघ राज्य-क्षेत्र के सम्बन्ध में, इस संहिता के लागू होने का कोई प्रतिकूल प्रभाव, यथास्थिति, ऐसे द्वीपसमूह, एजेंसियों या ऐसे संघ राज्यक्षेत्र में इस संहिता के लागू होने के सम्बन्ध में तत्समय प्रवृत्त किसी नियम या विनियम के लागू होने पर नहीं पड़ेगा ।, ।

धारा 2 का संशोधन ।

3. मूल अधिनियम की धारा 2 में—

(i) खण्ड (2) में "धारा 47 या" शब्दों और अंकों का लोप किया जाएगा ;

(ii) खण्ड 17 के उपखण्ड (ख) में "भारतीय सिविल सेवा" शब्दों के स्थान पर "अखिल भारतीय सेवा" शब्द रखे जाएंगे ।

धारा 8 का संशोधन ।

4. मूल अधिनियम की धारा 8 में "77 और 155 से लेकर 158" अंक और शब्दों के स्थान पर "77 ,157 और 158" अंक और शब्द रखे जाएंगे ।

धारा 9 का संशोधन ।

5. मूल अधिनियम की धारा 9 के स्पष्टीकरण को स्पष्टीकरण 1 के रूप में पुनः-संख्यांकित किया जाएगा और इस प्रकार पुनःसंख्यांकित स्पष्टीकरण 1 के पश्चात् निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्:—

"**स्पष्टीकरण** 2—इस धारा के प्रयोजनों के लिए, यह बात महत्वहीन है कि क्या स्पष्टीकरण 1 में निर्दिष्ट पद के लिए कोई फीस है या नहीं या ऐसा पद किसी विशेष स्थान से जुड़ा है या नहीं ।" ।

धारा 11 का संशोधन ।

6. मूल अधिनियम की धारा 11 में, स्पष्टीकरण 6 के पश्चात् निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

"**स्पष्टीकरण** 7—इस धारा के उपबन्ध किसी डिक्री के निष्पादन के लिए कार्यवाही को लागू होंगे और इस धारा में किसी वाद, विवाधक या

पूर्ववर्ती वाद के प्रति निर्देशों का अर्थ क्रमशः उस डिक्री के निष्पादन के लिए कार्यवाही, ऐसी कार्यवाही में उठने वाले प्रश्न और उस डिक्री के निष्पादन के लिए पूर्ववर्ती कार्यवाही के प्रति निर्देशों के रूप में लगाया जाएगा ।

स्पष्टीकरण 8—कोई विवाधक जो सीमित अधिकारिता वाले किसी न्यायालय द्वारा, जो ऐसा विवाधक विनिश्चित करने के लिए सक्षम है, सुना गया और अन्तिम रूप से विनिश्चित किया जा चुका है, किसी पश्चात्वर्ती वाद में पूर्व-न्याय के रूप में इस बात के होते हुए भी प्रवृत होगा, कि सीमित अधिकारिता वाला ऐसा न्यायालय ऐसे पश्चात्वर्ती वाद का या उस वाद का जिसमें ऐसा विवाद्यक पीछे उठाया गया है विचारण करने के लिए सक्षम नहीं था ।" ।

* * * *

धारा 20 का संशोधन ।

7. मूल अधिनियम की धारा 20 में,—

(i) स्पष्टीकरण 1 का लोप किया जाएगा, और

(ii) "स्पष्टीकरण 2" शब्द और अंकों के स्थान पर "स्पष्टीकरण" शब्द रखा जाएगा ।

धारा 21 का संशोधन ।

8. मूल अधिनियम की धारा 21 की उस धारा की उपधारा (1) के रूप में पुनः संख्यांकित की जाएगी और इस प्रकार पुनः संख्यांकित उपधारा (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपधाराएं अन्तःस्थापित की जाएंगी ; अर्थात्:—

"(2) किसी न्यायालय की अधिकारिता की धन संबन्धी परिसीमा के प्रति निर्देश करते हुए उस न्यायालय की सक्षमता के बारे में कोई आक्षेप किसी अपीली या पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा तब तक अनुज्ञात नहीं किया जाएगा जब तक ऐसा आक्षेप प्रथम बार के न्यायालय में शीघ्रतम संभव अवसर पर और उन सब मामलों में, जिसमें विवाद्यक स्थिर किए जाते हैं, ऐसे स्थिरीकरण के समय या तत्पूर्व न किया गया हो, और जब तक कि परिणामस्वरूप न्याय की निष्फलता न हुई हो ।

(3) किसी निष्पादन-न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के प्रति निर्देश से उसकी सक्षमता पर कोई आक्षेप अपीली या पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा तब तक अनुज्ञात नहीं किया जाएगा जब तक ऐसा आक्षेप निष्पादन-न्यायालय में यथासंभव सर्वप्रथम अवसर पर न किया गया हो और जब तक कि परिणामस्वरूप न्याय की निष्फलता न हुई हो ।" ।

नई धारा 21क का अन्तःस्थापन ।

9. मूल अधिनियम की धारा 21 के पश्चात् निम्नलिखित धारा अन्तःस्थापित की जाएगी, अर्थात् :—

वाद लाने के स्थान के बारे में आक्षेप पर डिक्री को अपास्त करने के लिए वाद का वर्जन ।

"21क. कोई वाद उन्हीं पक्षकारों के बीच या उन पक्षकारों के बीच जिनके अधीन वे या उनमें से कोई दावे करते हैं उसी हक के अधीन मुकदमेबाजी करते हुए, वाद लाने के स्थान के बारे में किसी आक्षेप के आधार पर, किसी पूर्व वाद में पारित डिक्री की विधिमान्यता को प्रश्नगत करते हुए नहीं लाया जाएगा ।

स्पष्टीकरण—"पूर्व वाद" पद से वह वाद अभिप्रेत है जो उस वाद के, जिसमें डिक्री की विधिमान्यता का प्रश्न उठाया गया है, विनिश्चय के पूर्व विनिश्चित हो चुका है, चाहे पहले विनिश्चित किया गया वाद प्रश्नगत वाद से पूर्व संस्थित किया गया हो या नहीं ।" ।

धारा 24 का संशोधन ।

10. मूल अधिनियम की धारा 24 में,—

(i) उपधारा (2) में "जो ऐसे वाद का तत्पश्चात् विचारण करता है" शब्दों के स्थान पर "जो ऐसे वाद या कार्यवाही का तत्पश्चात् विचारण करता है या उसे निपटाता है" शब्द रखे जाएंगे ;

(ii) उपधारा (3) के स्थान पर निम्नलिखित उपधारा रखी जाएगी, अर्थात् :—

"(3) इस धारा के प्रयोजनों के लिए,—

(क) अपर और सहायक न्यायाधीशों के न्यायालय, जिला न्यायालय के अधीनस्थ समझे जाएंगे ;

(ख) "कार्यवाही" के अन्तर्गत किसी डिक्री या आदेश के निष्पादन के लिए कार्यवाही है ;' ;

(iii) उपधारा (4) के पश्चात् निम्नलिखित उपधारा अन्तःस्थापित की जाएगी, अर्थात् :—

"(5) कोई वाद या कार्यवाही इस धारा के अधीन उस न्यायालय से अन्तरित की जा सकेगी जिसे उसका विचारण करने की अधिकारिता नहीं है ।" ।

* * * * *

धारा 25 के स्थान पर नई धारा का रखा जाना ।

11. मूल अधिनियम की धारा 25 के स्थान पर निम्नलिखित धारा रखी जाएगी, अर्थात्:—

उच्चतम न्यायालय की वादों आदि को अन्तरण करने की शक्ति ।

"25. (1) किसी पक्षकार के आवेदन पर और पक्षकारों को सूचित करने के पश्चात् और उसमें से ऐसे पक्षकारों को सुनने के बाद जो सुनवाई की वांछा करते हों, यदि उच्चतम न्यायालय का किसी भी प्रक्रम पर यह समाधान हो जाता है कि न्याय की प्राप्ति के लिए इस धारा के अधीन आदेश देना समीचीन होगा तो वह यह निदेश देगा कि किसी राज्य में किसी उच्च न्यायालय या अन्य सिविल न्यायालय से किसी अन्य राज्य के किसी उच्च न्यायालय या अन्य सिविल न्यायालय को कोई वाद, अपील या अन्य कार्यवाही अन्तरित कर दी जाए ।

(2) इस धारा के अधीन प्रत्येक आवेदन समावेदन के द्वारा किया जाएगा जो शपथपत्र द्वारा अनुसमर्थित होगा ।

(3) वह न्यायालय जिसको ऐसा वाद, अपील या अन्य कार्यवाही अन्तरित की गई है अन्तरण आदेश में दिए गए विशेष निदेशों के अधीन रहते हुए, या तो उसका पुनःविचारण करेगा या उस प्रक्रम से आगे जिस पर वह उसे अंतरित किया गया था, कार्यवाही करेगा ।

(4) इस धारा के अधीन आवेदन को खारिज करते हुए उच्चतम न्यायालय की यदि यह राय हो कि आवेदन तुच्छ या तंग करने वाला था तो वह आवेदक को यह आदेश दे सकता है कि वह उस व्यक्ति को जिसने आवेदन का विरोध किया था प्रतिकर के रूप में दो हजार रुपए से अनधिक की ऐसी राशि संदत्त करेगा जो न्यायालय मामले की परिस्थितियों में उचित समझे ।

(5) इस धारा के अधीन अन्तरित वाद, अपील या अन्य कार्यवाही को लागू होने वाली विधि वह विधि होगी जो वह न्यायालय, जिसमें वह वाद, अपील या अन्य कार्यवाही मूलतः संस्थित की गई थी, ऐसे वाद, अपील या अन्य कार्यवाही को लागू करता ।" ।

धारा 28 का संशोधन ।

12. मूल अधिनियम की धारा 28 में उपधारा (2) के पश्चात् निम्नलिखित उपधारा अन्तःस्थापित की जाएगी, अर्थात्:—

"(3) जहां कि किसी दूसरे राज्य में तामील के लिए भेजे गए समन की भाषा, उपधारा (2) में निर्दिष्ट अभिलेख की भाषा से भिन्न है वहां उस उपधारा के अधीन भेजे गए अभिलेख के साथ,—

(क) यदि अभिलेख का अनुवाद भी समन जारी करने वाले न्यायालय की भाषा हिन्दी है तो हिन्दी में, या

(ख) यदि ऐसे अभिलेख की भाषा हिन्दी या अंग्रेजी से भिन्न है वहां हिन्दी या अंग्रेजी में,

भेजा जाएगा ।" ।

धारा 34 का संशोधन ।

13. मूल अधिनियम की धारा 34 की उपधारा (1) में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

'परन्तु जहां कि * * * * न्यायनिर्णीत राशि के संबंध में दायित्व किसी वाणिज्यिक संव्यवहार से उद्भूत हुआ था वहां, ऐसे अतिरिक्त ब्याज की दर छह प्रतिशत वार्षिक दर से अधिक हो सकती है, किन्तु ऐसी दर ब्याज की संविदात्मक दर से या जहां कोई संविदात्मक दर नहीं है वहां उस दर से अधिक नहीं होगी जिस पर वाणिज्यिक संव्यवहार के संबंध में राष्ट्रीयकृत बैंक धन उधार या अग्रिम देते हैं ।

स्पष्टीकरण 1—इस उपधारा में "राष्ट्रीयकृत बैंक" से बैंककारी कम्पनी (उपक्रमों का अर्जन और अन्तरण) अधिनियम, 1970 में यथापरिभाषित तत्स्थानी नया बैंक अभिप्रेत है ।

1970 का 5

स्पष्टीकरण 2—इस धारा के प्रयोजन के लिए, कोई संव्यवहार वाणिज्यिक संव्यवहार है, यदि वह दायित्व उपगत करने वाले पक्षकार के उद्योग, व्यापार या कारबार से संबन्धित है ।'।

धारा 35क का संशोधन ।

14. मूल अधिनियम की धारा 35क में,—

(i) उपधारा (1) में, "अपील अपवर्जित है" शब्दों के स्थान पर "अपील या पुनरीक्षण अपवर्जित है" शब्द रखे जाएंगे ;

(ii) उपधारा (2) में "एक हजार रुपए" शब्दों के स्थान पर "तीन हजार रुपए" शब्द रखे जाएंगे ।

नई धारा 35ख का अन्तःस्थापन ।

15. मूल अधिनियम की धारा 35क के पश्चात् निम्नलिखित धारा अन्तःस्थापित की जाएगी, अर्थात् :—

बिलंब कारित करने के लिए खर्चा ।

"35ख. (1) यदि किसी वाद की सुनवाई के लिए या उसमें कोई कार्यवाही करने के लिए नियत किसी तारीख को, वाद का कोई पक्षकार—

(क) कार्यवाही करने में, जो वह उस तारीख को इस संहिता द्वारा या इसके अधीन करने के लिए अपेक्षित था, असफल रहता है; अथवा

(ख) ऐसी कार्यवाही करने के लिए यह साक्ष्य पेश करने के लिए या किसी अन्य आधार पर स्थगन अभिप्राप्त करता है,

तो न्यायालय ऐसे कारणों के आधार पर जो लेखबद्ध किए जाएंगे ऐसे पक्षकार से दूसरे पक्षकार को ऐसे खर्चों का, जो न्यायालय की राय में दूसरे पक्षकार को उसके द्वारा उस तारीख को न्यायालय में हाजिर होने में उपगत व्ययों की बाबत प्रतिपूर्ति करने के लिए युक्तियुक्त रूप से पर्याप्त हों, संदाय करने की अपेक्षा करने वाला आदेश कर सकेगा और ऐसे खर्चों का संदाय ऐसे आदेश की तारीख की ठीक आगामी तारीख को, निम्न के और अभियोजन के लिए पूर्ववर्ती शर्त होगा—

(क) वादी द्वारा वाद, जहां वादी को ऐसे खर्चों का संदाय करने का आदेश दिया गया था;

(ख) प्रतिवादी द्वारा प्रतिरक्षा, जहां प्रतिवादी को ऐसे खर्चों का संदाय करने के लिए आदेश दिया गया था ।

स्पष्टीकरण—जहां प्रतिवादियों या प्रतिवादियों के समूहों द्वारा पृथक्-पृथक् प्रतिरक्षाएं पेश की गई हैं वहां ऐसे खर्चों का संदाय ऐसे प्रतिवादियों या प्रतिवादियों के समूहों द्वारा, जिन्हें न्यायालय द्वारा ऐसे खर्चों का संदाय करने का आदेश दिया गया है, प्रतिरक्षा को और अग्रसर करने के लिए पूर्ववर्ती शर्त होगी ।

(2) उपधारा (1) के अधीन खर्चे, जिनका संदाय किए जाने का आदेश किया गया है यदि उनका संदाय कर दिया गया है, तो उस वाद में पारित डिक्री में अधिनिर्णीत किए गए खर्चों में सम्मिलित नहीं किए जाएंगे किन्तु यदि ऐसे खर्चों का संदाय नहीं किया गया है तो ऐसे खर्चों की रकम और उन व्यक्तियों के नाम और पते, जिनके द्वारा ऐसे खर्चे संदेय हैं, उपदर्शित करने वाला पृथक् आदेश किया जाएगा और ऐसे तैयार किया गया आदेश ऐसे व्यक्तियों के विरुद्ध निष्पादनीय होगा ।"।

धारा 36 के स्थान पर नई धारा का रखा जाना । आदेशों को लागू होना

16. मूल अधिनियम की धारा 36 के स्थान पर निम्नलिखित धारा रखी जाएगी, अर्थात् :—

"36. इस संहिता के डिक्रियों के निष्पादन से सम्बन्धित उपबंधों के बारे में (जिनके अन्तर्गत डिक्री के अधीन संदाय से संबंधित उपबन्ध भी हैं) यह समझा जाएगा कि वे आदेशों के निष्पादन को (जिसके अन्तर्गत आदेश के अधीन संदाय भी हैं) वहां तक लागू हैं जहां तक कि वे उन्हें लागू किए जा सकेंगे ।"।

धारा 37 का संशोधन ।

17. मूल अधिनियम की धारा 37 के अन्त में निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"**स्पष्टीकरण**—प्रथम बार के न्यायालय की डिक्री का निष्पादन करने की अधिकारिता केवल इस आधार पर समाप्त नहीं हो जाती कि उस वाद के संस्थित किए जाने के पश्चात् जिसमें डिक्री पारित की गई थी या डिक्री पारित किए जाने के पश्चात् कोई क्षेत्र उस न्यायालय की अधिकारिता से किसी अन्य न्यायालय की अधिकारिता में अन्तरित कर दिया गया है किन्तु ऐसे प्रत्येक मामले में, उस दूसरे न्यायालय को भी डिक्री के निष्पादन की अधिकारिता होगी यदि डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन करने के समय उसे उक्त वाद का विचारण करने की अधिकारिता होती ।" ।

धारा 39 का संशोधन ।

18. मूल अधिनियम की धारा 39 में,—

(i) उपधारा (1) में, "अन्य न्यायालय को निष्पादन के लिए" शब्दों के स्थान पर "सक्षम अधिकारिता वाले अन्य न्यायालय को निष्पादन के लिए" शब्द रखे जाएंगे ;

(ii) उपधारा (2) के पश्चात् निम्नलिखित उपधारा अन्तःस्थापित की जाएगी, अर्थात् :—

"(3) इस धारा के प्रयोजनों के लिए, किसी न्यायालय को सक्षम अधिकारिता वाला न्यायालय समझा जाएगा यदि, डिक्री को उस न्यायालय को अन्तरण के लिए आवेदन करते समय, ऐसे न्यायालय को उस वाद का विचारण करने की अधिकारिता होती जिसमें ऐसी डिक्री पारित की गई थी ।" ।

धारा 42 का संशोधन ।

19. मूल अधिनियम की धारा 42 को उस धारा की उपधारा (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया जाएगा और इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपधारा (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपधाराएं अन्तःस्थापित की जाएंगी, अर्थात् :—

"(2) उपधारा (1) के उपबन्धों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना उस उपधारा के अधीन न्यायालय की शक्तियों के अन्तर्गत डिक्री पारित करने वाले न्यायालय की निम्नलिखित शक्तियां होंगी, अर्थात् :—

(क) धारा 39 के अधीन किसी अन्य न्यायालय को निष्पादन के लिए डिक्री भेजने की शक्ति;

(ख) धारा 50 के अधीन मृतक निर्णीत ऋणी के विधिक प्रतिनिधि के विरुद्ध डिक्री का निष्पादन करने की शक्ति ;

(ग) डिक्री को कुर्क करने का आदेश देने की शक्ति ।

(3) उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट शक्ति के प्रयोग में आदेश पारित करने वाला न्यायालय उसकी एक प्रति उस न्यायालय को भेजेगा जिसने डिक्री पारित की है ।

(4) इस धारा की किसी बात से यह नहीं समझा जाएगा कि वह उस न्यायालय को, जिसको, निष्पादन के लिए डिक्री भेजी गई है, निम्नलिखित शक्तियों में से कोई प्रदत्त करती है, अर्थात् :—

(क) डिक्री के अन्तरिती की प्रेरणा पर निष्पादन का आदेश देने की शक्ति;

(ख) किसी फर्म के विरुद्ध पारित डिक्री की दशा में, आदेश 21 के नियम 50 के उपनियम (1) के खण्ड (ख) या खण्ड (ग) में निर्दिष्ट व्यक्ति से भिन्न किसी व्यक्ति के विरुद्ध ऐसी डिक्री के निष्पादन की इजाजत देने की शक्ति ।" ।

धारा 47 का संशोधन ।

20. मूल अधिनियम की धारा 47 में स्पष्टीकरण के स्थान पर निम्नलिखित स्पष्टीकरण रखे जाएंगे, अर्थात :—

"**स्पष्टीकरण 1**—इस धारा के प्रयोजनों के लिए वह वादी जिसका वाद खारिज हो चुका है और वह प्रतिवादी जिसके विरुद्ध वाद खारिज हो चुका है, वाद के पक्षकार हैं ।

स्पष्टीकरण 2—(क) इस धारा के प्रयोजनों के लिए, डिक्री के निष्पादन के लिए विक्रय में सम्पत्ति का क्रेता उस वाद का पक्षकार समझा जाएगा जिसमें वह डिक्री पारित की गई है ; और

(ख) ऐसी सम्पत्ति के क्रेता को या उसके प्रतिनिधि को कब्जा देने से संबंधित सभी प्रश्न इस धारा के अर्थान्तर्गत डिक्री के निष्पादन, उन्मोचन या तुष्टि से सम्बन्धित प्रश्न समझे जाएंगे ।" ।

धारा 51 का संशोधन ।

21. मूल अधिनियम की धारा 51 में, खण्ड (ग) में "गिरफ्तारी और कारागार में निरोध द्वारा किया जाए" शब्दों के स्थान पर "ऐसी कालावधि के लिए, जो धारा 58 में विनिर्दिष्ट कालावधि से अधिक न हो, और जहां उस धारा के अधीन गिरफ्तारी और निरोध अनुज्ञेय हो, गिरफ्तारी और कारागार में निरोध द्वारा किया जाए ;" शब्द रखे जाएंगे ।

* * * * *

धारा 58 का संशोधन ।

22. मूल अधिनियम की धारा 58 में,—

(i) उपधारा (1) में,—

(क) खण्ड (क) के स्थान पर निम्नलिखित खण्ड रखा जाएगा, अर्थात्:—

"(क) जहां डिक्री एक हजार रुपए से अधिक धन की राशि संदत्त करने के लिए है वहां तीन मास से अनधिक की कालावधि के लिए, और" ;

(ख) खण्ड (ख) के स्थान पर निम्नलिखित खण्ड रखा जाएगा, अर्थात्:—

"(ख) जहां डिक्री पांच सौ रुपए से अधिक किन्तु एक हजार रुपए से अनधिक धन की राशि संदत्त करने के लिए है वहां छह सप्ताह से अनधिक की कालावधि के लिए;";

(ग) प्रथम परन्तुक में "यथास्थिति उक्त छह मास या छह सप्ताह की कालावधि" शब्दों के स्थान पर "निरोध की उक्त कालावधि" शब्द रखे जाएंगे;

(ii) उपधारा (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपधारा अन्त:स्थापित की जाएगी, अर्थात् :—

"(1क) सन्देहों के निराकरण के लिए यह घोषित किया जाता है कि विधि कारावास में निरोध के लिए कोई आदेश वहां नहीं किया जाएगा जहां डिक्री की कुल रकम पांच सौ रुपये से अधिक नहीं है ।" ।

धारा 60 का संशोधन ।

23. मूल अधिनियम की धारा 60 में—

(i) उपधारा (1) के परन्तुक में,—

"(क) खण्ड (ग) में "कृषक के या उसके" शब्दों के स्थान पर "कृषक या श्रमिक या घरेलू नौकर के अपने" शब्द रखे जाएंगे ;

(ख) खण्ड (छ) में "सरकार के" शब्दों के पश्चात् "या किसी स्थानीय प्राधिकारी या अन्य नियोजक के" शब्द अन्त:स्थापित किए जाएंगे ;

(ग) खण्ड (झ) में,—

(i) "दो सौ रुपए और बाकी का आधा" शब्दों के स्थान पर "चार सौ रुपए और बाकी का दो तिहाई" शब्द रखे जाएंगे;

(ii) और परन्तुक के स्थान पर निम्नलिखित परन्तुक रखा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु जहां कि ऐसे सम्बलम् के कुर्की योग्य प्रभाग का कोई भाग या तो लगातार या आन्तरायिक रूप से चौबीस मास की कुल कालावधि पर्यन्त कुर्क रहा है वहां जब तक कि आगे की बारह मास की कालावधि का अवसान न हो गया हो ऐसे भाग को कुर्की से छूट दे दी जाएगी और जहां ऐसी कुर्की उसी एक डिक्री के निष्पादन में की गई है वहां चौबीस मास की कुल कालावधि पर्यन्त कुर्क रहने

के पश्चात् उस डिक्री के निष्पादन में कुर्की से अन्तिम रूप से छूट दे दी जाएगी।";

(घ) खण्ड (ल) के स्थान पर निम्नलिखित खण्ड रखा जाएगा, अर्थात् :—

"(ल) ऐसे व्यक्तियों के वेतन और भत्ते जिन्हें वायुसेना अधिनियम, 1950 या सेना अधिनियम, 1950 या नौसेना अधिनियम, 1957 लागू है ;";

1950 का 45
1950 का 46
1957 का 62

(ङ) खण्ड (ट) के पश्चात् निम्नलिखित खण्ड अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

(टक) किसी ऐसी निधि के या से व्युत्पन्न, जिसे लोक भविष्य-निधि अधिनियम, 1968 तत्समय लागू है, सब निक्षेप और अन्य राशियां वहां तक, जहां तक कि उनके बारे में उक्त अधिनियम द्वारा यह घोषित है कि वे कुर्की के दायित्व के अधीन नहीं है।

1968 का 23

(टख) निर्णीतऋणों के जीवन पर बीमा पालिसी के अधीन संदेय सभी धन ;

(टग) किसी ऐसे निवासी भवन के पट्टेदार का हित जिसको भाटक और वास सुविधा के नियंत्रण से सम्बन्धित तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के उपबन्ध लागू हैं ;";

(च) स्पष्टीकरण 1 के स्थान पर निम्नलिखित स्पष्टीकरण रखा जाएगा, अर्थात् :—

"स्पष्टीकरण 1—खण्ड (छ), (ज), (झ), (झक), (ञ), (ठ) और (ण) में वर्णित विशिष्टियों को, उनके वस्तुतः संदेय होने के पहले या पश्चात् कुर्की या विक्रय से छूट प्राप्त है और सम्बलम् की दशा में उसका कुर्की योग्य भाग उसके वस्तुतः संदेय होने के पहले या पश्चात् कुर्की योग्य है ;" ;

(छ) स्पष्टीकरण 2 में "स्पष्टीकरण 2—खण्ड (ज) और (झ)" शब्द, अंक, कोष्ठक और अक्षरों के स्थान पर "स्पष्टीकरण 2 खण्ड (झ) और (झक)" शब्द, अंक, कोष्ठक और अक्षर रखे जाएंगे;

(ज) स्पष्टीकरण 3 में अंक "3" के स्थान पर अंक "iii" रखा जाएगा;

(झ) यथासंशोधित स्पष्टीकरण 3 के पश्चात् निम्नलिखित स्पष्टीकरण अंतःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

"स्पष्टीकरण 4—इस परन्तुक के प्रयोजनों के लिए "मजदूरी" के अन्तर्गत बोनस है और "श्रमिक" के अन्तर्गत कुशल, अकुशल या अर्द्ध कुशल श्रमिक हैं।

स्पष्टीकरण 5—इस परन्तुक के प्रयोजनों के लिए "कृषक" पद के अन्तर्गत ऐसा प्रत्येक व्यक्ति है जो स्वयं खेती करता है और जो अपने जीवन यापन के लिए मुख्यतः कृषि भूमि से आय पर निर्भर है, चाहे स्वामी के रूप में या अभिधारी, भागीदार या कृषि श्रमिक के रूप में।

स्पष्टीकरण 6—स्पष्टीकरण 5 के प्रयोजनों के लिए कोई कृषक स्वयं खेती करने वाला समझा जाएगा, यदि वह—

(क) अपने श्रम द्वारा; या

(ख) अपने कुटुम्ब के किसी सदस्य के श्रम द्वारा; या

(ग) नकद या किसी किस्म में (जो उपज का अंश न हो) या दोनों में देय मजदूरियों पर सेवकों या श्रमिकों द्वारा,

खेती करता है।

(ii) उपधारा (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपधारा अन्तःस्थापित की जाएगी, अर्थात् :—

"(1क) तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी वह करार, जिसके द्वारा वह व्यक्ति इस धारा के अधीन छूट के फायदे का अधित्यजन करने का करार करता है, शून्य होगा।

धारा 63 का संशोधन।

24. मूल अधिनियम की धारा 63 में उपधारा (2) के पश्चात् निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"**स्पष्टीकरण**—उपधारा (2) के प्रयोजनों के लिए, "न्यायालय के द्वारा की गई किसी कार्यवाही" के अन्तर्गत ऐसे डिक्री धारक को जिसने डिक्री के निष्पादन में हुए विक्रय में सम्पत्ति का क्रय किया है, उसके द्वारा सदेय क्रय कीमत के बराबर मुजरा अनुज्ञात करने का आदेश नहीं है।"।

धारा 66 का संशोधन।

25. मूल अधिनियम की धारा 66 की उपधारा (1) में अन्त में निम्नलिखित अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"और इस प्रकार प्रमाणित क्रय के अधीन किसी हक का दावा करने वाले व्यक्ति द्वारा किसी भी वाद में प्रतिवादी को यह अभिवचन नहीं करने दिया जाएगा कि क्रय उसकी ओर से किया गया था या किसी ऐसे व्यक्ति की ओर से किया गया था जिसके माध्यम से प्रतिवादी दावा करता है।"।

धारा 75 का संशोधन।

26. मूल अधिनियम की धारा 75 में खण्ड (घ) के पश्चात् निम्नलिखित खण्ड अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

"(ङ) कोई वैज्ञानिक, तकनीकी या विशेषज्ञ अन्वेषण करने के लिए;

(च) ऐसी सम्पत्ति का विक्रय करने के लिए जो शीघ्र और प्राकृतिक रूप से क्षय हो सकती है और जो वाद का निर्धारण लम्बित होने तक न्यायालय की अभिरक्षा में है;

(छ) कोई अनुसचिवीय कार्य करने के लिए;"।

धारा 80 का संशोधन।

27. मूल अधिनियम की धारा 80 उसकी उपधारा (1) के रूप में पुनः संख्यांकित की जाएगी, और—

(क) इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपधारा (1) में "कोई वाद तब तक संस्थित नहीं किया जाएगा" शब्दों के स्थान पर "उपधारा (2) में अन्यथा उपबंधित के सिवाय कोई वाद तब तक संस्थित नहीं किया जाएगा" शब्द, कोष्टक और अंक रखे जाएंगे, और

(ख) इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपधारा (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपधाराएं अन्तःस्थापित की जाएंगी, अर्थात् :—

(2) सरकार के (जिसके अन्तर्गत जम्मू-कश्मीर राज्य की सरकार भी आती है) के विरुद्ध, या ऐसे कार्य की बाबत जिसके बारे में

यह तात्पर्यित हो कि वह ऐसे लोक आफिसर द्वारा अपनी पदीय हैसियत में किया गया है, लोक आफिसर के विरुद्ध, कोई अत्यावश्यक या तुरन्त अनुतोष अभिप्राप्त करने के लिए कोई वाद, न्यायालय की इजाजत से, उपधारा (1) द्वारा यथाअपेक्षित किसी सूचना की तामील किए बिना संस्थित किया जा सकेगा; किन्तु न्यायालय वाद में अनुतोष, चाहे अंतरिम या अन्यथा, यथास्थिति, सरकार या लोक आफिसर को वाद में आवेदित अनुतोष की बाबत हेतुक दर्शित करने का युक्तियुक्त अवसर देने के पश्चात् ही प्रदान करेगा अन्यथा नहीं ;

परन्तु न्यायालय, पक्षकारो को सुनने के पश्चात्, यदि उसका समाधान हो जाता है कि वाद में कोई अत्यावश्यक या तुरन्त कोई अनुतोष प्रदान करने की आवश्यकता नहीं है, वादपत्र को उपधारा (1) की अपेक्षाओं का पालन करने के पश्चात् प्रस्तुत करने के लिए वापस कर देगा ।

(3) सरकार के विरुद्ध या ऐसे कार्य की बाबत जिसके बारे में यह तात्पर्यित हो कि वह ऐसे लोक आफिसर द्वारा अपनी पदीय हैसियत में किया गया है लोक आफिसर के विरुद्ध संस्थित किया गया कोई वाद केवल इस कारण खारिज नहीं किया जाएगा उपधारा (1) में निर्दिष्ट सूचना में कोई त्रुटि या दोष है, कि यदि ऐसी सूचना में—

(क) वादी का नाम, वर्णन और निवास स्थान इस प्रकार दिया गया हो जो समुचित प्राधिकारी या लोक आफिसर को सूचना की तामील करने वाले व्यक्ति की शनाख्त करने में समर्थ करे और ऐसी सूचना उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट समुचित प्राधिकारी के कार्यालय में परिदत्त की गई या छोड़ दी गई हो, और

(ख) वाद-हेतुक और वादी द्वारा दावा किए गए अनुतोष को वाद में सारतः उपदर्शित किया गया हो ।

धारा 82 का संशोधन ।

28. मूल अधिनियम की धारा 82 में,—

(i) उपधारा (1) के स्थान पर निम्नलिखित उपधारा रखी जाएगी, अर्थात् :—

"(1) जहां कि सरकार द्वारा या उसके विरुद्ध किसी वाद में या किसी लोक आफिसर द्वारा अपनी पदीय हैसियत में किए गए तात्पर्यित कार्य की बाबत उसके द्वारा या उसके विरुद्ध किसी वाद में, यथास्थिति, भारत संघ या किसी राज्य या लोक आफिसर के विरुद्ध डिक्री पारित की जाती है वहां, ऐसी डिक्री उपधारा (2) के उपबन्धों के अनुसार ही निष्पादित की जाएगी अन्यथा नहीं ।";

(ii) उपधारा (2) में "ऐसी रिपोर्ट"*** शब्दों के स्थान पर "ऐसी डिक्री"*** शब्द रखे जाएंगे ।

* * * *

धारा 86 का संशोधन ।

29. मूल अधिनियम की धारा 86 में,—

(i) उपधारा (1) में,—

(क) "के किसी भी शासक" शब्दों का लोप किया जाएगा;

(ख) परन्तुक में "शासक" शब्द के स्थान पर "विदेशी राज्य" शब्द रखे जाएंगे;

(ii) उपधारा (2) में,--

(क) "शासक" शब्द जहां कहीं भी आता है उसके स्थान पर "विदेशी राज्य" शब्द रखा जाएगा;

(ख) * * * *

(ग) * * * *

(घ) * * * *

(iii) उपधारा (3) के स्थान पर निम्नलिखित उपधारा रखी जाएगी, अर्थात् :--

"(3) केन्द्रीय सरकार के सचिव द्वारा लिखित रूप में प्रमाणित केन्द्रीय सरकार की सम्मति के बिना कोई डिक्री किसी विदेशी राज्य की सम्पत्ति के विरुद्ध निष्पादित नहीं की जाएगी।";

(iv) उपधारा (4) में,—

(क) खण्ड (क) को खण्ड (कक) के रूप में पुनः अक्षरांकित किया जाएगा, और इस प्रकार पुनः अक्षरांकित खण्ड (कक) के पूर्व निम्नलिखित खण्ड अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(क) किसी विदेशी राज्य का शासक;";

(ख) खण्ड (ग) में "विदेशी राज्य के शासक या राजदूत या दूत के" शब्दों के स्थान पर "विदेशी राज्य के कर्मचारिवृन्द या विदेशी राज्य के राजदूत या दूत के" शब्द रखे जाएंगे;

(ग) "विदेशी राज्य के शासक के सम्बन्ध में लागू हैं" शब्दों के स्थान पर "विदेशी राज्य के सम्बन्ध में लागू हैं" शब्द रखे जाएंगे;

(v) उपधारा (4) के पश्चात् निम्नलिखित उपधारा अन्तःस्थापित की जाएगी, अर्थात् :—

"(5) इस संहिता के अधीन निम्नलिखित व्यक्ति गिरफ्तार नहीं किए जाएंगे, अर्थात् :—

(क) किसी विदेशी राज्य का शासक ;

(ख) किसी विदेशी राज्य का राजदूत या दूत ;

(ग) किसी कामनवेल्थ देश का उच्चायुक्त ;

(घ) किसी विदेशी राज्य के कर्मचारिवृन्द या विदेशी राज्य के शासक, राजदूत या दूत के या कामनवेल्थ देश के उच्चायुक्त के कर्मचारिवृन्द या अनुचर वर्ग का कोई भी ऐसा सदस्य जिसे केन्द्रीय सरकार साधारण या विशेष आदेश द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे ।

(6) जहां कि केन्द्रीय सरकार को किसी विदेशी राज्य पर वाद लाने के लिए सम्मति, जो उपधारा (1) में निर्दिष्ट है, देने का अनुरोध किया जाता है वहां केन्द्रीय सरकार, ऐसे अनुरोध को स्वीकार करने से पूर्णतः या भागतः इंकार करने से पहले अनुरोध करने वाले व्यक्ति को सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर देगी।"।

30. मूल अधिनियम की धारा 91 में;— धारा 91 का संशोधन ।

(i) शीर्षक के स्थान पर निम्नलिखित शीर्षक रखा जाएगा, अर्थात् :—

"लोक न्यूसैंस और लोक को प्रभावित करने वाले अन्य दोषपूर्ण कार्य ।";

(ii) उपधारा (1) के स्थान पर निम्नलिखित उपधारा रखी जाएगी, अर्थात् :—

"(1) लोक न्यूसैंस या लोक को प्रभावित करने वाले या प्रभावित करने के लिए सम्भाव्य अन्य दोषपूर्ण कार्य की दशा में, घोषणा और व्यादेश या ऐसे अन्य अनुतोष के लिए जो मामले की परिस्थितियों में समुचित हो वाद, —

(क) महाधिवक्ता द्वारा, या

(ख) दो या अधिक व्यक्तियों द्वारा, चाहे ऐसे लोक न्यूसैंस या अन्य दोषपूर्ण कार्य के कारण ऐसे व्यक्तियों को विशेष नुकसान न पहुंचा हो, न्यायालय की इजाजत से,

संस्थित किया जा सकता है ।" ।

31. मूल अधिनियम की धारा 92 में, — धारा 92 का संशोधन ।

(i) उपधारा (1) में "महाधिवक्ता की लिखित सम्मति" शब्दों के स्थान पर "न्यायालय की इजाजत" शब्द रखे जाएंगे ;

(ii) उपधारा (2) के पश्चात् निम्नलिखित उपधारा अन्तःस्थापित की जाएगी, अर्थात् :—

"(3) न्यायालय, पूर्त या धार्मिक प्रकृति के लोक प्रयोजनों के लिए सृजित किसी अभिव्यक्त या आन्वयिक न्यास के मूल प्रयोजनों को परिवर्तित कर सकेगा और ऐसे न्यास की सम्पत्ति या आय या उसके किसी भाग को निम्नलिखित में से एक या अधिक परिस्थितियों में समान उद्देश्य के लिए उपयोजित कर सकेगा अर्थात् :—

(क) जहां न्यास के मूल प्रयोजन पूर्णतः या भागतः—

(i) यथाशक्य पूरे हो गए हैं ; या

(ii) क्रियान्वित किए ही नहीं जा सकते हैं या न्यास को सृजित करने वाली लिखत में दिए गए निदेशों के अनुसार क्रियान्वित नहीं किए जा सकते हैं या जहां ऐसी कोई लिखत नहीं है वहां न्यास की भावना के अनुसार क्रियान्वित नहीं किए जा सकते हैं ; या

(ख) जहां कि न्यास के मूल प्रयोजनों में न्यास के आधार पर उपलभ्य सम्पत्ति के केवल एक भाग के उपयोग के लिए ही उपबन्ध है; या

(ग) जहां कि न्यास के आधार पर उपलभ्य सम्पत्ति और समान प्रयोजनों के लिए उपयोजित की जा सकने वाली कोई सम्पत्ति किसी अन्य प्रयोजन के साथ और उस उद्देश्य से अधिक उपयुक्त रीति से प्रभावी ढंग से न्यास की भावना और सामान्य प्रयोजनों के लिए उसके लागू होने को ध्यान में रखते हुए, उपयोजित की जा सकती है ; या

(घ) जहां मूल प्रयोजन पूर्णतः या भागतः, किसी ऐसे क्षेत्र के प्रति निर्देश से अधिकथित किए गए थे जो ऐसे प्रयोजनों के लिए उस समय एक इकाई था किन्तु अब नहीं रह गया है ; या

(ङ) जहां मूल प्रयोजन, पूर्णतः या भागतः अधिकथित किए जाने के बाद से,—

(i) अन्य उपायों द्वारा पर्याप्त रूप से उपलब्ध किए गए हैं; या

(ii) समाज के लिए अनुपयोगी या अपहानिकर होने के कारण समाप्त हो गए हैं ; या

(iii) विधि में पूर्त नहीं रह गए हैं ; या

(iv) किसी अन्य रीति से न्यास के आधार पर उपलभ्य सम्पत्ति के उपयोग के लिए न्यास की भावना को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त और प्रभावी ढंग का उपबन्ध नहीं करते हैं ;" ।

धारा 95 का संशोधन ।

32. मूल अधिनियम की धारा 95 की उपधारा (1) में "व्यय या उसे हुई क्षति के लिए" शब्दों के स्थान पर "व्यय या उसे हुई क्षति (जिसके अन्तर्गत प्रतिष्ठा को हुई क्षति भी है)" शब्द और कोष्ठक रखे जाएंगे ।

धारा 96 का संशोधन ।

33. मूल अधिनियम की धारा 96 में, उपधारा (3) के पश्चात् निम्नलिखित उपधारा अन्तःस्थापित की जाएगी, अर्थात् :—

"(4) लघुवाद न्यायालयों द्वारा संज्ञेय प्रकृति के किसी वाद में किसी डिक्री से कोई अपील, विधि के प्रश्न के सिवाय, नहीं होगी, यदि ऐसी डिक्री की रकम या उसका मूल्य तीन हजार रुपए से अधिक नहीं है ।" ।

* * * *

धारा 98 का संशोधन ।

34. मूल अधिनियम की धारा 98 की उपधारा (2) के परन्तुक में "दो न्यायाधीशों से अधिक वाले न्यायालय के दो ही न्यायाधीशों से मिलकर गठित हैं" शब्दों के स्थान पर "उसको गठित करने वाले न्यायाधीशों की संख्या से अधिक संख्या वाले न्यायालय के दो या अन्य सम संख्या में न्यायाधीशों से मिलकर गठित है" शब्द रखे जाएंगे ।

धारा 99 का संशोधन ।

35. मूल अधिनियम की धारा 99 में,—

(i) "कुसंयोजन" शब्द के पश्चात् "या असंयोजन" शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे;

(ii) निम्नलिखित परन्तुक अन्त में जोड़ा जाएगा, अर्थात्:—

"परन्तु इस धारा की कोई बात किसी आवश्यक पक्षकार के असंयोजन को लागू नहीं होगी ।" ।

धारा 99क का अन्तःस्थापन ।

36. धारा 99 के पश्चात् निम्नलिखित धारा अन्तःस्थापित की जाएगी, अर्थात्:—

धारा 47 के अधीन तब तक किसी आदेश को

"99क. उपधारा (1) के उपबन्धों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना धारा 47 के अधीन कोई आदेश ऐसे आदेश से सम्बन्धित किसी कार्यवाही में किसी गलती, त्रुटि या अनियमितता के कारण तब तक न तो उलटा जाएगा और न उसमें

सारभूत फेरफार किया जाएगा और न ही ऐसे आदेश से सम्बन्धित कोई मामला अपील में प्रतिप्रेषित किया जाएगा जब तक कि ऐसी गलती या त्रुटि या अनियमितता का मामले के विनिश्चय पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़ा हो।"। उल्टा न जाना या उपान्तरित न किया जाना जब तक मामले के विनिश्चय पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़ता हो।

37. मूल अधिनियम की धारा 100 के स्थान पर निम्नलिखित धारा रखी जाएगी, अर्थात्:— धारा 100 के स्थान पर नई धारा का प्रतिस्थापन।

"100. (1) जैसा इस संहिता में या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अभिव्यक्त रूप से उपबन्धित है उसके सिवाय उच्च न्यायालय के अधीनस्थ किसी न्यायालय द्वारा अपील में पारित प्रत्येक डिक्री से उच्च न्यायालय में अपील हो सकेगी, यदि उच्च न्यायालय का समाधान हो जाता है कि उस मामले में विधि का कोई सारवान प्रश्न अन्तर्वलित है। द्वितीय अपील।

(2) एक पक्षीय पारित अपीली डिक्री की अपील इस धारा के अधीन हो सकेगी।

(3) इस धारा के अधीन अपील में अन्तर्वलित विधि के उस सारवान प्रश्न का प्रमिततः अपील के ज्ञापन में कथन किया जाएगा।

(4) जहां उच्च न्यायालय का समाधान हो जाता है कि किसी मामले में सारवान विधि का प्रश्न अन्तर्वलित है तो वह उस प्रश्न को बनाएगा।

(5) अपील ऐसे बनाए गए प्रश्न पर सुनी जाएगी और प्रतिवादी को, अपील की सुनवाई में यह तर्क करने की अनुज्ञा दी जाएगी कि ऐसे मामले में ऐसा प्रश्न अन्तर्वलित नहीं है :

परन्तु इस धारा की कोई बात ऐसे कारणों से, जो लेखबद्ध किए जाएंगे, न्यायालय की किसी अन्य ऐसे विधि प्रश्न पर, जो उसके द्वारा नहीं बनाया गया है, यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि उस मामले में ऐसा प्रश्न अन्तर्वलित है, अपील सुनने की शक्ति लेने वाली या उसे संक्षिप्त करने वाली नहीं समझी जाएगी।"।

38. धारा 100 के पश्चात् निम्नलिखित धारा अन्तःस्थापित की जाएगी, अर्थात्:— नई धारा 100क का अन्तःस्थापन।

"100क. किसी उच्च न्यायालय के लिए किसी लेटर्स पेटेन्ट में या विधि का बल रखने वाली किसी अन्य लिखत में या तत्समय प्रभावी किसी अन्य विधि में, किसी बात के होते हुए भी जहां किसी अपीली डिक्री या आदेश की अपील की सुनवाई और उसका विनिश्चय उच्च न्यायालय के किसी एकल न्यायाधीश द्वारा किया जाता है, वहां ऐसी अपील में ऐसे एकल न्यायाधीश के निर्णय, विनिश्चय या आदेश या ऐसी अपील में पारित डिक्री की कोई और अपील नहीं होगी।"। कुछ मामलों में और अपील का न होना।

39. मूल अधिनियम की धारा 102 में "एक हजार रुपए" शब्दों के स्थान पर "तीन हजार रुपए" शब्द रखे जाएंगे। धारा 102 का संशोधन।

धारा 103 के स्थान पर नई धारा का प्रतिस्थापन ।

40. मूल अधिनियम की धारा 103 के स्थान पर निम्नलिखित धारा रखी जाएगी, अर्थात्:—

तथ्य-विवाद्यकों का अवधारण करने को उच्च न्यायालय की शक्ति ।

"103. यदि अभिलेख का साक्ष्य पर्याप्त हो तो किसी भी द्वितीय अपील में उच्च न्यायालय ऐसी अपील के निपटारे के लिए आवश्यक कोई * * * विवाद्यक अवधारित कर सकेगा, जो,—

(क) निचले अपीली न्यायालय द्वारा या प्रथम बार के न्यायालय और निम्नतर अपीली न्यायालय दोनों द्वारा अवधारित नहीं किया गया है, या

(ख) जो धारा 100 में यथानिर्दिष्ट विधि के ऐसे प्रश्न के विनिश्चय के कारण ऐसे न्यायालय या न्यायालयों द्वारा गलत अवधारित किया गया है ।" ।

धारा 104 का संशोधन ।

41. मूल अधिनियम की धारा 104 की उपधारा (1) में खण्ड (चच) के पश्चात् निम्नलिखित अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्:—

"(चचक) धारा 91 या धारा 92 के अधीन, यथास्थिति, धारा 91 या धारा 92 में विनिर्दिष्ट प्रकृति के वाद को संस्थित करने के लिए इजाजत देने से इंकार करने वाला आदेश ।"।

धारा 105 का संशोधन ।

42. मूल अधिनियम की धारा 105 की उपधारा (2) में "कि इस संहिता के प्रारम्भ के पश्चात् किए गए" शब्दों का लोप किया जाएगा ।

धारा 115 का संशोधन ।

43. मूल अधिनियम की धारा 115 उसकी उपधारा (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित की जाएगी, और—

(क) इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपधारा (1) में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात्:—

"परन्तु उच्च न्यायालय, किसी वाद या अन्य कार्यवाही के अनुक्रम में, इस धारा के अधीन, किए गए किसी आदेश में या कोई विवाद्यक विनिश्चित करने वाले किसी आदेश में फेरफार नहीं करेगा या उसे नहीं उलटेगा उस दशा के सिवाय जहां—

(क) ऐसा आदेश यदि वह पुनरीक्षण के लिए आवेदन करने वाले पक्षकार के पक्ष में किया गया होता, वाद या अन्य कार्यवाही का अन्तिम रूप से निपटारा कर देता, अथवा

(ख) ऐसा आदेश, यदि रहने दिया गया तो न्याय को असफल करेगा अथवा उस पक्षकार को जिसके विरुद्ध यह किया गया था, असाध्य क्षति कारित करेगा ।";

(ख) इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपधारा (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपधारा और स्पष्टीकरण अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्:—

"(2) उच्च न्यायालय, इस धारा के अधीन, किसी ऐसी डिक्री या आदेश में, जिसके विरुद्ध या तो उच्च न्यायालय में या उसके अधीनस्थ किसी न्यायालय में अपील की गई है फेरफार नहीं करेगा अथवा उसे उलटेगा नहीं ।

स्पष्टीकरण—इस धारा में "कोई मामला जो विनिश्चित किया जा चुका है" अभिव्यक्ति के अन्तर्गत किसी वाद या अन्य कार्यवाही के

अनुक्रम में किया गया कोई आदेश या किसी विवाद्यक को विनिश्चित करने वाला कोई आदेश है ।" ।

धारा 123 का संशोधन ।

44. मूल अधिनियम की धारा 123 में,—

(i) उपधारा (3), (4) और (5) में "मुख्य न्यायमूर्ति या मुख्य न्यायाधीश" शब्द जहां कहीं भी आते हैं उनके स्थान पर "उच्च न्यायालय" शब्द यथावश्यक व्याकरणिक रूपभेदों के अधीन रहते हुए रखे जाएंगे ।

(ii) उपधारा (3) में परन्तुक का लोप किया जाएगा ।

* * * *

धारा 135क का संशोधन ।

45. मूल अधिनियम की धारा 135क में उपधारा (1) के स्थान पर निम्नलिखित उपधारा रखी जाएगी, अर्थात्:—

"(1) कोई व्यक्ति यथास्थिति संसद् के किसी सदन या विधान सभा या विधान परिषद् के किसी अधिवेशन के दौरान सिविल प्रक्रिया के अधीन—

(क) यदि वह—

(i) संसद् के किसी सदन के; या

(ii) किसी राज्य की विधान सभा या विधान परिषद्, या

(iii) किसी संघ राज्यक्षेत्र की विधान सभा का,

सदस्य है;

(ख) ऐसी समिति के किसी अधिवेशन के दौरान यदि वह—

(i) संसद् के किसी सदन की, या

(ii) किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र की विधान सभा, या

(iii) किसी राज्य की विधान परिषद् की,

ऐसी समिति का सदस्य है;

(ग) यथास्थिति, संसद् के सदनों या राज्य विधान मण्डल के सदनों की संयुक्त समिति की संयुक्त बैठक में, अधिवेशन या सम्मेलन के दौरान और ऐसे अधिवेशन, बैठक या सम्मेलन के चालीस दिन पूर्व और पश्चात् यदि वह—

(i) संसद् के किसी सदन; या

(ii) दोनों सदन वाले किसी राज्य की विधान सभा या विधान परिषद् का सदस्य है;

गिरफ्तार या कारावास में निरुद्ध किए जाने का दायी नहीं होगा ।"।

धारा 139 का संशोधन ।

46. मूल अधिनियम की धारा 139 में खण्ड (क) के पश्चात् निम्नलिखित खण्ड अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात :—

1952 का 53

"(कक) नोटरी अधिनियम, 1952 के अधीन नियुक्त नोटरी ।" ।

धारा 141 का संशोधन ।

47. मूल अधिनियम की धारा 141 में निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

'स्पष्टीकरण—इस धारा में "कार्यवाही" पद के अन्तर्गत आदेश 9 के अधीन कार्यवाही भी है किन्तु इसके अन्तर्गत संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन कार्यवाही नहीं है ।' ।

धारा 144 का संशोधन ।

48. मूल अधिनियम की धारा 144 मे,—

(i) उपधारा (1) में,—

(क) "फेरफार किया जाए या उसे उलटा जाए वहां और वहां तक प्रथम बार का न्यायालय" शब्दों के स्थान पर '(अपील, पुन-

रीक्षण या अन्य कार्यवाही में फेरफार किया या उसे उलटा जाए या इस प्रयोजन के लिए संस्थित किसी वाद में अपास्त या उपान्तरित किया जाए वहां और वहां तक वह न्यायालय जिसने डिक्री या आदेश पारित किया था" शब्द रखे जाएंगे;

(ख) "उसका वह भाग जिसमें फेरफार किया गया है या जिसे उलटा गया है" शब्दों के स्थान पर "उसका वह भाग जिसमें फेरफार किया गया है, जिसे उलटा गया है, जिसे अपास्त या उपान्तरित किया गया है" शब्द रखे जाएंगे ;

(ग) "ऐसे फेरफार या उलटाव के उचित रूप में पारिणामिक हों" शब्दों के स्थान पर "उस डिक्री या आदेश के ऐसे फेरफार, उलटाव, अपास्त करने या उपांतरण के उचित रूप में पारिणामिक हों" शब्द रखे जाएंगे ;

(ii) उपधारा (1) में निम्नलिखित स्पष्टीकरण जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

'स्पष्टीकरण —इस धारा के प्रयोजनों के लिए "वह न्यायालय जिसने डिक्री या आदेश पारित किया है" पद के अन्तर्गत यह समझा जाएगा कि निम्नलिखित है :—

(क) जहां कि डिक्री या आदेश में फेरफार या उलटाव अपीली या पुनरीक्षण अधिकारिता के प्रयोग में किया गया है वहां प्रथम बार का न्यायालय;

(ख) जहां कि डिक्री या आदेश पृथक् वाद में अपास्त किया गया है वहां प्रथम बार का वह न्यायालय जिसने ऐसी डिक्री या आदेश पारित किया था;

(ग) जहां कि प्रथम बार का न्यायालय विद्यमान नहीं रहा है या उसकी निष्पादन करने की अधिकारिता नहीं रही है वहां वह न्यायालय जिसे ऐसे वाद का विचारण करने की अधिकारिता होती यदि वह वाद जिसमें डिक्री या आदेश पारित किया गया है इस धारा के अधीन प्रत्यास्थापन का आवेदन किए जाने के समय संस्थित किया जाता ।' ।

धारा 145 का संशोधन ।

49. मूल अधिनियम की धारा 145 में,—

(i) "जहां कि कोई व्यक्ति" शब्दों के स्थान पर "जहां किसी व्यक्ति ने" शब्द रखे जाएंगे ;

(ii) "प्रतिभू के रूप में दायित्वाधीन हो गया है" शब्दों से प्रारम्भ होने वाले और "भीतर पक्षकार समझा जाएगा" शब्दों पर समाप्त होने वाले भाग के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाएगा, अर्थात् :—

"वह डिक्री या आदेश डिक्रियों के निष्पादन के लिए इसमें उपाबन्धित रीति से निष्पादित किया जाएगा, अर्थात् :—

(i) यदि उसने अपने को व्यक्तिगत रूप से दायी बनाया है तो उस विस्तार तक उसके विरुद्ध,;

(ii) यदि उसने प्रतिभूति के रूप में कोई सम्पत्ति दी है तो ऐसी प्रतिभूति के विस्तार तक उस सम्पत्ति के विक्रय द्वारा;

(iii) यदि मामला खण्ड (i) और (ii) दोनों के अधीन आता है तो उन खण्डों में विनिर्दिष्ट विस्तार तक,

और ऐसे व्यक्ति के बारे में अपील के प्रयोजनों के लिए, यह समझा जाएगा कि वह धारा 47 के अर्थान्तर्गत पक्षकार है ;" ।

नई धारा 148क का अन्तःस्थापन ।

50. मूल अधिनियम की धारा 148 के पश्चात् निम्नलिखित धारा अन्तःस्थापित की जाएगी, अर्थात् :—

केवियट देने का अधिकार ।

"148क. (1) जहां कि किसी न्यायालय में संस्थित या शीघ्र ही संस्थित होने वाले किसी वाद या कार्यवाही में किसी आवेदन का किया जाना प्रत्याशित है या कोई आवेदन किया गया है वहां कोई व्यक्ति जो ऐसे आवेदन की सुनवाई में न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने के अधिकार का दावा करता है उसके बारे में केवियट दे सकता है (जिसे इसमें उसके पश्चात् केवियटकर्ता कहा गया है)।

(2) जहां कि उपधारा (1) के अधीन कोई केवियट दिया गया है वहां केवियटकर्ता उस व्यक्ति पर जिसके द्वारा उपधारा (1) के अधीन आवेदन किया गया है या किए जाने की प्रत्याशा है केवियट की सूचना की तामील रसीदी रजिस्ट्री डाक द्वारा करेगा ।

(3) जहां कि उपधारा (1) के अधीन कोई केवियट दे दिए जाने के पश्चात् किसी वाद या कार्यवाही में कोई आवेदन फाइल किया जाता है वहां न्यायालय आवेदन की सूचना केवियटकर्ता को देगा ।

(4) जहां कि आवेदक पर किसी केवियट की सूचना की तामील की गई है वहां वह केवियटकर्ता के खर्चे पर केवियटकर्ता को उसके द्वारा दिए गए आवेदन की और उस आवेदन के समर्थन में उसके द्वारा फाइल किए गए या किए जाने वाले किसी कागज या दस्तावेज की प्रतियां भी देगा ।

(5) जहां कि उपधारा (1) के अधीन केवियट दिया गया है, वहां ऐसा केवियट उस तारीख को जिसको यह दिया गया था, नब्बे दिन के अवसान के पश्चात् प्रवृत्त नहीं रहेगा जब तक कि उपधारा (1) में निर्दिष्ट आवेदन उक्त कालावधि के अवसान के पूर्व नहीं किया गया हो ।" ।

नई धारा 153क और 153ख का अन्तःस्थापन ।

51. मूल अधिनियम की धारा 153 के पश्चात् निम्नलिखित धाराएं अन्तःस्थापित की जाएंगी, अर्थात् :—

जहां अपील संक्षेपतः खारिज की जाती है वहां डिक्री या आदेश को संशोधित करने की शक्ति ।

"153क. जहां कि अपील न्यायालय आदेश 41 के नियम 11 के अधीन कोई अपील खारिज करता है वहां धारा 152 के अधीन उस न्यायालय की उस डिक्री या आदेश को संशोधित करने की, जिसके विरुद्ध अपील की गई है, शक्ति का प्रयोग उस न्यायालय द्वारा जिसने प्रथम बार डिक्री या आदेश पारित किया है इस बात के होते हुए भी किया जा सकेगा कि अपील के खारिज किए जाने का प्रभाव, प्रथम बार के न्यायालय द्वारा पारित यथास्थिति, डिक्री या आदेश की पुष्टि में हुआ है ।

विचारण के स्थान को खुला न्यायालय समझा जाना ।

153ख. वह स्थान जहां किसी बात के विचारण के प्रयोजन के लिए कोई सिविल न्यायालय लगता है खुला न्यायालय समझा जाएगा जिसमें साधारण जनता की वहां तक पहुंच हो जहां तक जनता उसमें सुविधापूर्वक समा सके :

परन्तु यदि पीठासीन न्यायाधीश ठीक समझे तो वह किसी विशिष्ट मामले की जांच या विचारण के किसी भी प्रक्रम पर यह आदेश दे सकता है कि साधारण रूप से जनता या किसी विशिष्ट व्यक्ति की न्यायालय द्वारा प्रयुक्त कमरे या भवन में पहुंच नहीं होगी या वह उसमें नहीं आएगा या बना नहीं रहेगा ।" ।

अध्याय 3

आदेशों का संशोधन

आदेश 1 का संशोधन ।

52. मूल अधिनियम की प्रथम अनुसूची में (जिसे इसमें इसके पश्चात् प्रथम अनुसूची कहा गया है) आदेश 1 में,—

(i) नियम 1 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

वादियों के रूप में कौन संयोजित किए जा सकेंगे ।

"1. वे सभी व्यक्ति वादियों के रूप में एक वाद में संयोजित किए जा सकेंगे जहां,—

(क) एक ही कार्य या संव्यवहार या कार्यों या संव्यवहारों की आवली के बारे में या उसमें पैदा होने वाले अनुतोष को पाने का अधिकार उनमें चाहे संयुक्ततः, चाहे पृथक्तः या चाहे अनुकल्पतः वर्तमान होना अभिकथित है; और

(ख) यदि ऐसे व्यक्ति पृथक्-पृथक् वाद लाते तो उसमें विधि या तथ्य का एक समान प्रश्न पैदा होता ।";

(ii) नियम 3 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

प्रतिवादियों के रूप में कौन संयोजित किए जा सकेंगे ।

"3. वे सभी व्यक्ति प्रतिवादियों के रूप में संयोजित किए जा सकेंगे जहां—

(क) एक ही कार्य या संव्यवहार या कार्यों या संव्यवहारों की आवली के बारे में या उससे पैदा होने वाले अनुतोष पाने का कोई अधिकार उनके विरुद्ध चाहे संयुक्ततः या चाहे पृथक्तः या अनुकल्पतः वर्तमान होना अभिकथित है; और

(ख) यदि ऐसे व्यक्तियों के विरुद्ध पृथक्-पृथक् वाद लाए जाते तो विधि या तथ्य का एक ही प्रश्न पैदा होता ।";

(iii) नियम 3 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

जहां प्रतिवादियों के संयोजन से उलझन या विचारण में विलम्ब होगा वहां पृथक् विचारण का आदेश देने की शक्ति ।

"3क. जहां कि न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि प्रतिवादियों के संयोजन से वाद के विचारण में उलझन या विलम्ब होगा वहां न्यायालय पृथक् विचारण का आदेश या ऐसा अन्य आदेश कर सकेगा जो समीचीन हो ।";

(iv) नियम 8 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा; अर्थात् :—

"8. (1) जहां कि एक ही वाद में एक ही हित रखने वाले बहुत से व्यक्ति हों वहां,—

एक ही हित में सब व्यक्तियों की ओर से एक व्यक्ति वाद ला सकेगा या प्रतिरक्षा कर सकेगा।

(क) ऐसे हितबद्ध सभी व्यक्तियों की ओर से या उनके फ़ायदे के लिए न्यायालय की अनुज्ञा से ऐसे व्यक्तियों में से एक या अधिक वाद ला सकेंगे या उनके विरुद्ध वाद लाया जा सकेगा या वे ऐसे वाद में प्रतिरक्षा कर सकेंगे;

(ख) न्यायालय यह निदेश दे सकेगा कि इस प्रकार हितबद्ध सभी व्यक्तियों की ओर से या उनके फ़ायदे के लिए ऐसे व्यक्तियों में से एक या अधिक वाद ला सकेंगे या उनके विरुद्ध वाद लाए जा सकेंगे या वे ऐसे वाद की प्रतिरक्षा कर सकेंगे।

(2) न्यायालय ऐसे प्रत्येक मामले में जहां उपनियम (1) के अधीन अनुज्ञा या निदेश दिया गया है वादी के खर्चे पर इस प्रकार हितबद्ध सभी व्यक्तियों को या तो वैयक्तिक तामील करा कर या जहां व्यक्तियों की संख्या या किसी अन्य कारण से ऐसी तामील युक्तियुक्त रूप से साध्य नहीं है वहां सार्वजनिक विज्ञापन द्वारा, जैसा भी न्यायालय हर एक मामले में निर्दिष्ट करे, वाद के संस्थित किए जाने की सूचना वादी के खर्चे पर देगा।

(3) कोई व्यक्ति जिसकी ओर से या जिसके फ़ायदे के लिए उपनियम (1) के अधीन कोई वाद संस्थित या प्रतिरक्षित किया जाता है उस वाद में पक्षकार बनाए जाने के लिए न्यायालय को आवेदन कर सकेगा।

(4) आदेश 23 के नियम 1 के उपनियम (1) के अधीन ऐसे वाद में दावे के किसी भाग का अधित्यजन नहीं किया जाएगा और उस आदेश के नियम 1 के उपनियम (3) के अधीन ऐसे वाद का प्रत्याहरण नहीं किया जाएगा और ऐसे वाद में कोई करार, समझौता या तुष्टि अभिलिखित नहीं की जाएगी जब तक कि न्यायालय ने वादी के खर्चे पर सभी हितबद्ध व्यक्तियों को उपनियम (2) में विनिर्दिष्ट रीति से सूचना न दे दी हो।

(5) जहां कि ऐसे वाद में वाद लाने वाला या प्रतिरक्षा करने वाला कोई व्यक्ति वाद या प्रतिरक्षा में सम्यक् तत्परता से कार्यवाही नहीं करता है वहां न्यायालय उस वाद में वही हित रखने वाले किसी अन्य व्यक्ति को उसके स्थान पर रख सकेगा है।

(6) इस नियम के अधीन वाद में पारित डिक्री उन सभी व्यक्तियों पर आबद्धकर होगी जिनकी ओर से या जिनके फ़ायदे के लिए, यथास्थिति, वाद संस्थित या प्रतिरक्षित किया गया है।

स्पष्टीकरण—यह अवधारण करने के प्रयोजन के लिए कि क्या वे व्यक्ति जो वाद ला रहे हैं या जिनके विरुद्ध वाद लाया गया है या जो प्रतिरक्षा कर रहे हैं किसी वाद में एक सा हित रखते हैं या नहीं, यह आवश्यक नहीं कि यह साबित किया जाए कि ऐसे व्यक्तियों का वही वादहेतुक है जो उन व्यक्तियों का है जिनकी ओर से या जिनके फ़ायदे के लिए, यथास्थिति, वे वाद ला रहे हैं या उनके विरुद्ध वाद लाया गया है या वे प्रतिरक्षा कर रहे हैं।" ;

(v) नियम 8 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

न्यायालय की कार्यवाही में राय देने या भाग लेने के लिए किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को अनुज्ञात करने की शक्ति।

"8क. यदि वाद का विचारण करते समय न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह किसी ऐसे विधिक प्रश्न से हितबद्ध है जो किसी वाद में प्रत्यक्ष और सारभूत रूप से अन्तर्वलित है और लोकहित में ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को उस विधिक प्रश्न पर अपनी राय देने के लिए अनुज्ञात करना आवश्यक है तो वह ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को ऐसी राय देने के लिए और वाद की कार्यवाहियों में ऐसे भाग लेने के लिए अनुज्ञात कर सकेगा है जो न्यायालय विनिर्दिष्ट करे।";

(vi) नियम 9 में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु इस नियम की कोई बात किसी आवश्यक पक्षकार के असंयोजन को लागू नहीं होगी।";

(vii) नियम 10 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

न्यायालय की किसी प्लीडर से उसको संबोधित करने के लिए अनुरोध करने की शक्ति।

"10क. न्यायालय, स्वविवेकानुसार, किसी भी प्लीडर से यह अनुरोध कर सकता है कि वह विवादित मामले में उसके विनिश्चय से प्रभावित होने के लिए सम्भावित किसी हित के बारे में उसे संबोधित करे यदि ऐसे प्रभावित होने के लिए सम्भावित हित वाले पक्षकार का प्लीडर द्वारा प्रतिनिधित्व नहीं किया जाता है।"।

आदेश 2 का संशोधन।

53. प्रथम अनुसूची के आदेश 2 के नियम 6 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

न्यायालय की पृथक् विचारण का आदेश देने की शक्ति।

"6. जहां कि न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि एक ही वाद में वादहेतुकों के संयोजन से विचारण में उलझन या विलम्ब हो जाएगा या ऐसा करना अन्यथा असुविधाजनक होगा तो न्यायालय पृथक् विचारण का आदेश दे सकेगा या ऐसा अन्य आदेश दे सकेगा जो न्याय के हित में हो।"।

आदेश 3 का संशोधन।

54. प्रथम अनुसूची के आदेश 3 में,—

(i) नियम 4 में,—

(क) उपनियम (2) में,—

(i) "फाइल की जाएगी और" शब्दों के स्थान पर "फाइल की जाएगी और उपधारा (1) के प्रयोजनों के लिए" शब्द रखे जाएंगे;

(ii) अन्त में निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"स्पष्टीकरण—इस उपनियम के प्रयोजनों के लिए निम्नलिखित को वाद की कार्यवाही समझा जाएगा,—

(क) निर्णय के पुनर्विलोकन के लिए आवेदन;

(ख) इस संहिता की धारा 144 या धारा 152 के अधीन आवेदन;

(ग) वाद में किसी डिक्री या आदेश की अपील; और

(घ) वाद में पेश या फाइल की गई दस्तावेजों की प्रतियां प्राप्त करने या उस दस्तावेजों को वापस करने के प्रयोजन के लिए या वाद के सम्बन्ध में न्यायालय में संदत्त धन का प्रतिदाय प्राप्त करने के लिए आवेदन या कार्य;" ;

(ख) उपनियम (3) के स्थान पर निम्नलिखित उपनियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

"(3) उपनियम (2) की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह,—

(क) प्लीडर और उसके कक्षीकार के बीच उस अवधि का विस्तार करती है जिसके लिए प्लीडर अनुबन्धित किया गया है, या

(ख) उस न्यायालय से भिन्न जिसके लिए प्लीडर अनुबन्धित किया गया था, किसी न्यायालय द्वारा जारी की गई किसी सूचना या दस्तावेज को प्लीडर पर तामील करना प्राधिकृत करती है उस दशा को छोड़ कर जहां कक्षीकार उपनियम (1) में निर्दिष्ट दस्तावेज में ऐसी तामील के लिए अभिव्यक्त रूप से सहमत हो गया है।" ;

(ii) नियम 5 में "जिसकी तामील किसी पक्षकार के प्लीडर पर कर दी गई है" शब्दों के स्थान पर "जिसकी तामील ऐसे प्लीडर पर कर दी गई है जिसे किसी पक्षकार की ओर से न्यायालय में कार्य करने के लिए सम्यक् रूप से नियुक्त किया गया है" शब्द रखे जाएंगे;

(iii) नियम 6 के उपनियम (2) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तः-स्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(3) न्यायालय वाद के किसी ऐसे पक्षकार को, जिसका न्यायालय की अधिकारिता के भीतर निवास करने वाला कोई मान्यता-प्राप्त अभिकर्ता न हो, अथवा जिसका कोई ऐसा प्लीडर न हो, जो न्यायालय में उसकी ओर में कार्य करने के लिए नियुक्त किया गया हो, यह आदेश वाद के किसी भी प्रक्रम में दे सकेगा कि वह अपनी ओर से आदेशिका की तामील का प्रतिग्रहण करने के लिए ऐसा अभिकर्त्ता विनिर्दिष्ट समय के भीतर नियुक्त करे जो न्यायालय की अधिकारिता के भीतर निवास करता है।"।

आदेश 5 का संशोधन।

55. प्रथम अनुसूची के आदेश 5 में,—

(i) नियम 1 के उपनियम (1) के परन्तुक के पश्चात् निम्नलिखित एक और परन्तुक अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु यह और कि न्यायालय प्रतिवादी को अपनी उपसंजाति की तारीख पर अपनी प्रतिरक्षा का लिखित कथन, यदि कोई हो, फाइल करने का निदेश दे सकेगा और समन से इस आशय की प्रविष्टि कराएगा";

(ii) नियम 15 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

जहां कि तामील प्रतिवादी के कुटुम्ब के वयस्क सदस्य पर की जा सकेगी।

"15. जहां कि किसी वाद में प्रतिवादी अपने निवास स्थान से उस समय अनुपस्थित हो जब उस पर समन की तामील उसके निवास स्थान पर की जानी ईप्सित है और युक्तियुक्त समय के अन्दर उसके निवास स्थान पर पाए जाने की संभाव्यता न हो और समन की तामील का उसकी ओर से प्रतिग्रहण करने के लिए सशक्त उसका कोई अभिकर्त्ता

न हो, वहां तामील प्रतिवादी के कुटुम्ब के ऐसे किसी वयस्क सदस्य पर, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, की जा सकेगी, जो उसके साथ निवास कर रहा है।

स्पष्टीकरण—इस नियम के अर्थ के अन्दर सेवक कुटुम्ब का सदस्य नहीं है । ;

(iii) नियम 17 में "या जहां कि तामील करने वाला आफिसर पूरी सम्यक् और युक्तियुक्त तत्परता बरतने के पश्चात् प्रतिवादी को न पा सके" शब्दों के पश्चात् "या जहां प्रतिवादी अपने निवास स्थान से उस समय अनुपस्थित है, जब उस पर समन की तामील उसके निवास स्थान पर की जानी ईप्सित है और युक्तियुक्त समय के अन्दर उसके निवास स्थान, पर पाए जाने की संभाव्यता न हो" शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे ;

(iv) नियम 19 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

वैयक्तिक तामील के अतिरिक्त डाक द्वारा तामील के लिए समन का एक साथ जारी किया जाना ।

"19क. (1) न्यायालय नियम 9 से 19 में (दोनों सहित) उपबन्धित रीति से तामील करने के लिए समन निकालने के साथ ही साथ यह भी निदेश देगा कि समन की तामील प्रतिवादी को, या तामील का प्रतिग्रहण करने के लिए सशक्त उसके अभिकर्ता को सम्बोधित रसीदी रजिस्ट्री डाक द्वारा उस स्थान पर की जाए, जहां प्रतिवादी या उसका अभिकर्ता वस्तुतः और स्वेच्छया निवास करता है, कारबार करता है, या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करता है :

परन्तु जहां कि मामले की परिस्थितियों में न्यायालय इसे अनावश्यक समझे वहां इस उपनियम की किसी बात से न्यायालय से यह अपेक्षा नहीं की जाएगी कि वह रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा तामील करने के लिए समन निकाले ।

(2) जहां कि न्यायालय प्रतिवादी या उसके अभिकर्ता द्वारा हस्ताक्षरित होने का तात्पर्य रखने वाली अभिस्वीकृति प्राप्त करता है, या जहां कि न्यायालय डाक वस्तु सहित समन ऐसे पृष्ठांकन के साथ वापस प्राप्त करता है, जो डाक कर्मचारी द्वारा इस आशय से किया गया तात्पर्यित है कि प्रतिवादी या उसके अभिकर्ता ने उस डाक वस्तु का, जिसमें समन है, परिदान ग्रहण करने से इंकार कर दिया है, तो समन निकालने वाला न्यायालय यह घोषणा करेगा कि प्रतिवादी पर समन सम्यक्: रूप से तामील की गई थी :

परन्तु जहां समन उचित रूप से पता लिख कर, उस पर पूर्व संदाय करके और रसीदी रजिस्ट्री डाक द्वारा सम्यक् रूप से भेजा गया था, वहां इस उपनियम में निर्दिष्ट घोषणा इस तथ्य के होते हुए भी की जाएगी कि अभिस्वीकृति खो जाने, इधर-उधर हो जाने या किसी अन्य कारण से समन निकालने की तारीख से तीस दिन के अन्दर न्यायालय को प्राप्त नहीं हुई है ।";

(v) नियम 20 के उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(1क) जहां उपनियम (1) के अधीन कार्य करने वाला न्यायालय समाचारपत्र में विज्ञापन द्वारा तामील का आदेश करता है, वहां वह समाचारपत्र ऐसा दैनिक समाचारपत्र होगा जिसका परिचालन

उस स्थानीय क्षेत्र में होता हो, जिसमें प्रतिवादी का अन्तिम बार वस्तुतः और स्वेच्छया निवास या कारबार करना या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करना ज्ञात है ।" ;

(vi) नियम 20क का लोप किया जाएगा ;

(vii) नियम 25 में, —

(क) प्रथम परन्तुक में "पाकिस्तान में निवास करता है" शब्दों के स्थान पर "बंगलादेश या पाकिस्तान में निवास करता है" शब्द रखे जाएंगे ;

(ख) द्वितीय परन्तुक में "पाकिस्तान में का लोक आफ़िसर है (जो पाकिस्तानी सेना, नौसेना या वायु सेना का नहीं है)" शब्दों और कोष्ठकों के स्थान पर "बंगलादेश या पाकिस्तान में का लोक आफ़िसर है (जो यथास्थिति बंगलादेश की या पाकिस्तानी सेना, नौसेना या वायु सेना का नहीं है)" शब्द और कोष्ठक रखे जाएंगे ;

(viii) नियम 26 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखे जाएंगे :—

राजनीतिक अभिकर्ता या न्यायालय की मार्फ़त विदेशी राज्यक्षेत्र में तामील ।

"26. जहां कि —

(क) केन्द्रीय सरकार में निहित किसी वैदेशिक अधिकारिता के प्रयोग में किसी ऐसे वैदेशिक राज्यक्षेत्र में, जिसमें प्रतिवादी वस्तुतः और स्वेच्छया निवास करता है, कारबार करता है या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करता है, ऐसा राजनीतिक अभिकर्ता नियुक्त किया गया है, या न्यायालय स्थापित किया गया है या चालू रखा गया है, जो उस समन की तामील करने के लिए सशक्त है, जो इस संहिता के अधीन न्यायालय द्वारा निकाला जाए, अथवा

(ख) केन्द्रीय सरकार ने किसी ऐसे न्यायालय के बारे में, जो किसी ऐसे राज्यक्षेत्र में स्थित है और पूर्वोक्त जैसी किसी अधिकारिता के प्रयोग में स्थापित नहीं किया गया या चालू नहीं रखा गया है, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा घोषणा की है कि न्यायालय द्वारा इस संहिता के अधीन निकाले गए समन की ऐसे न्यायालय द्वारा तामील विधिमान्य तामील समझी जाएगी,

वहां समन ऐसे राजनितिक अभिकर्ता या न्यायालय को प्रतिवादी पर तामील किए जाने के प्रयोजन के लिए डाक द्वारा या अन्यथा या यदि केन्द्रीय सरकार द्वारा ऐसा निदिष्ट किया गया हो तो उस सरकार के विदेशी मामलों से सम्बन्धित मंत्रालय की मार्फ़त या ऐसी अन्य रीति में, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए, भेजा जा सकेगा और यदि राजनीतिक अभिकर्ता या न्यायालय समन को ऐसे राजनीतिक अभिकर्ता द्वारा या उस न्यायालय के न्यायाधीश या अन्य आफ़िसर के द्वारा किए गए तात्पर्यित इस पृष्ठांकन के सहित लौटा देता है कि समन की तामील प्रतिवादी पर एतस्मिन् पूर्व निर्दिष्ट प्रकार से की जा चुकी है, तो ऐसा पृष्ठांकन तामील का साक्ष्य समझा जाएगा ।

विदेशों के आफ़िसरों को समन का भेजा जाना ।

26क. जहां कि केन्द्रीय सरकार ने राजपत्र में अधिसूचना द्वारा किसी विदेशी राज्यक्षेत्र के बारे में यह घोषणा कर दी है कि उस विदेशी राज्यक्षेत्र में वस्तुतः और स्वेच्छया निवास करने वाले या कारबार करने वाले या अभिलाभ के लिए स्वयं काम करने वाले प्रतिवादियों पर तामील किए जाने वाले समन विदेशी राज्यक्षेत्र की सरकार के ऐसे आफ़िसर को, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट किया गया हो, भेजे जा सकेंगे, वहां समन ऐसे आफ़िसर को विदेशी मामलों से सम्बद्ध भारत सरकार के मंत्रालय की मार्फ़त या ऐसी अन्य रीति में, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए, भेजे जा सकेंगे और यदि ऐसा आफ़िसर किसी ऐसे समन को अपने द्वारा किए गए तात्पर्यित इस पृष्ठांकन के सहित लौटा देता है कि समन की तामील प्रतिवादी पर की जा चुकी है, तो ऐसा पृष्ठांकन तामील का साक्ष्य समझा जाएगा ।" ।

आदेश 6 का संशोधन ।

56. प्रथम अनुसूची के आदेश 6 में—

(i) नियम 2 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

अभिवचन में तात्विक तथ्यों का, न कि साक्ष्य का कथन होगा ।

"2. (1) हर अभिवचन में उन तात्विक तथ्यों का, जिन पर अभिवचन करने वाला पक्षकार, यथास्थिति, अपने दावे या अपनी प्रतिरक्षा के लिए निर्भर करता है, और केवल उन तथ्यों का, न कि उस साक्ष्य का जिसके द्वारा वे साबित किए जाने हैं, संक्षिप्त कथन अन्तर्विष्ट होगा ।

(2) हर अभिवचन आवश्यकतानुसार पैराओं में विभक्त किया जाएगा, जो यथाक्रम संख्यांकित किए जाएंगे । हर अभिवचन सुविधानुसार पृथक् पैरा में किया जाएगा ।

(3) अभिवचन में तारीखें, राशियां और संख्याएं अंकों और शब्दों में भी अभिव्यक्त की जाएंगी ।";

(ii) नियम 14 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्:—

सूचना की तामील के लिए पता ।

"14क. (1) पक्षकार द्वारा फाइल किए जाने वाले हर अभिवचन के साथ पक्षकार के पते के बारे में विहित प्ररूप में कथन, नियम 14 में यथा उपबन्धित रूप में हस्ताक्षरित करके देना होगा ।

(2) ऐसे पते को, न्यायालय में सम्यक् रूप से भरे गए प्ररूप और सत्यापित याचिका के साथ पक्षकार के नए पते का कथन दाखिल करके, समय-समय पर परिवर्तित किया जा सकेगा ।

(3) उपनियम (1) के अधीन किए गए कथन में दिए गए पते को पक्षकार का "रजिस्ट्रीकृत पता" कहा जाएगा और जब तक यथापूर्वोक्त रूप में सम्यक्तः परिवर्तित न किया गया हो, तब तक वह वाद में या उसमें दी गई किसी डिक्री या किए गए किसी आदेश की अपील में सभी आदेशिकाओं की तामील के प्रयोजनों के लिए और निष्पादन के प्रयोजन के लिए पक्षकार का पता समझा जाएगा और यथापूर्वोक्त के अधीन रहते हुए इस मामले या विषय के अन्तिम निर्धारण के पश्चात् दो वर्षों की कालावधि के लिए वही पता माना जाएगा ।

(4) किसी आदेशिका की तामील पक्षकार पर सभी बातों के बारे में उसके रजिस्ट्रीकृत पते पर ऐसे की जा सकेगी, मानो वह पक्षकार वहां निवास करता रहा है ।

(5) जहां कि न्यायालय को यह पता चले कि पक्षकार का रजिस्ट्रीकृत पता अधूरा, मिथ्या या काल्पनिक है, वहां न्यायालय या तो स्वप्रेरणा से या किसी पक्षकार के आवेदन पर—

(क) ऐसे मामले में जहां ऐसा रजिस्ट्रीकृत पता वादी द्वारा दिया गया था वहां वाद के रोके जाने का आदेश दे सकेगा; अथवा

(ख) ऐसे मामले में जहां ऐसा रजिस्ट्रीकृत पता प्रतिवादी द्वारा दिया गया था, वहां उसकी प्रतिरक्षा काट दी जाएगी और वह उसी स्थिति में रखा जाएगा, मानो उसने कोई प्रतिरक्षा पेश नहीं की थी ।

(6) जहां कि उपनियम (5) के अधीन किसी वाद को रोक दिया जाता है या प्रतिरक्षा काट दी जाती है वहां, यथास्थिति, वादी या प्रतिवादी अपना सत्य पता देने के पश्चात् न्यायालय से यथास्थिति रोक-आदेश या प्रतिरक्षा काटने के आदेश को अपास्त करने वाले आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा ।

(7) यदि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि पक्षकार उचित समय पर अपना सत्य पता फाइल करने में किसी पर्याप्त कारणवश रोक दिया गया था, तो वह रोक-आदेश या प्रतिरक्षा काटने के आदेश को खर्चे के बारे में ऐसे निबन्धनों पर, या अन्यथा जो वह ठीक समझे, अपास्त कर सकेगा और, यथास्थिति, वाद या प्रतिरक्षा की कार्यवाही के लिए दिन नियत करेगा ।

(8) इस नियम की कोई बात न्यायालय को आदेशिका की तामील किसी अन्य पते पर किए जाने का निदेश देने से, यदि वह किसी कारणवश ऐसा करना ठीक समझे तो, नहीं रोकेगी ।" ;

(iii) नियम 16 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात्:—

अभिवचन का काट दिया जाना ।

"16. न्यायालय कार्यवाहियों के किसी भी प्रक्रम में आदेश दे सकेगा कि किसी भी अभिवचन में की कोई भी ऐसी बात काट दी जाए या संशोधित कर दी जाए,—

(क) जो अनावश्यक, कलंकात्मक, तुच्छ या तंग करने वाली हो, अथवा

(ख) जो वाद के ऋजु विचारण पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली या उसमें उलझन डालने वाली या विलम्ब करने वाली हो, अथवा

(ग) जो अन्यथा न्यायालय की आदेशिका का दुरुपयोग है ।" ;

* * *

आदेश 7 का संशोधन ।

57. प्रथम अनुसूची के आदेश 7 में,—

(i) नियम 2 में "वाद लाता है वहां दावाकृत रकम वादपत्र में लगभग मात्रा में कथित की जाएगी" शब्दों के स्थान पर "या प्रतिवादी के कब्जे में जंगम वस्तुओं के लिए या ऐसे ऋणों के लिए, जिनका मूल्य वह युक्तियुक्त तत्परता का प्रयोग करने के पश्चात् प्राक्कलित नहीं कर सकता है, वाद लाता है, वहां दावाकृत रकम वादपत्र में लगभग मात्रा में कथित की जाएगी" शब्द रखे जाएंगे;

(ii) नियम 6 में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात्:—

"परन्तु न्यायालय वादी को वाद में न दिए गए किसी आधार पर, यदि ऐसा आधार वाद में उपवर्णित आधारों से असंगत नहीं है, तो परिसीमा विधि से छूट का दावा करने की अनुमति दे सकेगा । ";

(iii) नियम 9 के उपनियम (1) में "जितने प्रतिवादी हैं, उस दशा में के सिवाय उपस्थित करेगा" शब्दों के स्थान पर "जितने प्रतिवादी हैं, ऐसे समय के अन्दर जो न्यायालय द्वारा नियत किया जाए या उसके द्वारा समय-समय पर बढ़ाया जाए, उस दशा में के सिवाय उपस्थित करेगा" शब्द रखे जाएंगे;

(iv) नियम 9 के उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तः स्थापित किया जाएगा, अर्थात्:—

"(1क) वादी उपनियम (1) के अधीन न्यायालय द्वारा नियत किए गए या उसके द्वारा बढ़ाए गए समय के अन्दर प्रतिवादियों पर समनों की तामील के लिए अपेक्षित फीस का संदाय करेगा ।";

(v) नियम 10 के उपनियम (1) में अन्त में निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :–

"**स्पष्टीकरण**—सन्देहों के निराकरण के लिए एतद्द्वारा यह घोषित किया जाता है कि अपील या पुनरीक्षण न्यायालय वाद में पारित डिक्री को अपास्त करने के पश्चात् इस उपनियम के अधीन वादपत्र के लौटाए जाने का निदेश दे सकेगा।" ;

(vi) नियम 10 में "वादपत्र" शब्द के स्थान पर "नियम 10 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, वादपत्र" शब्द अंक और अक्षर रखे जाएंगे ;

(vii) नियम 10 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

जहां वादपत्र लौटाए जाने के पश्चात् फाइल किया जाता है, वहां न्यायालय में उपसंजाति के लिए तारीख नियत करने की न्यायालय की शक्ति ।

"10क. (1) जहां कि किसी वाद में प्रतिवादी के उपसंजात होने के पश्चात् न्यायालय की यह राय है कि वादपत्र लौटाया जाना चाहिए, वहां वह ऐसा करने के पूर्व वादी को अपना विनिश्चय प्रज्ञापित करेगा ।

(2) जहां कि वादी को उपनियम (1) के अधीन प्रज्ञापना दी गई हो, वहां वादी न्यायालय से—

(क) उस न्यायालय को विनिर्दिष्ट करते हुए जिसमें वह वादपत्र के लौटाए जाने के पश्चात् वादपत्र प्रस्तुत करने की प्रस्थापना करता है ;

(ख) यह प्रार्थना करते हुए कि न्यायालय उक्त न्यायालय में पक्षकारों की उपसंजाति के लिए तारीख नियत करे, और

(ग) यह प्रार्थना करते हुए कि इस प्रकार नियत तारीख की सूचना उसे और प्रतिवादी को दी जाए;

आवेदन कर सकेगा ।

(3) जहां कि वादी द्वारा उपनियम (2) के अधीन आवेदन किया जाता है, वहां न्यायालय वादपत्र लौटाए जाने के पूर्व और इस बात के होते हुए भी कि उसके द्वारा वादपत्र के लौटाए जाने

का आदेश इस आधार पर किया गया था कि उसे वाद के विचारण करने की अधिकारिता नहीं थी,—

(क) उस न्यायालय में, जिसमें वादपत्र उपस्थित किया जाना प्रस्थापित है पक्षकारों की उपसंजाति के लिए तारीख नियत करेगा, और

(ख) उपसंजाति की ऐसी तारीख की सूचना वादी और प्रतिवादी को देगा ।

(4) जहां कि उपनियम (3) के अधीन उपसंजाति की तारीख की सूचना दी जाती है, वहां —

(क) उस न्यायालय के लिए, जिसमें वादपत्र को उसके लौटाए जाने के पश्चात् उपस्थित किया जाता है, तब तक यह आवश्यक नहीं होगा कि वह वाद में उपसंजाति के लिए समन प्रतिवादी पर तामील करे जब तक कि वह न्यायालय लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से अन्यथा निदेश न दे; और

(ख) उक्त सूचना को उस न्यायालय में, जिसमें वादपत्र को लौटाने वाले न्यायालय द्वारा इस प्रकार नियत तारीख को वादपत्र उपस्थित किया जाता है, प्रतिवादी की उपसंजाति के लिए समन समझा जाएगा ।

(5) जहां कि न्यायालय वादी द्वारा उपनियम (2) के अधीन किए गए आवेदन को मंजूर कर लेता है वहां वादी वादपत्र लौटाए जाने के आदेश के विरुद्ध अपील करने का हकदार नहीं होगा ।

समुचित न्यायालय में वाद अन्तरित करने की अपील न्यायालय की शक्ति ।

10ख. (1) जहां कि वादपत्र के लौटाए जाने के आदेश के विरुद्ध अपील में अपील की सुनवाई करने वाला न्यायालय ऐसे आदेश की पुष्टि करता है, वहां अपील न्यायालय, यदि वादी आवेदन द्वारा ऐसी वांछा करे तो वादपत्र लौटाते समय वादी को यह निदेश दे सकेगा कि वह वाद को उस न्यायालय में, जिसमें वाद संस्थित किया जाना चाहिए था, (चाहे ऐसा न्यायालय उस राज्य के अन्दर हो या बाहर जिसमें अपील की सुनवाई करने वाला न्यायालय स्थित है) परिसीमा अधिनियम, 1963 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए यह वाद फाइल करे और उस न्यायालय में, जिसमें वादपत्र फाइल किए जाने का निदेश दिया जाता है, पक्षकारों को उपसंजाति के लिए तारीख नियत कर सकेगा और जब इस प्रकार से तारीख नियत कर दी जाती है, तब उस न्यायालय के लिए, जिसमें वादपत्र फाइल किया गया है, वाद में उपसंजाति के लिए समन प्रतिवादी पर तामील करना तब तक आवश्यक नहीं होगा जब तक कि वह न्यायालय अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से अन्यथा निदेश न दे ।

1963 का 36

(2) न्यायालय द्वारा उपनियम (1) के अधीन किया गया कोई निदेश पक्षकारों के उन अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होगा, जो उस न्यायालय की, जिसमें वादपत्र फाइल किया गया है, वाद का विचारण करने की अधिकारिता को प्रश्नगत करने के सम्बन्ध में हैं ।";

(viii) नियम 11 में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु मूल्यांकन की शुद्धि के लिए या अपेक्षित स्टाम्प कागज के प्रदाय के लिए न्यायालय द्वारा नियत समय तब तक

नहीं बढ़ाया जाएगा, जब तक कि न्यायालय का लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से यह समाधान न हो जाए कि वादी किसी असाधारण प्रकृति के कारण से न्यायालय द्वारा नियत समय के भीतर, यथास्थिति, मूल्यांकन की शुद्धि करने या अपेक्षित स्टाम्प कागज के प्रदाय से रोक दिया गया था, और ऐसे समय का बढ़ाया जाना इन्कार किए जाने से वादी के प्रति गंभीर अन्याय होगा।

आदेश 8 का संशोधन।

58. प्रथम अनुसूची के आदेश 8 में, —

(i) "लिखित कथन और मुजरा" शीर्षक के स्थान पर "लिखित कथन, मुजरा और प्रतिदावा" शब्द रखे जाएंगे ;

(ii) नियम 1 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनः-संख्यांकित किया जाएगा, और—

(क) इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपनियम (1) में "और यदि न्यायालय द्वारा वह ऐसे अपेक्षित किया जाए, तो उपस्थित करेगा" शब्दों का लोप कर दिया जाएगा ;

(ख) इस प्रकार से पुनःसंख्यांकित उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

"(2) जहां कि प्रतिवादी मुजरा या प्रतिदावा के लिए अपनी प्रतिरक्षा या दावों का समर्थन किसी दस्तावेज पर, (चाहे वह दस्तावेज उसके कब्जे या उसकी शक्ति में हो या न हो) निर्भर करता है, वहां वह एक सूची में ऐसी दस्तावेज की प्रविष्टि करेगा, और —

(क) यदि लिखित कथन उपस्थित किया जाता है, तो लिखित कथन के साथ उस सूची को उपाबद्ध करेगा :

परन्तु जहां कि प्रतिवादी अपने लिखित कथन में ऐसी दस्तावेज के आधार पर, जो उसके कब्जे या शक्ति में है, मुजरा का दावा करता है, या प्रतिदावा करता है, वहां वह लिखित कथन के उपस्थित किए जाने के समय पर न्यायालय में उसे पेश करेगा, और उसी समय वह दस्तावेज या उसकी प्रतिलिपि लिखित कथन के साथ फाइल किए जाने के अरिदत्त करेगा ;

(ख) यदि लिखित कथन उपस्थित नहीं किया जाता है, तो वाद की प्रथम सुनवाई पर न्यायालय में उस सूची को उपस्थित करेगा।

(3) जहां ऐसी कोई दस्तावेज प्रतिवादी के कब्जे या शक्ति में नहीं है, वहां वह, जहां भी संभव हो, यह कथन करेगा, कि वह किसके कब्जे और किसकी शक्ति में है।

(4) यदि ऐसी कोई सूची इस प्रकार से उपाबद्ध या उपस्थित नहीं की जाती है, तो प्रतिवादी को इस

प्रयोजन के लिए ऐसी और कालावधि मंजूर की जाएगी, जो न्यायालय ठीक समझे ।

(5) ऐसी दस्तावेज, जो उपनियम (2) में निर्दिष्ट सूची में प्रविष्ट की जानी चाहिए, और जो इस प्रकार से प्रविष्ट नहीं की गई है, न्यायालय की इजाजत के बिना वाद की सुनवाई में प्रतिवादी की ओर से साक्ष्य में नहीं ली जाएगी ।

(6) उपनियम (5) की कोई बात ऐसी दस्तावेजों को लागू नहीं होगी, जो वादी के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा के लिए पेश किए गए हों, या वादपत्र फाइल किए जाने के पश्चात् वादी द्वारा उठाए गए किसी मामले के उत्तर में हों, या किसी साक्षी को केवल उसकी स्मरण शक्ति ताजी करने के लिए दिए गए हों ।

(7) जहां कि न्यायालय उपनियम (5) के अधीन इजाजत देता है, वहां वह ऐसा करने के लिए अपने कारण लेखबद्ध करेगा और ऐसी कोई इजाजत तब तक नहीं दी जाएगी जब तक कि उपनियम (2) में निर्दिष्ट सूची में दस्तावेज की प्रविष्टि न की जाने के लिए न्यायालय के समाधानप्रद रूप में पर्याप्त कारण दर्शित नहीं कर दिया जाता ।" ;

(iii) नियम 5 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया जाएगा और इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

"(2) जहां कि प्रतिवादी ने अभिवचन फाइल नहीं किया है, वहां न्यायालय के लिए वादपत्र में अन्तर्विष्ट तथ्यों के आधार पर निर्णय सुनाना, निःशक्त व्यक्ति के विरुद्ध सुनाने के सिवाय, विधिपूर्ण होगा, किन्तु न्यायालय किसी ऐसे तथ्य को साबित किए जाने की अपेक्षा अपने विवेकानुसार कर सकेगा ।

(3) न्यायालय उपनियम (1) के परन्तुक के अधीन या उपनियम (2) के अधीन अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने में इस तथ्य पर सम्यक् ध्यान देगा कि क्या वादी किसी प्लीडर को नियुक्त कर सकता था या उसने किसी प्लीडर को नियुक्त किया है ।

(4) इस उपनियम के अधीन जब कभी निर्णय सुनाया जाता है तब ऐसे निर्णय के अनुसार डिक्री तैयार की जाएगी और ऐसी डिक्री पर वही तारीख दी जाएगी, जिस तारीख को निर्णय सुनाया गया था ।";

(iv) नियम 6 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

प्रतिवादी द्वारा प्रतिदावा ।

"6क. (1) वाद में प्रतिवादी नियम 6 के अधीन मुजरा के अभिवचन के अपने अधिकार के अतिरिक्त वादी के दावे के विरुद्ध प्रतिदावे के रूप में किसी ऐसे अधिकार या दावे को, जो वादी के विरुद्ध प्रतिवादी को, वाद फाइल किए जाने के पूर्व या पश्चात् किन्तु

प्रतिवादी द्वारा अपनी प्रतिरक्षा परिदत्त किए जाने के पूर्व या अपनी प्रतिरक्षा परिदत्त किए जाने के लिए परिसीमित समय का अवसान हो जाने के पूर्व, किसी वाद-हेतुक के बारे में अर्जित हुआ हो, उठा सकेगा चाहे ऐसा प्रतिदावा नुकसानी के दावे के रूप में हो या न हो :

परन्तु ऐसा प्रतिदावा न्यायालय की अधिकारिता की आर्थिक परिसीमाओं से अधिक नहीं होगा ।

(2) ऐसे प्रतिदावे का प्रभाव वैसा ही होगा जैसा कि प्रतीपवाद का होता है जिससे न्यायालय एक ही वाद में मूल दावे और प्रतिदावे दोनों के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय सुना सकेगा ।

(3) वादी को इस बात की स्वतन्त्रता होगी कि वह प्रतिवादी के प्रतिदावे के उत्तर में लिखित कथन ऐसी कालावधि के अन्दर, जो न्यायालय द्वारा नियत की जाए, फाइल करे ।

(4) प्रतिदावे को वादपत्र के रूप में माना जाएगा और उसे वही नियम लागू होंगे जो वादपत्र को लागू होते हैं ।

प्रतिदावे का कथन किया जाना ।

6ख. जहां कि कोई प्रतिवादी प्रतिदावे के अधिकार का समर्थन करने वाले किसी आधार पर निर्भर करता है, वहां वह अपने लिखित कथन में यह विनिर्दिष्ट रूप में कथन करेगा कि वह ऐसा प्रतिदावे के रूप में कर रहा है ।

प्रतिदावे का अपवर्जन ।

6ग. जहां कि प्रतिवादी प्रतिदावा पेश करता है और वादी यह दलील देता है कि एतद्द्वारा पेश किए गए दावे का निपटारा प्रतिदावे के रूप में नहीं बल्कि स्वतन्त्र वाद में किया जाना चाहिए, वहां वादी प्रतिदावे के सम्बन्ध में विवाद्यकों के तय किए जाने के पूर्व किसी भी समय न्यायालय से इस आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा कि ऐसे प्रतिदावे का अपवर्जन किया जाए और न्यायालय ऐसे आवेदन की सुनवाई करने पर ऐसा आदेश कर सकेगा, जो वह ठीक समझे ।

वाद का बन्द किया जाना ।

6घ. यदि किसी ऐसे मामले में जिसमें प्रतिवादी प्रतिदावा पेश करता है, वादी का वाद रोक दिया जाता है, बन्द या खारिज कर दिया जाता है, तो इसके बावजूद प्रतिदावे पर कार्यवाही की जा सकेगी ।

प्रतिदावे का उत्तर देने में वादी द्वारा व्यतिक्रम ।

6ङ. यदि वादी प्रतिवादी द्वारा किए गए प्रतिदावे का उत्तर प्रस्तुत करने में व्यतिक्रम करता है, तो न्यायालय वादी के विरुद्ध उस प्रतिदावे के सम्बन्ध में जो उसके विरुद्ध किया गया है, निर्णय सुना सकेगा या प्रतिदावे के सम्बन्ध में ऐसा आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे ।

प्रतिदावी सफल होने पर प्रतिवादी अनुतोष जहां प्रतिदावा सफल होता है ।

6च. जहां कि किसी वाद में वादी के दावे के विरुद्ध प्रतिरक्षा के रूप में मुजरा या प्रतिदावा सिद्ध कर दिया जाता है और, यथास्थिति, वादी या प्रतिवादी को कोई अतिशेष देय पाया जाता है, वहां न्यायालय ऐसे पक्षकार के पक्ष में जो ऐसे अतिशेष के लिए हकदार हो, निर्णय दे सकेगा ।

लिखित कथन से सम्बन्धित नियमों का लागू होना ।

6छ. प्रतिवादी द्वारा लिखित कथन से सम्बन्धित नियम प्रतिदावे के उत्तर में लिखित कथन को लागू होंगे ।";

(v) नियम 7 में, "मुजरा" शब्द के पश्चात् "या प्रतिदावा" शब्द अन्तः-स्थापित किए जाएंगे ;

(vi) नियम 8 में, "मुजरा" शब्द के पश्चात् "या प्रतिदावा" शब्द अन्तः-स्थापित किए जाएंगे ;

(vii) नियम 8 में, निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"8क. (1) जहां कि प्रतिवादी अपनी प्रतिरक्षा किसी ऐसे दस्तावेज पर निर्भर करता है, जो उसके कब्जे या शक्ति में है, वहां वह न्यायालय में उसे उस समय पेश करेगा जब उसके द्वारा लिखित कथन उपस्थित किया जाता है और वह लिखित कथन के साथ फाइल की जाने वाली दस्तावेज या उसकी प्रति उसी समय परिदत्त करेगा । प्रतिवादी का उन दस्तावेजों को पेश करने का कर्तव्य जिन पर उसने अनुतोष का दावा किया है ।

(2) ऐसी दस्तावेज, जो इस नियम के अधीन प्रतिवादी द्वारा न्यायालय में पेश की जानी चाहिए, किन्तु इस प्रकार पेश नहीं की जाती है, वाद की सुनवाई में उसकी ओर से साक्ष्य में न्यायालय की इजाजत के बिना नहीं ली जाएगी ।

(3) इस नियम की कोई बात पेश की गई तो दस्तावेजों को लागू नहीं होंगी, जो,—

(क) वादी के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा के लिए हो, अथवा

(ख) वादपत्र फाइल किए जाने के पश्चात् वादी द्वारा उठाए गए किसी मामले के उत्तर में हो, अथवा

(ग) जो साक्षी को केवल उसकी स्मरण शक्ति ताजा करने के लिए दी गई हो ।";

(viii) नियम 9 में "मुजरा" शब्द के पश्चात् "या प्रतिदावा" शब्द अन्तः-स्थापित किए जाएंगे;

(ix) नियम 10 में,—

(क) "ऐसे अपेक्षित किया गया है" शब्दों के स्थान पर "नियम 1 या नियम 9 के अधीन अपेक्षित किया गया है" शब्द और अंक रखे जाएंगे;

(ख) "न्यायालय द्वारा नियत समय के भीतर उपस्थित करने में असफल रहता है वहां न्यायालय उसके विरुद्ध निर्णय दे सकेगा या वाद के सम्बन्ध में ऐसा आदेश कर सकेगा" शब्दों के स्थान पर "न्यायालय द्वारा, यथास्थिति, अनुज्ञात या नियत समय के भीतर उपस्थित करने में असफल रहता है वहां न्यायालय उसके विरुद्ध निर्णय देगा या वाद के सम्बन्ध में ऐसा आदेश करेगा" शब्द रखे जाएंगे ;

(ग) "और ऐसा निर्णय सुनाए जाने के पश्चात् डिक्री तैयार की जाएगी" शब्द अन्त में जोड़े जाएंगे ।

आदेश 9 का संशोधन ।

59. प्रथम अनुसूची के आदेश 9 में—

(i) नियम 2 में,—

(क) "जो ऐसी तामील के लिए प्रभार्य है, देने में वादी असफल रहा है" शब्दों के स्थान पर "जो ऐसी तामील के लिए प्रभार्य है,

देने में या आदेश 7 के नियम 9 द्वारा यथाअपेक्षित वादपत्र या संक्षिप्त कथन की प्रतियां उपस्थित करने में वादी असफल रहा है" शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे ;

(ख) परन्तुक के स्थान पर निम्नलिखित परन्तुक रखा जाएगा, अर्थात्—

"परन्तु ऐसी असफलता के होते हुए भी यदि प्रतिवादी उस दिन, जो उसके उपसंजात होने और उत्तर देने के लिए नियत है, स्वयं (या जब कि वह अभिकर्ता के द्वारा उपसंजात होने के लिए अनुज्ञात है तब अभिकर्ता के द्वारा) उपसंजात होता है, तो ऐसा कोई आदेश नहीं किया जाएगा।" ;

(ii) नियम 4 में "यथास्थिति, न्यायालय फीस और डाक-महसूल, (यदि कोई हों,) उस समय के भीतर, जो समन निकाले जाने के पहले नियत किया गया था, न देने के लिए" शब्दों और कोष्ठकों के स्थान पर "यथास्थिति ऐसी असफलता के लिए जो नियम 2 में निर्दिष्ट है" शब्द, और अंक रखे जाएंगे ;

(iii) नियम 5 के उपनियम (1) में "तीन मास" शब्दों के स्थान पर "एक मास" शब्द रखे जाएंगे;

(iv) नियम 6 के उपनियम (1) में खण्ड (क) के स्थान पर निम्नलिखित खण्ड रखा जाएगा, अर्थात्—

"(क) यदि यह साबित हो जाता है कि समन की तामील सम्यक् रूप से की गई थी तो न्यायालय यह आदेश दे सकेगा कि वाद की एकपक्षीय सुनवाई की जाए, और यदि वह ठीक समझे, तो वह इस आधार पर निर्णय दे सकेगा कि वादपत्र में कथित तथ्य सत्य हैं";

(v) नियम 13 के परन्तुक के पश्चात् निम्नलिखित एक और परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु यह और कि यदि किसी न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि प्रतिवादी को सुनवाई की तारीख की सूचना थी और उपसंजात होने के लिए तथा वादी के दावे का उत्तर देने के लिए पर्याप्त समय था तो वह एकपक्षीय पारित डिक्री को केवल इस आधार पर अपास्त नहीं करेगा कि समन की तामील में अनियमितता हुई थी।" ;

(vi) नियम 13 में निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"स्पष्टीकरण—जहां कि इस नियम के अधीन पारित एकपक्षीय डिक्री के विरुद्ध अपील की गई है और अपील का निपटारा इस आधार से भिन्न किसी आधार पर कर दिया गया है कि अपीलार्थी ने अपील वापस ले ली है, वहां उस एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए इस नियम के अधीन कोई आवेदन नहीं होगा।"।

आदेश 10 का संशोधन।

60. प्रथम अनुसूची के आदेश 10 में नियम 2 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् —

पक्षकार की या पक्षकार के साथी की मौखिक परीक्षा।

"2. (1) न्यायालय वाद की प्रथम सुनवाई में—

(क) पक्षकारों में से ऐसों की, जो न्यायालय में स्वयं उपसंजात हैं या उपस्थित हैं, वाद में मौखिक परीक्षा विवादास्पद बातों के विनिश्चयन की दृष्टि से करेगा, जैसा वह ठीक समझे, और

(ख) वाद सम्बन्धी किन्हीं तात्विक प्रश्नों के उत्तर देने में समर्थ ऐसे किसी व्यक्ति की, जो न्यायालय में स्वयं उपसंजात या उपस्थित पक्षकार या उसके प्लीडर के साथ है, मौखिक परीक्षा कर सकेगा ।

(2) न्यायालय किसी पश्चात्वर्ती सुनवाई में न्यायालय में स्वयं उपसंजात या उपस्थित पक्षकार की या वाद संबंधित किन्हीं तात्विक प्रश्नों के उत्तर देने में समर्थ ऐसे किसी व्यक्ति की, जो ऐसे पक्षकार या उसके प्लीडर के साथ है, मौखिक परीक्षा कर सकेगा ।

(3) यदि न्यायालय ठीक समझे, तो वह दोनों पक्षकारों में से किसी के भी द्वारा सुझाए गए प्रश्नों को उस नियम के अधीन परीक्षा के दौरान पूछ सकेगा ।" ।

आदेश 11 का संशोधन ।

61. प्रथम अनुसूची के आदेश 11 में—

(i) नियम 6 में "या किसी अन्य आधार पर" शब्दों के स्थान पर "या विशेषाधिकार के आधार पर या किसी अन्य आधार पर" शब्द रखे जाएंगे;

(ii) नियम 15 में "जिसके अभिवचनों या शपथपत्रों में किसी दस्तावेज के प्रति निर्देश किया गया है" शब्दों के पश्चात् "या जिसने अपने अभिवचनों से उपाबद्ध किसी सूची में किसी दस्तावेज की प्रविष्टि की है" शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे;

(iii) नियम 19 के उपनियम (2) में "दस्तावेज का निरीक्षण करे" अन्त में आने वाले शब्दों के स्थान पर "दस्तावेज का, यदि वह राज्य के मामलों से संबंधित दस्तावेज न हो, तो निरीक्षण करे" शब्द रखे जाएंगे;

(iv) नियम 21 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया जाएगा, और—

(क) इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपनियम (1) में "और ऐसा आदेश तदनुसार किया जाएगा" अन्त में आने वाले शब्दों के स्थान पर "और यथास्थिति, वादी या प्रतिवादी को आवेदन की सूचना देने के पश्चात् और वाद के दोनों पक्षकारों को सुनवाई के लिए युक्तियुक्त अवसर प्रदान करने के पश्चात् ऐसा आदेश तदनुसार किया जाएगा" शब्द रखे जाएंगे;

(ख) इस प्रकार पुनः संख्यांकित उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्—

"(2) जहां कि किसी वाद को खारिज करने का कोई आदेश उपनियम (1) के अधीन किया जाता है, वहां वादी उसी वाद हेतुक पर नए वाद लाने से प्रवारित होगा ।" ।

आदेश 12 का संशोधन ।

62. प्रथम अनुसूची के आदेश 12 में—

(i) नियम 2 में, "किसी दस्तावेज को सब न्यायसंगत अपवादों को छोड़कर, स्वीकार करले" शब्दों के स्थान पर "किसी दस्तावेज को सूचना की तामील की तारीख से पन्द्रह दिनों के भीतर स्वीकार करले" शब्द रखे जाएंगे ;

(ii) नियम 2 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्—

यदि दस्तावेजों की स्वीकृति के लिए सूचना की तामील के पश्चात् उनसे इंकार नहीं किया जाता तो उन्हें स्वीकृत समझा जाना।

"2क. (1) ऐसी हर दस्तावेज, जिसकी स्वीकार करने की मांग पक्षकार से की जाती है, उस पक्षकार द्वारा अभिवचन में या दस्तावेजों की स्वीकृति की सूचना के अपने उत्तर में विनिर्दिष्टतः या आवश्यक विवीक्षा से इंकार नहीं की जाती या उसको स्वीकार न किए जाने का कथन नहीं किया जाता है, निःशक्त व्यक्ति के विरुद्ध के सिवाय, स्वीकृत समझी जाएगी :

परन्तु न्यायालय अपने स्वविवेकाधिकार में और लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से यह अपेक्षा कर सकेगा कि इस प्रकार स्वीकृत कोई दस्तावेज ऐसी स्वीकृति से भिन्न रूप में साबित की जाए।

(2) जहां कि पक्षकार दस्तावेजों की स्वीकृति की तामील अपने पर किए जाने के पश्चात् किसी दस्तावेज को स्वीकार करने में अयुक्तियुक्त रूप से उपेक्षा करता है या इंकार करता है, वहां न्यायालय उसे दूसरे पक्षकार को प्रतिकर के रूप में खर्चा संदत्त करने का निदेश दे सकेगा।" ;

(iii) नियम 6 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

स्वीकृतियों पर निर्णय।

"6. (1) जहां कि या तो अभिवचन में या अन्यथा, चाहे मौखिक रूप से या लिखित रूप में तथ्य की स्वीकृतियां की जा चुकी हैं, वहां न्यायालय वाद के किसी प्रक्रम में, या तो किसी पक्षकार के आवेदन पर या स्वप्रेरणा पर और पक्षकारों के बीच किसी अन्य प्रश्न के अवधारण की प्रतीक्षा किए बिना ऐसा आदेश या ऐसा निर्णय कर सकेगा जो ऐसी स्वीकृतियों को ध्यान में रखते हुए न्यायालय के विचार में न्यायसंगत हो।

(2) जब कभी उपनियम (1) के अधीन निर्णय सुनाया जाता है, तब निर्णय के अनुसार डिक्री तैयार की जाएगी और डिक्री में वही तारीख दी जाएगी जिस तारीख को उक्त निर्णय सुनाया गया था।"।

आदेश 13 का संशोधन।

63. प्रथम अनुसूची के आदेश 13 में—

(i) नियम 1 में—

(क) पार्श्व शीर्षक में "पहली सुनवाई में" शब्दों के स्थान पर "विवाद्यकों के स्थिरीकरण में या के पूर्व" शब्द रखे जाएंगे;

(ख) उपनियम (1) में "वाद की प्रथम सुनवाई में" शब्दों के स्थान पर "विवाद्यकों के स्थिरीकरण में या के पूर्व" शब्द रखे जाएंगे;

(ii) नियम 2 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया जाएगा और इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(2) उपनियम (1) की कोई बात निम्नलिखित दस्तावेजों को लागू नहीं होगी, जो—

'(क) दूसरे पक्षकारों के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा करने के लिए पेश किए गए हैं, अथवा

(ख) किसी साक्षी को केवल उसकी स्मरण शक्ति ताज़ा करने के लिए दिए गए हों" ;

(iii) नियम 9 के उपनियम (1) में प्रथम परन्तुक के स्थान पर निम्नलिखित परन्तुक रखा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु इस नियम द्वारा विहित प्रथम से पूर्वतर किसी भी समय दस्तावेज लौटाया जा सकेगा, यदि उसकी वापसी के लिए आवेदन करने वाला व्यक्ति—

(क) समुचित आफ़िसर को—

(i) वाद के पक्षकार की दशा में मूल के स्थान पर प्रतिस्थापित करने के लिए प्रमाणित प्रति परिदत्त करता है, और

(ii) किसी अन्य व्यक्ति की दशा में ऐसी मामूली प्रति परिदत्त करता है, जो आदेश 7 के नियम 17 के उपनियम (2) में वर्णित रीति में परीक्षित, मिलान की गई और प्रमाणित है; और

(ख) यह वचन दे कि यदि उससे ऐसी अपेक्षा की गई तो वह मूल को पेश कर देगा।" ।

आदेश 14 का संशोधन।

64. प्रथम अनुसूची के आदेश 14 में,—

(i) नियम 1 के उपनियम (5) में, "और पक्षकारों की ऐसी परीक्षा करने के पश्चात् जैसी आवश्यक प्रतीत हो" शब्दों के पश्चात् "और आदेश 10 के नियम 2 के अधीन परीक्षा के पश्चात् तथा पक्षकारों या उनके प्लीडरों की सुनवाई करने के पश्चात्" शब्द और अंक रखे जाएंगे;

(ii) नियम 2 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

न्यायालय द्वारा सभी विवाद्यकों पर निर्णय सुनाया जाना।

"2. (1) इस बात के होते हुए भी कि वाद का निपटारा प्रारंभिक विवाद्यक पर किया जा सकेगा, न्यायालय उपनियम (2) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए सभी विवाद्यकों पर निर्णय सुनाएगा।

(2) जहां कि विधि विवाद्यक और तथ्य विवाद्यक दोनों एक ही वाद में उद्भूत हुए हों और न्यायालय की यह राय हो कि मामले या उसके किसी भाग का निपटारा केवल विधि विवाद्यक के आधार पर किया जा सकता है, वहां यदि वह विवाद्यक—

(क) न्यायालय की अधिकारिता, अथवा

(ख) तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा सृष्ट वाद-वर्जन,

से संबंधित हो, तो वह पहले उस विवाद्यक का विचारण करेगा और उस प्रयोजन के लिए यदि वह ठीक समझे, तो वह अन्य विवाद्यकों का निपटारा तब तक के लिए मुल्तवी कर सकेगा जब तक कि उस विवाद्यक का अवधारण न कर दिया गया हो, और वाद की कार्यवाही उस विवाद्यक के विनिश्चय के अनुसार कर सकेगा।" ।

आदेश 15 का संशोधन।

65. प्रथम अनुसूची के आदेश 15 में, नियम 2 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया जाएगा और इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(2) जब कभी इस नियम के अधीन निर्णय सुनाया जाता है, तब ऐसे निर्णय के अनुसार डिक्री तैयार की जाएगी और डिक्री में वही तारीख दी जाएगी, जिस तारीख को निर्णय सुनाया गया था।"।

आदेश 16 का संशोधन ।

66. प्रथम अनुसूची के आदेश 16 में,—

(i) नियम 1 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

साक्षियों की सूची और साक्षियों को समन ।

"1. (1) ऐसी तारीख को या के पूर्व जो न्यायालय नियत करे और जो विवाद्यकों का निपटारा कर दिए जाने के पश्चात् पन्द्रह दिनों से अधिक न हो, पक्षकार न्यायालय में ऐसे साक्षियों की सूची पेश करेंगे, जिन्हें वे या तो साक्ष्य देने के लिए या दस्तावेजों को पेश करने के लिए बुलाने की प्रस्थापना करते हैं, और न्यायालय में ऐसे व्यक्तियों की हाजिरी के लिए उनके नाम समन अभिप्राप्त करेंगे ।

(2) किसी व्यक्ति की हाजरी के लिए कोई समन अभिप्राप्त करने वाला पक्षकार न्यायालय में आवेदन उसमें उस प्रयोजन का कथन करते हुए फ़ाइल करेगा, जिसके लिए साक्षी को समन किया जाना प्रस्थापित है ।

(3) न्यायालय अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से पक्षकार को कोई ऐसा साक्षी, जो उपनियम (1) में निर्दिष्ट सूची में प्रकट होने वाले नामों से भिन्न हो, चाहे न्यायालय की मार्फ़त समन द्वारा या अन्यथा बुलाने की अनुमति तब दे सकेगा जब यदि ऐसा पक्षकार उक्त सूची में ऐसे साक्षी के नाम का वर्णन करने में लोप के लिए पर्याप्त कारण दर्शित कर दे ।

(4) उपनियम (2) में के उपबन्धों के अधीन रहते हुए इस नियम में निर्दिष्ट समन पक्षकारों द्वारा न्यायालय में या ऐसे अधिकारी को, जो न्यायालय द्वारा इस निमित्त नियुक्त किया जाए, आवेदन देकर अभिप्राप्त किए जा सकेंगे";

(ii) नियम 1क के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा :—

न्यायालय की मार्फ़त समन के बिना साक्षियों का पेश किया जाना ।

"1क. नियम 1 के उपनियम (3) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए वाद का कोई पक्षकार नियम 1 के अधीन समन के लिए आवेदन किए बिना किसी साक्षी को साक्ष्य देने के लिए या दस्तावेजों को पेश करने के लिए ला सकेगा";

(iii) नियम 2 में उपनियम (3) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

साक्षियों को खर्चे का सीधे संदाय किया जाना ।

"(4) जहां कि पक्षकार द्वारा समन साक्षी को प्रत्यक्षतः तामील किया जाता है, वहां उपनियम (1) में निर्दिष्ट व्यय साक्षी को पक्षकार या उसके अभिकर्ता द्वारा संदत्त किया जाएगा";

(iv) नियम 7 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

तामील के लिए पक्षकार को समन का दिया जाना ।

"7क. (1) न्यायालय किसी व्यक्ति की हाजिरी के लिए समन निकालने के लिए किसी पक्षकार के आवेदन पर ऐसे पक्षकार को उस आवेदन पर समन की तामील करने के लिए अनुमति दे सकेगा और ऐसी दशा में उस पक्षकार को तामील के लिए समन परिदत्त करेगा ।

(2) ऐसे समन की तामील ऐसे पक्षकार द्वारा या उसकी ओर से साक्षी को स्वयं उसकी प्रति, जो न्यायाधीश द्वारा या न्यायालय के ऐसे आफ़िसर द्वारा, जिसे वह इस निमित्त नियुक्त करे, हस्ताक्षरित

और न्यायालय की मोहर लगी हुई हो परिदत्त या निविदत्त करके की जाएगी ।

(3) आदेश 5 के नियम 16 और 18 के उपबन्ध इस अधि-नियम के अधीन स्वयं तामील किए गए समन को ऐसे लागू होंगे, मानो तामील करने वाला व्यक्ति तामील करने वाला आफ़िसर था ।

(4) यदि ऐसा समन निविदान किए जाने के समय इंकार कर दिया जाता है या तामील किया गया व्यक्ति तामील की अभि-स्वीकृति पर हस्ताक्षर करने से इंकार करता है या किसी कारण से ऐसा समन स्वयं तामील नहीं किया जा सकता है, तो न्यायालय पक्षकार के आवेदन पर ऐसा समन उसी रीति में न्यायालय द्वारा तामील किए जाने के लिए जिसमें प्रतिवादी को समन तामील किया जाता है, पुनः निकालेगा ।

(5) जहां कि इस नियम के अधीन पक्षकार द्वारा समन तामील किया जाता है, वहां पक्षकार से समन की तामील के लिए प्रभार्य फ़ीस से भिन्न फ़ीस संदत्त करने की अपेक्षा नहीं की जाएगी ।" ;

(v) नियम 8 में "इस आदेश के अधीन" शब्दों के स्थान पर "इस आदेश के अधीन, जो नियम 7क के अधीन पक्षकार को तामील के लिए परिदत्त समन से भिन्न हो", शब्द रखे जाएंगे;

(vi) नियम 10 के उपनियम (1) के स्थान पर निम्नलिखित उपनियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

(1) जहां कि वह व्यक्ति जिसे या तो साक्ष्य देने को हाजिर होने के लिए या दस्तावेज पेश करने के लिए समन निकाला गया है, ऐसे समन के अनुपालन में हाजिर होने या दस्तावेज पेश करने में असफल रहता है, वहां न्यायालय —

(क) यदि तामील करने वाले आफिसर को प्रमाणपत्र शपथपत्र द्वारा सत्यापित नहीं किया गया है या यदि समन की तामील पक्षकार या उसके अभिकर्ता द्वारा कराई गई है, तो यथास्थिति, तामील करने वाले ऐसे आफिसर या पक्षकार या उसके अभिकर्ता की, जिसने शपथपत्र की तामील कराई थी, शपथपत्र पर परीक्षा करेगा या समन की तामील करने या न करने के संबंध में किसी न्यायालय द्वारा उसकी इस प्रकार परीक्षा कराएगा ; अथवा

(ख) यदि तामील करने वाले आफिसर का प्रमाणपत्र इस प्रकार सत्यापित किया गया है, तो यथास्थिति, तामील करने वाले ऐसे आफिसर या पक्षकार या उसके अभिकर्ता की, जिसने शपथपत्र तामील कराए थे, शपथपत्र पर परीक्षा करा सकेगा या समन की तामील करने या न करने के संबंध में किसी न्यायालय द्वारा उसकी इस प्रकार परीक्षा करा सकेगा ।" ;

(vii) नियम 12 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनः-संख्यांकित किया जाएगा और इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(2) इस बात के होते हुए भी कि न्यायालय ने न तो नियम 10 के उपनियम (2) के अधीन प्रख्यापन निकाला है, और न उस नियम के उपनियम (3) के अधीन वारंट निकाला है, और न कुर्की का आदेश किया है, न्यायाधीश ऐसे व्यक्ति को यह कारण बताने की सूचना देने के पश्चात् कि जुर्माना क्यों नहीं अधिरोपित किया जाना चाहिए इस नियम के उपनियम (1) के अधीन जुर्माना अधिरोपित कर सकेगा" ;

(viii) नियम 14 में "किसी ऐसे व्यक्ति की परीक्षा की जाए जो वाद का पक्षकार नहीं है" शब्दों के स्थान पर "किसी ऐसे व्यक्ति की, जिसमें वाद का पक्षकार भी सम्मिलित है, परीक्षा की जाए" शब्द रखे जाएंगे ;

(ix) नियम 19 के खण्ड (ख) में "पचास मील" शब्दों के स्थान पर "एक सौ किलोमीटर" और "दो सौ मील" के स्थान पर "पांच सौ किलोमीटर" शब्द रखे जाएंगे ;

(x) नियम 19 में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु जहां कि उपर्युक्त दोनों स्थानों के बीच वायुयान द्वारा यातायात उपलब्ध है और साक्षी का वायुयान-भाड़ा संदत्त किया गया है, वहां उसे स्वयं हाजिर होने का आदेश किया जा सकेगा।"।

नए आदेश 16क का अन्तःस्थापन।

67. प्रथम अनुसूची के आदेश 16 के पश्चात् निम्नलिखित आदेश अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"आदेश 16क

कारागार में परिरुद्ध या निरुद्ध साक्षियों की हाजिरी

परिभाषाएं।

1. इस आदेश में —

(क) "निरुद्ध" के अन्तर्गत निवारक निरोध के लिए उपबन्ध करने वाली किसी विधि के अधीन निरुद्ध व्यक्ति है ;

(ख) कारागार के अन्तर्गत,—

(i) ऐसा कोई स्थान है जो राज्य सरकार द्वारा साधारण या विशेष आदेश द्वारा समनुषंगी जेल घोषित किया गया है, और

(ii) कोई सुधारालय, बोस्टल संस्था या इसी प्रकार की कोई अन्य संस्था है।

साक्ष्य देने के लिए बंदी की हाजरी की अपेक्षा करने के लिए शक्ति।

2. जहां कि न्यायालय को यह प्रतीत हो कि राज्य के अन्दर कारागार में परिरुद्ध या निरुद्ध व्यक्ति का साक्ष्य वाद में तात्विक है वहां न्यायालय कारागार के प्रभारी आफिसर से यह अपेक्षा करते हुए आदेश कर सकेगा कि वह उस व्यक्ति को साक्ष्य देने के लिए न्यायालय के समक्ष पेश करे :

परन्तु यदि कारागार से न्यायालय की दूरी पच्चीस किलोमीटर से अधिक है, तो ऐसा आदेश तब तक नहीं किया जाएगा, जब तक न्यायालय का यह समाधान न हो जाए कि कमीशन से ऐसे व्यक्ति की परीक्षा पर्याप्त नहीं होगी।

3. (1) न्यायालय नियम (2) के अधीन कोई आदेश करने के पूर्व उस पक्षकार से, जिसकी प्रेरणा पर या जिसके फायदे के लिए आदेश निकाला जाना है, यह अपेक्षा करेगा कि वह न्यायालय में ऐसी राशि संदत्त करे, जो न्यायालय को आदेश के निष्पादन के व्यय के लिए, जिसके अन्तर्गत साक्षी के लिए दिए गए अनुरक्षक का यात्रा भत्ता और अन्य व्यय हैं, पर्याप्त प्रतीत हो।

न्यायालय में व्यय का संदत्त किया जाना।

(2) जहां कि न्यायालय उच्च न्यायालय के अधीनस्थ है, वहां ऐसे व्ययों का मापमान नियत करने में इस निमित्त बनाए गए किन्हीं नियमों को ध्यान में रखा जाएगा।

4. (1) राज्य सरकार उपनियम (2) में विनिर्दिष्ट विषयों को ध्यान में रखते हुए किसी भी समय साधारण या विशेष आदेश द्वारा यह निदेश दे सकेगी कि कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का वर्ग ऐसे कारागार से नहीं हटाया जाएगा जहां वह या वे परिरुद्ध या निरुद्ध हों और तदुपरांत जब तक आदेश प्रवृत्त रहता है तब तक नियम 2 के अधीन आदेश, चाहे वह राज्य सरकार के आदेश के पूर्व या पश्चात् हो, ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों के प्रवर्ग के बारे में प्रभावी नहीं होगा।

कतिपय व्यक्तियों को नियम 2 के प्रवर्तन से अपवर्जित करने के लिए राज्य सरकार की शक्ति।

(2) राज्य सरकार उपनियम (1) के अधीन आदेश करने के पूर्व निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखेगी, अर्थात् :—

(क) उस अपराध की प्रकृति जिसके लिए या जिसके आधार पर व्यक्ति या व्यक्तियों के वर्ग को कारागार में परिरुद्ध या निरुद्ध करने के लिए आदेश किया गया है;

(ख) यदि व्यक्ति या व्यक्तियों के वर्ग को कारागार से हटाए जाने की अनुज्ञा दी जाती है, तो क्या लोक व्यवस्था में विघ्न पड़ने की संभाव्यता है; और

(ग) साधारणतया लोकहित।

5. जहां कि कोई व्यक्ति, जिसके सम्बन्ध में उपनियम (2) के अधीन आदेश किया गया है,—

कारागार के प्रभारी आफिसर का कतिपय मामलों में आदेश का पालन करने से प्रविरत रहना।

(क) ऐसा व्यक्ति है जिसकी बाबत कारागार से सम्बद्ध चिकित्सा आफ़िसर ने यह प्रमाणित किया है कि वह बीमारी या अशक्तता के कारण कारागार से हटाए जाने के अयोग्य है; अथवा

(ख) विचारण के लिए सुपुर्द किया गया है, या विचारण के लम्बित रहने तक रिमांड के अधीन है; अथवा

(ग) ऐसी कालावधि के लिए अभिरक्षा में है, जो आदेश का अनुपालन करने के लिए और उस कारागार में जिनमें वह परिरुद्ध या निरुद्ध है वापस ले जाने के लिए, अपेक्षित समय के अवसान के पूर्व समाप्त हो जाएगी;

(घ) ऐसा व्यक्ति है जिसको राज्य सरकार द्वारा नियम 4 के अधीन किया गया आदेश लागू होता है;

वहां कारागार का प्रभारी आफ़िसर न्यायालय के आदेश का पालन करने से प्रविरत रहेगा और ऐसे प्रविरत रहने के कारणों का कथन न्यायालय को भेजेगा।

न्यायालय में बन्दी को अभिरक्षा में लाया जाना ।

6. कारागार का प्रभारी आफ़िसर किसी अन्य मामले में न्यायालय का आदेश परिदत्त किए जाने पर उसमें नामित व्यक्ति को न्यायालय में लिवा जाएगा ताकि वह उस आदेश में वर्णित समय पर उपस्थित हो जाए, और उसे अभिरक्षा में न्यायालय में या के समीप तब तक रखवाए रहेगा जब तक कि उसकी परीक्षा न हो जाए या जब तक कि न्यायालय उसको उस न्यायालय में, जिसमें वह परिरुद्ध या निरुद्ध था, वापस ले जाने के लिए उसे प्राधिकृत न कर दे ।

कारागार में साक्षी की परीक्षा के लिए कमीशन निकालने की शक्ति ।

7. (1) जहां कि न्यायालय को यह प्रतीत हो कि कारागार में चाहे वह राज्य के अन्दर या भारत में अन्यत्र हो, परिरुद्ध या निरुद्ध व्यक्ति का साक्ष्य वाद में तात्विक है, किन्तु ऐसे व्यक्ति की हाजिरी इस आदेश के पूर्ववर्ती उपबन्धों के अधीन सुनिश्चित नहीं की जा सकती है, वहां न्यायालय उस व्यक्ति की परीक्षा उस कारागार में, जिसमें वह परिरुद्ध या निरुद्ध है, करने के लिए निकाल सकेगा ।

(2) आदेश 26 के उपबन्ध यावत्शक्य, कारागार में ऐसे व्यक्ति की कमीशन पर परीक्षा के सम्बन्ध में लागू होंगे जैसे कि वे किसी अन्य व्यक्ति की परीक्षा के सम्बन्ध में लागू होते हैं ।'।

आदेश [17 का संशोधन ।

68. प्रथम अनुसूची के आदेश 17 में,—

(i) नियम 1 उपनियम (2) के परन्तुक के स्थान पर निम्नलिखित परन्तुक रखा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु यह कि—

(क) यदि वाद की सुनवाई प्रारम्भ हो गई हो तो जब तक कि न्यायालय उन असाधारण कारणों से, जो उसके द्वारा अभिलिखित किए जाएंगे, सुनवाई का स्थगन अगले दिन से परे के लिए करना आवश्यक न समझे, वाद की सुनवाई दिन प्रति दिन तब तक जारी रहेगी जब तक सब हाजिर साक्षियों की परीक्षा न कर ली जाए;

(ख) किसी पक्षकार की प्रार्थना पर कोई भी स्थगन ऐसी परिस्थितियों को छोड़कर जो उस पक्षकार के नियंत्रण के बाहर हों, मंजूर नहीं किया जाएगा;

(ग) यह तथ्य स्थगन के लिए आधार नहीं माना जाएगा कि किसी पक्षकार का प्लीडर दूसरे न्यायालय में काम पर लगा हुआ है ;

(घ) जहां कि प्लीडर की रुग्णता या दूसरे न्यायालय में उसके काम पर होने से भिन्न कारण से मुकदमे का संचालन करने में उसकी असमर्थता को स्थगन के लिए एक आधार के रूप में पेश किया जाता है वहां न्यायालय तब तक स्थगन मंजूर नहीं करेगा जब तक उसका यह समाधान नहीं हो जाता कि ऐसे स्थगन के लिए आवेदन करने वाला पक्षकार समय पर दूसरा प्लीडर नहीं रख सकता था;

(ङ) जहां कि कोई साक्षी न्यायालय में उपस्थित है किन्तु पक्षकार या उसका प्लीडर उपस्थित नहीं है अथवा पक्षकार या प्लीडर न्यायालय में उपस्थित होने पर भी किसी साक्षी की परीक्षा या प्रतिपरीक्षा करने के लिए तैयार नहीं है वहां न्यायालय, यदि ठीक

समझे तो, साक्षी का कथन अभिलिखित कर सकेगा और यथा-स्थिति, पक्षकार या उसके प्लीडर द्वारा, जो उपस्थित न हों अथवा पूर्वोक्त रूप में तैयार न हों साक्षी की मुख्य परीक्षा, या प्रतिपरीक्षा को अभिमुक्त करते हुए ऐसे आदेश पारित कर सकेगा जो वह ठीक समझे;" ;

(ii) नियम 2 में निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्त में जोड़ दिया जाएगा, अर्थात् :—

"**स्पष्टीकरण**—जहां कि किसी पक्षकार का साक्ष्य या साक्ष्य का पर्याप्त भाग अभिलिखित किया जा चुका है और ऐसा पक्षकार किसी ऐसे दिन, जिस दिन के लिए वाद स्थगित किया गया हो, उपसंजात होने में असफल होता है तो वहां न्यायालय स्वविवेकानुसार मामलों में इस प्रकार अग्रसर हो सकेगा मानो ऐसा पक्षकार उपस्थित था;";

(iii) नियम 3 में "वहां न्यायालय ऐसे व्यतिक्रम के होते हुए भी वाद को तत्क्षण निश्चित करने के लिए अग्रसर हो सकेगा" शब्दों के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाएगा, अर्थात् :—

"वहां न्यायालय ऐसे व्यतिक्रम के होते हुए भी,—

(क) यदि पक्षकार उपस्थित हो तो वाद को तत्क्षण विनिश्चित करने के लिए अग्रसर हो सकेगा; अथवा

(ख) यदि पक्षकार या उनमें से कोई अनुपस्थित हो तो नियम 2 के अधीन कार्यवाही कर सकेगा ।" ।

आदेश 18 का संशोधन ।

69. प्रथम अनुसूची के आदेश 18 में,—

(i) नियम 2 में उपनियम (3) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(4) इस नियम में किसी बात के होते हुए भी न्यायालय ऐसे कारणों से, जो अभिलिखित किए जाएंगे, किसी पक्षकार को किसी भी प्रक्रम पर किसी साक्षी की परीक्षा करने के लिए निदेश दे सकेगा या अनुज्ञात कर सकेगा," ;

(ii) नियम 3 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

पक्षकार का अन्य साक्षियों से पहले उपसंजात होना ।

"3क. जहां कि कोई पक्षकार स्वयं साक्षी के रूप में उपसंजात होना चाहता है वहां वह उसकी ओर से पेश किए गए किसी अन्य साक्षी की परीक्षा हो जाने के पूर्व उस दशा के सिवाय उपसंजात होगा, जिसमें कि न्यायालय ऐसे कारणों से, जो अभिलिखित किए जाएंगे, उसे पश्चात्वर्ती प्रक्रम में स्वयं अपने साक्षी के रूप में उपसंजात होने के लिए अनुज्ञात करे;" ;

(iii) नियम 5 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

अपीलनीय मामलों में साक्ष्य कैसे लिया जाएगा ।

"5. जिन मामलों में अपील अनुज्ञात है उन मामलों में हर एक साक्षी का साक्ष्य,—

(क) न्यायालय की भाषा में,—

(i) न्यायाधीश द्वारा या उसकी उपस्थिति में और उसके वैयक्तिक निदेशन और अधीक्षण में लिखा जाएगा,

(ii) न्यायाधीश के बोलने के साथ ही टाइप किया जाएगा; या

(ख) यदि न्यायाधीश अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से ऐसा निदेश दे तो न्यायाधीश की उपस्थिति में न्यायालय की भाषा में यांत्रिक रूप से अभिलिखित किया जाएगा ।";

(IV) नियम 8 में "न्यायाधीश द्वारा नहीं लिखा गया है" शब्दों के स्थान पर "खुले न्यायालय में न्यायाधीश द्वारा या उसके बोलने के अनुसार नहीं लिखा गया है या उसकी उपस्थिति में यांत्रिक रूप से अभिलिखित नहीं किया गया है" शब्द रखे जाएंगे;

(V) नियम 9 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

साक्ष्य अंग्रेजी में कब लिखा जा सकेगा ।

"9. (1) जहां कि न्यायालय की भाषा अंग्रेजी नहीं है किन्तु वाद के सब पक्षकार, जो स्वयं उपसंजात हैं, और उन पक्षकारों के, जो प्लीडरों के द्वारा उपसंजात हैं, प्लीडर ऐसे साक्ष्य के, जो अंग्रेजी में दिया जाता है, अंग्रेजी में लिखे जाने पर आक्षेप नहीं करते हैं वहां न्यायाधीश उसे उसी रूप में लिख सकेगा या लिखा सकेगा ।

(2) जहां साक्ष्य अंग्रेजी में नहीं दिया जाता है किन्तु वे सभी पक्षकार, जो स्वयं उपसंजात हैं और उन पक्षकारों के, जो प्लीडरों के द्वारा उपसंजात हैं, प्लीडर ऐसे साक्ष्य के अंग्रेजी में लिखे जाने पर आक्षेप नहीं करते हैं, वहां न्यायाधीश ऐसा साक्ष्य अंग्रेजी में लिख सकेगा या लिखा सकेगा" ।

(VI) नियम 13 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

अन-अपीलनीय मामलों में साक्ष्य का ज्ञापन ।

"13. ऐसे मामले में, जिनमें अपील अनुज्ञात नहीं है, यह आवश्यक न होगा कि साक्षियों का साक्ष्य विस्तार सहित लिखा जाए या बोलकर लिखाया जाए या अभिलिखित किया जाए किन्तु न्यायाधीश जैसे-जैसे हर एक साक्षी की परीक्षा होती है वैसे-वैसे उसके अभिसाक्ष्य के सार का ज्ञापन लिखेगा, या बोलने के साथ टाइप कराएगा या यांत्रिक रूप से अभिलिखित कराएगा और ऐसा ज्ञापन न्यायाधीश द्वारा हस्ताक्षरित किया जाएगा या अन्यथा अधिप्रमाणित किया जाएगा और अभिलेख का भाग होगा ।";

(VII) नियम 14 का लोप किया जाएगा;

(VIII) नियम 17 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

ऐसे साक्ष्य का पेश किया जाना, जिसकी पहले जानकारी नहीं थी या जो सम्यक् तत्परता के होते हुए भी पेश नहीं किया जा सका।

"17क. जहां कि कोई पक्षकार न्यायालय का यह समाधान कर देता है कि सम्यक् तत्परता बरतने के पश्चात् किसी साक्ष्य की उसे जानकारी नहीं थी या वह उसके द्वारा उस समय, जबकि वह पक्षकार अपना साक्ष्य प्रस्तुत कर रहा था, पेश नहीं किया जा सकता था, वहां न्यायालय उस पक्षकार को ऐसे साक्ष्य को पश्चात्वर्ती प्रक्रम में ऐसे निबंधनों पर पेश करने की अनुज्ञा दे सकेगा, जो उसे न्यायोचित प्रतीत हों ।";

(IX) नियम 18 में "कोई प्रश्न पैदा हो" शब्दों के पश्चात् "और जहां न्यायालय किसी संपत्ति या वस्तु का निरीक्षण करता है वहां वह, यथा-साध्य शीघ्र ऐसे निरीक्षण में देखे गए किन्हीं सुसंगत तथ्यों का ज्ञापन बनाएगा और ऐसा ज्ञापन वाद के अभिलेख का भाग होगा ।" शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे ।

70. प्रथम अनुसूची के आदेश 20 में,— आदेश 20 का संशोधन ।

(i) नियम 1 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया जाएगा और—

(क) इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपनियम (1) में निम्नलिखित परन्तुक जोड़े जाएंगे, अर्थात् :—

"परन्तु जहां निर्णय तत्काल नहीं सुनाया गया है वहां न्यायालय द्वारा निर्णय उस तारीख से, जिसको मामले की सुनवाई समाप्त हुई थी, पन्द्रह दिनों के भीतर सुनाने का पूरा प्रयास किया जाएगा किन्तु जहां ऐसा करना साध्य नहीं है वहां न्यायालय निर्णय के सुनाने के लिए भविष्य में एक दिन नियत करेगा और ऐसा दिन साधारणतः उस तारीख से, जिसको मामले की सुनवाई समाप्त हुई थी, तीस दिनों के बाद होगा और इस प्रकार नियत किए गए दिन की सम्यक् सूचना पक्षकारों या उनके प्लीडरों को दी जाएगी :

परन्तु यह और कि जहां निर्णय उस तारीख से, जिसको मामले की सुनवाई समाप्त हुई थी तीस दिनों के भीतर नहीं सुनाया जाता है, वहां न्यायालय ऐसे विलम्ब के लिए कारणों को अभिलिखित करेगा और भविष्य में वह दिन नियत करेगा जिसको निर्णय सुनाया जाएगा और इस प्रकार नियत किए गए दिन की सम्यक् सूचना पक्षकारों या उनके प्लीडरों को दी जाएगी;

(ख) इस प्रकार पुनःसंख्याकित उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

"(2) जहां कि लिखित निर्णय सुनाया जाना है वहां यदि प्रत्येक विवाद्यक पर न्यायालय के निष्कर्षों को और मामले में पारित अंतिम आदेश को पढ़ दिया जाता है तो वह पर्याप्त होगा और न्यायालय के लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि वह सम्पूर्ण निर्णय को पढ़े किन्तु सम्पूर्ण निर्णय की एक प्रति निर्णय सुनाए जाने के तुरन्त पश्चात् पक्षकारों या प्लीडरों के परिशीलन के लिए उपलब्ध कराई जाएगी ।

(3) निर्णय खुले न्यायालय में आशुलिपिक को बोलकर लिखाते हुए उस दशा में सुनाया जा सकेगा जिसमें न्यायाधीश उच्च न्यायालय द्वारा इस निमित्त विशेष रूप से सशक्त किया गया हो :

परन्तु जहां निर्णय खुले न्यायालय में बोलकर लिखाते हुए सुनाया जाता है वहां इस प्रकार सुनाए गए निर्णय की अनुलिपि उसमें ऐसी शुद्धियां करने के पश्चात् जो आवश्यक हों, न्यायाधीश द्वारा हस्ताक्षरित की जाएगी, उस पर वह तारीख लिखी जाएगी, जिसको निर्णय सुनाया गया था, और वह अभिलेख का भाग होगी ।";

(ii) नियम 2 में, "सुना सकेगा" शब्दों के स्थान पर "सुनाएगा" शब्द रखा जाएगा;

(iii) नियम 5 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अंत:स्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

जिन मामलों में पक्षकारों का प्रतिनिधित्व प्लीडरों द्वारा न किया गया हो उनमें न्यायालय द्वारा पक्षकारों को इस बात की इत्तिला देना कि अपील कहां की जा सकेगी ।

"5क. उस दशा के सिवाय जिसमें दोनों पक्षकारों का प्रतिनिधित्व प्लीडरों द्वारा किया गया है, न्यायालय ऐसे मामलों में, जिनकी अपील हो सकती है, अपना निर्णय सुनाते समय न्यायालय में उपस्थित पक्षकारों को यह इत्तिला देगा कि किस न्यायालय में अपील की जा सकती है और ऐसी अपील फाइल करने के लिए परिसीमा की अवधि कितनी है और पक्षकारों को इस प्रकार दी गई इत्तिला को अभिलेख में रखेगा :

(iv) नियम 6 के उपनियम (1) में, "पक्षकारों के नाम और वर्णन" शब्दों के स्थान पर "पक्षकारों के नाम और वर्णन, उनके रजिस्ट्रीकृत पते" शब्द रखे जाएंगे ;

(v) नियम 6 के पश्चात्, निम्नलिखित नियम अंत:स्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

निर्णय के अन्तिम पैरा में दिए गए अनुतोष का प्रमित शब्दों में उल्लिखित होना ।

"6क. (1) निर्णय के अन्तिम पैरा में प्रमित शब्दों में उस अनुतोष का कथन किया जाएगा, जो ऐसे निर्णय द्वारा प्रदान किया गया है ।

(2) यह सुनिश्चित करने का पूरा प्रयास किया जाएगा कि डिक्री यथासम्भव शीघ्र और किसी भी दशा में उस तारीख से जिसको निर्णय सुनाया गया है, पन्द्रह दिन के भीतर तैयार की जाए किन्तु जहां डिक्री उपर्युक्त समय के भीतर तैयार नहीं की जाती है, वहां न्यायालय यदि डिक्री के विरुद्ध अपील करने के इच्छुक पक्षकार द्वारा ऐसी प्रार्थना की जाए तो प्रमाणित करेगा कि डिक्री तैयार नहीं की गई है और परिणामस्वरूप उस विलम्ब के लिए कारण उपदर्शित करेगा और तदुपरि—

(क) डिक्री की प्रति फाइल किए बिना डिक्री के विरुद्ध अपील की जा सकेगी और ऐसे मामले में निर्णय का अन्तिम पैरा, आदेश 41 के नियम (1) के प्रयोजन के लिए डिक्री माना जाएगा; और

(ख) जब तक डिक्री तैयार नहीं की जाती है तब तक निर्णय का अन्तिम पैरा निष्पादन के प्रयोजनों के लिए डिक्री समझा जाएगा और हितबद्ध पक्षकार उस पैरा की प्रति के लिए आवेदन करने का हकदार होगा और उससे संपूर्ण निर्णय की प्रति के लिए आवेदन की अपेक्षा नहीं की जाएगी किन्तु यथाशीघ्र जैसे ही डिक्री तैयार हो जाती है निर्णय का अन्तिम पैरा निष्पादन के प्रयोजन के लिए या किसी अन्य प्रयोजन के लिए प्रभावहीन हो जाएगा :

परन्तु यह कि जहां आवेदन निर्णय के केवल अंतिम पैरा की प्रति अभिप्राप्त करने के लिए किया गया है वहां ऐसी प्रति में वाद के सभी पक्षकारों का नाम और पता उपदर्शित किया जाएगा ।

निर्णयों की टाइप की हुई प्रतियां कब उपलब्ध की जाएंगी ।

6ख. जहां कि निर्णय टाइप किया हुआ है वहां टाइप किए हुए निर्णय की प्रतियां, यदि ऐसा करना साध्य हो तो, निर्णय सुनाने के तुरन्त पश्चात् पक्षकारों को, ऐसी प्रति के लिए आवेदन करने वाले पक्षकारों द्वारा उतने प्रभार, जितने उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों में विनिर्दिष्ट हों, संदत्त किए जाने पर उपलब्ध की जाएगी ।";

(vi) नियम 11 के उपनियम (1) में, "डिक्री पारित करते समय किसी पर्याप्त कारण से आदेश दे सकेगा" शब्दों के स्थान पर "उन पक्षकारों को, जो निर्णय के पूर्व अंतिम सुनवाई में स्वयं या प्लीडर द्वारा उपसंजात थे, सुनने के पश्चात्, डिक्री में किसी पर्याप्त कारण से यह आदेश सम्मिलित कर सकेगा" शब्द रखे जाएंगे ;

(vii) नियम 12 के, उपनियम (1) में खण्ड (ख) के स्थान पर निम्नलिखित खण्ड रखे जाएंगे, अर्थात् :—

"(ख) ऐसे भाटकों के लिए जो वाद के संस्थित किए जाने के पूर्व की किसी कालावधि में संपत्ति पर प्रोद्भूत हुए हों या ऐसे भाटकों के बारे में जांच करने का निदेश देती हो;

(खक) ऐसे अन्तःकालीन लाभों के लिए या ऐसे अन्तःकालीन लाभों के बारे में जांच करने का निदेश देती हो;";

(viii) नियम 12 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

"12क. जहां कि स्थावर सम्पत्ति के विक्रय या पट्टे की किसी संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए किसी डिक्री में यह आदेश हो कि क्रय-धन या अन्य राशि क्रेता या पट्टेदार द्वारा संदत्त की जाए वहां उसमें वह अवधि निर्दिष्ट होगी जिसके अन्दर संदाय करना होगा।

स्थावर संपत्ति के विक्रय या पट्टे की संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री।

* * * * *

(ix) नियम 19 में, उपनियम (1) और (2) में, "मुजरा" शब्द के, जहां कहीं वह आता है पश्चात् "या प्रतिदावा" शब्द अंतःस्थापित किए जाएंगे।

71. प्रथम अनुसूची के आदेश 20 के पश्चात्, निम्नलिखित आदेश अंतःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

नये आदेश 20क का अन्तःस्थापन।

"आदेश 20-क

खर्चे

1. (1) खर्चों के बारे में इस संहिता के उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना न्यायालय निम्नलिखित के संबंध में खर्चे अधिनिर्णीत कर सकेगा :—

कुछ मदों के बारे में उपबन्ध।

(क) वाद संस्थित करने से पूर्व किसी ऐसी सूचना के, जो विधि द्वारा दी जाने के लिए अपेक्षित है, दिए जाने के लिए उपगत व्यय ;

(ख) किसी ऐसी सूचना पर उपगत व्यय जो विधि द्वारा दी जाने के लिए अपेक्षित न होने पर भी वाद के किसी पक्षकार द्वारा किसी दूसरे पक्षकार को वाद संस्थित करने से पूर्व दी गई हो ;

(ग) किसी पक्षकार द्वारा फ़ाइल किए गए अभिवचनों को टाइप कराने, लिखने या मुद्रित कराने पर उपगत व्यय ;

(घ) वाद में प्रयोजनों के लिए न्यायालय के अभिलेखों के निरीक्षणों के वास्ते किसी पक्षकार द्वारा संदत्त प्रभार ;

(ङ) किसी पक्षकार द्वारा साक्षियों को पेश करने के लिए उपगत व्यय चाहे वे न्यायालय के माध्यम से समन न किए गए हों ;

(च) अपीलों के मामलों में, किसी पक्षकार द्वारा निर्णयों और डिक्रियों की प्रतियां प्राप्त करने में उपगत प्रभार जो अपील के ज्ञापन के साथ फ़ाइल की जाने के लिए अपेक्षित हैं।

(2) इस नियम के अधीन खर्चे का अधिनिर्णय ऐसे नियमों के अनुसार होगा जो उच्च न्यायालय इस निमित्त बनाए ।

प्लीडर की फीस ।

2. खर्चों की संगणना करने में प्लीडर की फीस के रूप में कोई रकम तब तक सम्मिलित नहीं की जाएगी जब तक प्लीडर द्वारा हस्ताक्षरित पावती या एक लिखित प्रमाणपत्र, जो उसके द्वारा हस्ताक्षरित हो और जिसमें प्रत्येक रकम कथित हो, न्यायालय में फाइल न कर दिया गया हो ।" ।

आदेश 21 का संशोधन ।

72. प्रथम अनुसूची के आदेश 21 में,—

(i) नियम 1 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

डिक्री के अधीन धन के संदाय की रीतियां ।

"1. (1) डिक्री के अधीन संदेय सब धन निम्न प्रकार से दिया जाएगा :—

(क) उस न्यायालय में, जिसका कर्तव्य उस डिक्री का निष्पादन करना है, जमा करके या उस न्यायालय को डाक मनीआर्डर द्वारा अथवा बैंक के माध्यम से भेज कर ; या

(ख) न्यायालय के बाहर डिक्रीदार को डाक मनीआर्डर द्वारा या किसी बैंक की मार्फ़त या किसी अन्य रीति से जिसमें संदाय का लिखित साक्ष्य हो; या

(ग) अन्यथा किस प्रकार वह न्यायालय जिसने डिक्री दी, निदेश दे ।

(2) जहां कि संदाय उपनियम (1) के खण्ड (क) या खण्ड (ग) के अधीन किया जाता है वहां निर्णीत ऋणी डिक्रीदार को उसकी सूचना या तो न्यायालय के माध्यम से या रसीदी रजिस्ट्री डाक द्वारा सीधे भेजेगा ।

(3) जहां कि धन का संदाय उपनियम (1) के खण्ड (क) या खण्ड (ख) के अधीन डाक मनीआर्डर द्वारा या बैंक की मार्फत किया जाता है वहां यथास्थिति, मनीआर्डर में, बैंक की मार्फत संदाय में निम्नलिखित विशिष्टियां स्पष्ट रूप से कथित होंगी, अर्थात् :—

(क) मूल वाद की संख्या;

(ख) पक्षकारों के या जहां कि दो से अधिक वादी या दो से अधिक प्रतिवादी हों वहां, यथास्थिति, पहले दो वादियों और दो प्रतिवादियों के नाम;

(ग) प्रेषित धन का समायोजन किस प्रकार किया जाना है, अर्थात् वह संदाय मूल के प्रति, ब्याज के प्रति या खर्चों के प्रति है ;

(घ) न्यायालय के निष्पादन मामले की संख्या जहां कि ऐसा मामला लम्बित है; और

(ङ) संदायकर्ता का नाम और पता ।

(4) उपनियम (1) के खण्ड (क) या खण्ड (ग) के अधीन संदत्त किसी रकम पर ब्याज, यदि कुछ हो, उपनियम (2) में निर्दिष्ट सूचना की तामील की तारीख से नहीं लगेगा ।

(5) उपनियम (1) के खण्ड (ख) के अधीन संदत्त किसी रकम पर ब्याज, यदि कोई हो, ऐसे संदाय की तारीख से नहीं लगेगा :

परन्तु जहां कि डिक्रीदार डाक मनीआर्डर या बैंक की मार्फ़त संदाय स्वीकार करने से इंकार करता है वहां ब्याज, उस तारीख से जिसको धन उसे निविदत्त किया गया था, नहीं लगेगा अथवा जहां डाक मनीआर्डर या बैंक की मार्फ़त संदाय को स्वीकार करने से बचता है

वहां समाज, उस तारीख से जिसको धन उसे, यथास्थिति, डाक अधिकारियों या बैंक की कार्रवाई के साधारण अनुक्रम में दिया गया होता, नहीं लगेगा ।";

(ii) नियम 2 के,—

(क) उपनियम (1) में, "या पूरी डिक्री या उसके किसी भाग का समायोजन डिक्रीदार को समाधानप्रद रूप में अन्यथा कर दिया गया है" शब्दों के स्थान पर "या किसी प्रकार की पूरी डिक्री या उसके किसी भाग का समायोजन डिक्रीदार को समाधानप्रद रूप में अन्यथा कर दिया गया है" शब्द रखे जाएंगे ;

(ख) उपनियम (2) में "निर्णीत ऋणी भी" शब्दों के स्थान पर "निर्णीत ऋणी या कोई ऐसा व्यक्ति भी जो निर्णीत ऋणी के लिए प्रतिभू हुआ है" शब्द रखे जाएंगे;

(ग) उपनियम (2) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(2क) निर्णीत ऋणी के कहने पर कोई भी संदाय या समायोजन तब तक अभिलिखित नहीं किया जाएगा जब तक—

(क) वह संदाय नियम 1 में उपबन्धित रीति से न किया गया हो; या

(ख) वह संदाय या समायोजन दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा साबित न हो; या

(ग) वह संदाय या समायोजन डिक्रीदार द्वारा या उसकी ओर से सूचना के उसके उत्तर में या न्यायालय के समक्ष स्वीकार न किया गया हो ।";

(iii) नियम 5 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

अन्तरण की रीति ।

"5. जहां कि डिक्री निष्पादन के लिए दूसरे न्यायालय को भेजी जानी है वहां वह न्यायालय जिसने ऐसी डिक्री पारित की है डिक्री को सीधे ऐसे दूसरे न्यायालय को भेजेगा चाहे ऐसा दूसरा न्यायालय उसी राज्य में स्थित हो या न हो, किन्तु वह न्यायालय जिसको डिक्री निष्पादन के लिए भेजी गई है उस दशा में जिसमें उसे डिक्री को निष्पादित करने की अधिकारिता नहीं है ऐसे न्यायालय को भेजेगा जिसे ऐसी अधिकारिता है ।";

(iv) नियम 11 के उपनियम (2) में, खण्ड (ङ) में, उपखण्ड (ii) के स्थान पर निम्नलिखित उपखण्ड रखा जाएगा, अर्थात् :—

"(ii) किसी संपत्ति की कुर्की द्वारा, या कुर्की और विक्रय द्वारा, या कुर्की के बिना विक्रय द्वारा ।";

(v) नियम 11 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

गिरफ्तारी के लिए आवेदन में आधारों का कथित होना ।

"11क. जहां कि निर्णीत ऋणी की गिरफ्तारी और कारागार में निरोध के लिए आवेदन किया जाता है वहां उसमें उन आधारों का, जिन पर गिरफ्तारी के लिए आवेदन किया गया है, कथन होगा या उसके साथ एक शपथपत्र होगा जिसमें उन आधारों का कथन किया गया होगा ।";

(vi) नियम 16 में निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्त में जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"स्पष्टीकरण—इस नियम की कोई बात धारा 146 के उपबन्धों को प्रभावित नहीं करेगी, और उस सम्पत्ति में, जो वाद की विषयवस्तु है, अधिकारों का कोई अन्तरिती डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन, इस नियम द्वारा यथाअपेक्षित डिक्री के पृथक् समनुदेशन के बिना, कर सकेगा।";

(vii) नियम 17 के,—

(क) उपनियम (1) में, "तो न्यायालय आवेदन को प्रतिपेक्षित कर सकेगा या त्रुटि को तभी और वहां ही या उस समय के भीतर, जो उस द्वारा नियत किया जाएगा, दूर किया जाना अनुज्ञात कर सकेगा" शब्दों के स्थान पर "तो न्यायालय त्रुटि का तभी और वहां ही उस समय के भीतर, जो उस द्वारा नियत किया जाएगा, दूर किया जाना अनुज्ञात करेगा" शब्द रखे जाएंगे ;

(ख) उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(1क) यदि त्रुटि इस प्रकार दूर न की गई तो न्यायालय आवेदन को प्रतिपेक्षित करेगा :

परन्तु जहां कि न्यायालय की राय में, नियम 11 के उप-नियम (2) के खण्ड (छ) और (ज) में निर्दिष्ट रकम के बारे में कोई अशुद्धि हो वहां न्यायालय आवेदन को प्रतिक्षेपित करने के बजाए (कार्यवाहियों के दौरान रकम को अन्तिम रूप से विनिश्चित कराने के पक्षकारों के अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना) अनन्तिम रूप से रकम विनिश्चित करेगा और इस प्रकार अनन्तिम रूप से विनिश्चित रकम के लिए डिक्री के निष्पादन के वास्ते आदेश करेगा।";

(viii) नियम 22 के उपनियम (1) में,—

(क) जहां कहीं भी "एक वर्ष" शब्द आते हैं उनके स्थान पर "दो वर्ष" शब्द रखे जाएंगे ;

(ख) खण्ड (ख) के अन्त में "अथवा" शब्द जोड़ा जाएगा ;

(ग) खण्ड (ख) के पश्चात् निम्नलिखित खण्ड अंतःस्थापित किया जाएगा अर्थात्:—

"(ग) जहां कि डिक्री का पक्षकार दिवालिया न्यायनिर्णीत किया गया है वहां दिवाले में समनुदेशिती या रिसीवर के विरुद्ध किया गया है ;" ;

(ix) नियम 22 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्:—

विक्रय से पूर्व किन्तु विक्रय की घोषणा की तामील के पश्चात् निर्णीत ऋणी की मृत्यु पर विक्रय का अपास्त न किया जाना।

"22क. जहां कि कोई सम्पत्ति किसी डिक्री के निष्पादन में बेची जाती है वहां विक्रय की घोषणा के जारी किए जाने की तारीख और विक्रय की तारीख के बीच निर्णीत ऋणी की मृत्यु के ही कारण, इस बात के होते हुए भी विक्रय अपास्त नहीं किया जाएगा कि डिक्रीदार ऐसे मृत निर्णीत ऋणी के विधिक प्रतिनिधि को उसके स्थान पर रखने में असफल हुआ है, किन्तु ऐसी असफलता के मामले में न्यायालय विक्रय को उस दशा में अपास्त कर सकेगा जिसमें उसका समाधान हो जाता है कि विक्रय से मृत निर्णीत ऋणी विहित प्रतिनिधि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।" ;

(x) नियम 24 में उपनियम (3) के स्थान पर निम्नलिखित उपनियम रखा जाएगा, अर्थात्:—

"(3) हर ऐसी आदेशिका में वह दिन विनिर्दिष्ट किया जाएगा जिस दिन या जिसके पूर्व वह निष्पादित की जाएगी और वह दिन भी विनिर्दिष्ट किया जाएगा जिस दिन या जिसके पूर्व वह न्यायालय को वापस की जाएगी, किन्तु कोई भी आदेशिका उस दशा में शून्य नहीं मानी जाएगी जिसमें उसकी वापसी के लिए कोई दिन उसमें विनिर्दिष्ट न किया गया हो।" ;

(xi) नियम 26 के उपनियम (3) में, "ऐसी प्रतिभूति अपेक्षित कर सकेगा या उस पर ऐसी शर्तें अधिरोपित कर सकेगा जैसी वह ठीक समझे" शब्दों के स्थान पर "ऐसी प्रतिभूति अपेक्षित करेगा या उस पर ऐसी शर्तें अधिरोपित करेगा जैसी वह ठीक समझे" शब्द रखे जाएंगे ;

(xii) नियम 29 में,—

(क) "ऐसे न्यायालय की डिक्री के धारक" शब्दों के पश्चात् "या ऐसी डिक्री के, जो ऐसे न्यायालय द्वारा निष्पादित की जा रही है, धारक" शब्द अंत:स्थापित किए जाएंगे;

(ख) अंत में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु यदि डिक्री धन के संदाय के लिए है तो न्यायालय उस दशा में, जिसमें वह प्रतिभूति अपेक्षित किए बिना उसका रोकना मंजूर करता है, ऐसा करने के अपने कारणों को अभिलिखित करेगा।" ;

(xiii) नियम 31 के उपनियम (2) और (3) में जहां कहीं "छह मास" शब्द आते हैं उनके स्थान पर "तीन मास" शब्द रखे जाएंगे ;

(xiv) नियम 32 के उपनियम (3) और (4) में जहां कहीं भी "एक वर्ष" शब्द आते हैं उनके स्थान पर "छह मास" शब्द रखे जाएंगे ;

(xv) नियम 34 में, उपनियम (6) के स्थान पर निम्नलिखित उपनियम रखा जाएगा, अर्थात्:—

"(6) (क) जहां दस्तावेज का रजिस्ट्रीकरण तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन अपेक्षित है, वहां न्यायालय या न्यायालय का ऐसा अधिकारी, जो न्यायालय द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत हो, ऐसी विधि के अनुसार दस्तावेज का रजिस्ट्रीकरण कराएगा;

(ख) जहां दस्तावेज का रजिस्ट्रीकरण इस प्रकार अपेक्षित नहीं है किन्तु डिक्रीदार उसका रजिस्ट्रीकरण कराने का इच्छुक है, वहां न्यायालय ऐसा आदेश कर सकेगा जैसा वह ठीक समझे;

(ग) जहां न्यायालय किसी दस्तावेज के रजिस्ट्रीकरण के लिए कोई आदेश करता है वहां वह रजिस्ट्रीकरण के व्ययों के बारे में ऐसा आदेश कर सकेगा जैसा वह ठीक समझे।";

(xvi) नियम 41 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुन:संख्यांकित किया जाएगा और —

(क) इस प्रकार पुन:संख्यांकित उपनियम (1) के खण्ड (ख) में, "निगम की दशा में" शब्दों के स्थान पर "उस दशा में, जिसमें निर्णीत ऋणी निगम हो" शब्द रखे जाएंगे ;

(ख) इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अंतःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात्:—

"(2) जहां कि धन के संदाय के लिए कोई डिक्री तीस दिन की अवधि तक अतुष्ट रही है वहां न्यायालय, डिक्रीदार के आवेदन पर उपनियम (1) के अधीन अपनी शक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना आदेश द्वारा निर्णीत ऋणी से या जहां निर्णीत ऋणी निगम हो वहां उसके किसी आफिसर से अपेक्षा कर सकेगा कि वह निर्णीत ऋणी की आस्तियों की विशिष्टियों को कथित करने वाला एक शपथ-पत्र दे ।

(3) उपनियम (2) के अधीन दिए गए किसी आदेश की अवज्ञा की दशा में आदेश देने वाले न्यायालय या कोई न्यायालय जिसे कार्यवाही अन्तरित की गई है निर्देश दे सकेगा कि आदेश की अवज्ञा करने वाले व्यक्ति को सिविल कारागार में उतनी अवधि के लिए जो छह मास से अनधिक की हो सकेगी, तब तक निरुद्ध किया जाए जब तक कि ऐसी अवधि के अवसान से पूर्व न्यायालय उसकी निर्मुक्ति का निदेश न दे ।" ;

(xvii). नियम 43 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अंतःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

जंगम संपत्ति की अभिरक्षा ।

"43क. (1) जहां कि कुर्क की गई सम्पत्ति पशुधन, कृषि उपकरण या अन्य ऐसी चीजें हैं जो सुविधापूर्वक हटाई नहीं जा सकतीं और कुर्क करने वाला आफिसर नियम 43 के परन्तुक के अधीन कार्य नहीं कर सकता है वहां वह, निर्णीत ऋणी की या डिक्रीदार की या ऐसी सम्पत्ति में हितबद्ध होने का दावा रखने वाले किसी अन्य व्यक्ति की प्रेरणा पर उसे उस गांव या स्थान में, जहां उसकी कुर्की की गई है, किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति की अभिरक्षा में (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अभिरक्षक" कहा गया है) छोड़ सकेगा ।

(2) यदि अभिरक्षक, सम्यक् सूचना के पश्चात् ऐसी सम्पत्ति को न्यायालय द्वारा बताए गए स्थान पर उस आफिसर के समक्ष, जो उस प्रयोजन के लिए प्रतिनियुक्त हो, पेश करने में या उसे इस व्यक्ति को, जिसके पक्ष में न्यायालय द्वारा प्रत्यावर्तन का आदेश किया गया है, प्रत्यावर्तित करने में असफल होता है या यदि वह सम्पत्ति इस प्रकार पेश या प्रत्यावर्तित किए जाने पर वैसी ही दशा में नहीं है जैसी कि में वह उसे सौंपे जाने के समय थी, तो,—

(क) अभिरक्षक उस किसी हानि या नुकसान के लिए, जो उसके व्यतिक्रम से हुआ हो, डिक्रीदार, निर्णीत ऋणी या किसी अन्य व्यक्ति को, जो उसके प्रत्यावर्तन का हकदार पाया जाए, प्रतिकर संदत्त करने के दायित्वाधीन होगा; और

(ख) ऐसे दायित्व का प्रवर्तन —

(i) डिक्रीदार की प्रेरणा पर इस प्रकार किया जा सकेगा मानों अभिरक्षक धारा 145 के अधीन प्रतिभू हो;

(ii) निर्णीत ऋणी या ऐसे अन्य व्यक्ति की प्रेरणा पर निष्पादन के लिए आवेदन पर किया जा सकेगा; और

(ग) ऐसे दायित्व का अवधारण करने वाला कोई आदेश डिक्री की तरह अपीलीय होगा ।" ।

(xviii) नियम 46 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अंत:स्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

गारनिशी को सूचना ।

"46क. (1) न्यायालय (बंधक या प्रभार द्वारा प्रतिभूत ऋण से भिन्न) ऋण की दशा में, जिसकी नियम 46 के अधीन कुर्की की गई है, कुर्की कराने वाले लेनदार के आवेदन पर ऐसे ऋण का संदाय करने के दायित्वाधीन गारनिशी को सूचना दे सकेगा जिसमें उससे यह अपेक्षा की जाएगी कि वह निर्णीत ऋणी को उसके द्वारा शोध्य ऋण या उसका इतना भाग जितना डिक्री और निष्पादन के खर्चे की पूर्ति के लिए पर्याप्त हो या तो न्यायालय में संदत्त करे या उपसंजात हो तथा कारण दर्शित करे कि उसे वैसा क्यों नहीं करना चाहिए ।

(2) उपनियम (1) के अधीन कोई आवेदन शपथपत्र पर किया जाएगा जिसमें अभिकथित तथ्य सत्यापित होंगे और यह कथित होगा कि अभिसाक्षी को विश्वास है कि गारनिशी निर्णीत ऋणी का ऋणी है ।

(3) जहां कि गारनिशी निर्णीत ऋणी को उस द्वारा शोध्य रकम या उसका इतना भाग जितना डिक्री और निष्पादन के खर्चे की पूर्ति के लिए पर्याप्त है न्यायालय में संदत्त कर देता है वहां न्यायालय निदेश दे सकेगा कि वह रकम डिक्री की तुष्टि और निष्पादन के खर्च के लिए डिक्रीदार को संदत्त कर दी जाए ।

गारनिशी के विरुद्ध आदेश ।

46ख. जहां कि गारनिशी निर्णीत ऋणी को उस द्वारा शोध्य रकम या उसका इतना भाग जितना डिक्री की तुष्टि और निष्पादन के खर्च की पूर्ति के लिए पर्याप्त है तुरन्त न्यायालय में संदत्त नहीं करता है और उपसंजात नहीं होता है तथा सूचना के अनुसरण में कारण दर्शित नहीं करता है वहां न्यायालय गारनिशी को आदेश दे सकेगा कि वह ऐसी सूचना के निबंधनों का अनुपालन करे और ऐसे आदेश पर निष्पादन इस प्रकार जारी हो सकेगा मानो ऐसा आदेश उसके विरुद्ध डिक्री हो।

विवादग्रस्त प्रश्नों का विचारण ।

46ग. जहां कि गारनिशी दायित्व के बारे में विवाद करता है वहां न्यायालय आदेश दे सकेगा कि दायित्व के अवधारण के लिए किसी विवाद्यक या आवश्यक प्रश्न का विचारण इस प्रकार किया जाएगा मानो वह वाद में का विवाद्यक हो और ऐसे विवाद्यक के अवधारण पर ऐसा आदेश या ऐसे आदेश करेगा जो वह ठीक समझे :

परन्तु यदि वह ऋण, जिसके संबंध में नियम 46 क के अधीन आवेदन किया गया है, इतनी धनराशि के बारे में है, जो न्यायालय की आर्थिक अधिकारिता के बाहर है, तो न्यायालय निष्पादन के मामले को उस जिला न्यायाधीश के न्यायालय को भेजेगा जिसके कि उक्त न्यायालय अधीनस्थ है और तब जिला न्यायाधीश का न्यायालय या कोई अन्य सक्षम न्यायालय, जिसे वह जिला न्यायाधीश द्वारा अंतरित किया जाए, उसे उसी प्रकार निपटाएगा मानो वह मामला प्रारम्भ में इसी न्यायालय में संस्थित किया गया था ।

जहां ऋण अन्य व्यक्ति का हो वहां प्रक्रिया ।

46घ. जहां कि यह सुझाया जाता है या संभाव्य प्रतीत होता है कि ऋण किसी अन्य व्यक्ति का है या कि ऐसे ऋण पर किसी अन्य व्यक्ति का धारणाधिकार या प्रभार अथवा उसमें अन्य हित है वहां न्यायालय ऐसे अन्य व्यक्ति को आदेश दे सकेगा कि वह उपसंजात हो और ऐसे ऋण के बारे में अपने दावे का स्वरूप और विशिष्टियां, यदि कोई हो, कथित करे और उसे साबित करे ।

अन्य व्यक्ति के बारे में आदेश ।

46ङ. ऐसे अन्य व्यक्ति और किसी ऐसे व्यक्ति या व्यक्तियों को जिन्हें तत्पश्चात् उपसंजात होने का आदेश दिया जाए सुनने के पश्चात् जहां ऐसे अन्य या दूसरा व्यक्ति या दूसरे व्यक्ति ऐसा आदेश दिए जाने पर उपसंजात नहीं होते हैं, वहां न्यायालय ऐसा आदेश दे सकेगा जैसा इसमें इसके पूर्व उपबंधित है या ऐसे अन्य अथवा दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों के यथास्थिति धारणाधिकार, प्रभार या हित के संबंध में, ऐसे निबंधनों पर, यदि कोई हों, ऐसा अन्य आदेश या ऐसे अन्य आदेश दे सकेगा जैसा या जैसे वह ठीक और उचित समझे ।

गारनिशी द्वारा संदाय का विधिमान्य उन्मोचन होना ।

46च. नियम 46क के अधीन या पूर्वोक्त प्रकार के किसी आदेश के अधीन सूचना पर गारनिशी द्वारा किया गया संदाय निर्णीत ऋणी और पूर्वोक्त प्रकार से उपसंजात होने के लिए आदिष्ट किसी अन्य व्यक्ति के विरुद्ध उस रकम के लिए जो संदत्त की गई हो या उद्ग्रहीत की गई हो उसका विधिमान्य उन्मोचन होगा चाहे वह डिक्री जिसके निष्पादन में नियम 46क के अधीन आवेदन किया गया था, या ऐसे आवेदन पर की गई कार्यवाहियों में पारित आदेश अपास्त कर दिया जाए या उलट दिया जाए ।

खर्चे ।

46छ. नियम 46क के अधीन किए गए किसी आवेदन के और उससे होने वाली किसी कार्यवाही के अथवा उसके आनुषंगिक खर्चे न्यायालय के विवेकाधीन होंगे ।

अपीलें ।

46ज. नियम 46ख, नियम 46ग या नियम 46ङ के अधीन किया गया कोई आदेश डिक्री की तरह अपीलीय होगा ।

परक्राम्य लिखितों को लागू होना ।

46झ. नियम 46क से लेकर 46ज तक के (जिनके अन्तर्गत ये दोनों नियम भी हैं) उपबंध नियम 51 के अधीन कुर्क की गई परक्राम्य लिखतों के संबंध में यावतशक्य वैसे ही लागू होंगे जैसे वे ऋणों के संबंध में लागू होते है ।" ; 1956 का 1

(xix) नियम 48 में —

(क) उपनियम (1) में "या स्थानीय प्राधिकारी के सेवक का" शब्दों के पश्चात् "या किसी व्यापार या उद्योग में लगे किसी निगम के जो केन्द्रीय, प्रांतीय या राज्य अधिनियम द्वारा स्थापित हो, सेवक का या कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 617 में यथापरिभाषित किसी सरकारी कंपनी के सेवक का" शब्द और अंक अंत:स्थापित किए जाएंगे ;

(ख) उपनियम (3) के स्थान पर, निम्नलिखित उपनियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

"(3) इस नियम के अधीन किया गया हर आदेश, जब तक कि वह उपनियम (2) के उपबन्धों के अनुसरण में

लौटा न लिया जाए अतिरिक्त सूचना या अन्य आदेशिका के बिना उस समय तक जब तक कि निर्णीत ऋणी उन स्थानीय सीमाओं के भीतर है जिन पर इस संहिता का तत्समय विस्तार है, और यदि वह भारत की संचित निधि में से या राज्य की संचित निधि में से या भारत में की किसी रेल कंपनी या स्थानीय प्राधिकारी या निगम या सरकारी कंपनी की निधि में से संदेय कोई संबलम या भत्ते पर रहा है तो उस समय तक भी, जब तक कि वह इन सीमाओं के परे है, यथास्थिति, समुचित सरकार या रेल कंपनी या स्थानीय प्राधिकारी को या निगम या सरकारी कंपनी पर आधृत कर होगा और, यथास्थिति समुचित सरकार या रेल कंपनी या स्थानीय प्राधिकारी या निगम या सरकारी कंपनी इस नियम के उल्लंघन में संदत्त की गई किसी राशि के लिए दायी होगी ।" ;

(ग) स्पष्टीकरण के स्थान पर निम्नलिखित स्पष्टीकरण रखा जाएगा, अर्थात् :—

"**स्पष्टीकरण** —इस नियम में "समुचित सरकार" से अभिप्रेत है—

(i) केन्द्रीय सरकार की सेवा में के किसी व्यक्ति के, या रेल प्रशासन के या छावनी प्राधिकारी के या महापत्तन के पत्तन प्राधिकारी के किसी सेवक के, या किसी व्यापार या उद्योग में लगे किसी निगम के जो केन्द्रीय अधिनियम द्वारा स्थापित हो, किसी सेवक के या ऐसी सरकारी कंपनी के जिसमें शेयर पूंजी का कोई भाग केन्द्रीय सरकार द्वारा या एक से अधिक राज्य सरकारों द्वारा या भागतः केन्द्रीय सरकार और भागतः एक या अधिक राज्य सरकारों द्वारा धारित हो किसी सेवक के संबंध में, केन्द्रीय सरकार;

(ii) सरकार के किसी अन्य सेवक के, या किसी अन्य स्थानीय प्राधिकारी के किसी सेवक के या किसी व्यापार या उद्योग में लगे किसी निगम के जो प्रान्तीय या राज्य अधिनियम द्वारा स्थापित हो किसी सेवक, के, या किसी अन्य सरकारी कम्पनी के किसी सेवक के संबंध में राज्य सरकार।" ;

(XX) नियम 48 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अंतःस्थापित किया जाएगा अर्थात् :—

प्राइवेट कर्मचारियों के संबलम या भत्तों की कुर्की ।

"48क. (1) जहां कि कुर्क की जाने वाली सम्पत्ति ऐसे सेवक से जिसको नियम 48 लागू होता है भिन्न किसी सेवक का संबलम् या भत्ते हो वहां न्यायालय उस दशा में जिसमें उस कर्मचारी का संवितरक आफिसर न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के अन्दर है, आदेश दे सकेगा कि वह रकम, धारा 60 के उपबंधों के अधीन रहते हुए ऐसे संबलम या भत्तों में से या तो एक किश्त या एकमुश्त राशि में या मासिक किश्तों में जैसा भी न्यायालय निदेश दे विधारित की जाएगी; और ऐसे संवितरक आफिसर को आदेश की सूचना पर ऐसा संवितरक आफिसर,

यथास्थिति आदेश के अधीन शोध्य रकम या मासिक किस्तों को न्यायालय को विप्रेषित करेगा।

(2) जहां कि ऐसे वेतन या भत्तों का कुर्क किया जा सकने वाला भाग कुर्की के किसी पूर्वतन और अतुष्ट आदेश के अनुसरण में पहले से ही विधारित किया जा रहा है या न्यायालय को विप्रेषित किया जा रहा है, वहां संवितरक आफिसर पश्चात्वर्ती आदेश को, विद्यमान कुर्की की सब विशिष्टियों का एक पूरा विवरण देते हुए तुरन्त न्यायालय को लौटा देगा।

(3) इस नियम के अधीन किया गया हर आदेश जब तक कि वह उप नियम (2) के उपबंधों के अनुसरण में लौटा न दिया जाए अतिरिक्त सूचना या अन्य आदेशिका के बिना उस समय तक जब तक कि निर्णीतऋणी उन स्थानीय सीमाओं के भीतर है जिन पर इस संहिता का तत्समय विस्तार है और यदि वह भारत के किसी भाग के किसी नियोजक की निधि में से संदेय वेतन या भत्तों को प्राप्त कर रहा है तो उस समय तक भी जब तक कि, वह इन सीमाओं से परे है, नियोजक को संदाय करेगा; और नियोजक इस नियम के उल्लंघन में संदत्त की गई किसी भी राशि के लिए दायी होगा।'

(xxi) नियम 50 में,—

(क) उपनियम (1) के परन्तुक में, "भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 247" शब्दों और अंकों के स्थान पर "भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932 की धारा" 30" शब्द और अंक रखे जाएंगे 1872 का 9 1932 का 9

(ख) उपनियम (4) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अंतःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(5) आदेश 30 के नियम 10 के उपबंधों के आधार पर इस नियम की कोई बात हिन्दू अविभक्त कुटुम्ब के विरुद्ध पारित किसी डिक्री पर लागू नहीं होती है";

(xxii) नियम 53 में,—

(क) उपनियम (1) में खण्ड (ख) के उपखंड (ii) के स्थान पर निम्नलिखित उपखंड रखा जाएगा, अर्थात् :—

"(ii) (क) जिस डिक्री के निष्पादन को ईप्सा की गई है उस डिक्री का धारक, या

(ख) ऐसे डिक्रीदार की लिखित पूर्व सम्मति से या कुर्क करने वाले न्यायालय की अनुज्ञा से उसका निर्णीत ऋणी,

ऐसी सूचना प्राप्त करने वाले न्यायालय से यह आवेदन न करे कि वह कुर्क की गई डिक्री का निष्पादन करे।"

(ख) उपनियम (6) में, "जो ऐसे आदेश का उल्लंघन करके निर्णीत ऋणी" शब्दों के पश्चात्, "उसकी जानकारी रखते हुए या" शब्द अंतःस्थापित किए जाएंगे;

(xxiii) नियम 54 में,—

(क) उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अंतःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(1क) आदेश में निर्णीत ऋणी से यह अपेक्षा की जाएगी कि वह विक्रय की उद्घोषणा के निबंधनों को तय करने के लिए

नियत की जाने वाली तारीख की सूचना लेने के लिए किसी विनिर्दिष्ट तारीख को न्यायालय में हाजिर हो।" ;

(ख) उपनियम (2) के अन्त में निम्नलिखित शब्द जोड़े जाएंगे, अर्थात्:—

"और जहां कि सम्पत्ति किसी गांव में स्थित भूमि है वहां उस गांव पर अधिकारिता रखने वाली ग्राम पंचायत के, यदि कोई हो, कार्यालय में भी लगाई जाएगी।" ;

(xxiv) नियम 57 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

कुर्की का पर्यवसान

"57. (1) जहां कि कोई सम्पत्ति किसी डिक्री के निष्पादन में कुर्क कर ली गई है और न्यायालय किसी कारण से डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन को खारिज करने का आदेश पारित करता है वहां न्यायालय यह निदेश देगा कि कुर्की जारी रहेगी या समाप्त हो जाएगी और वह कालावधि, जिस तक ऐसी कुर्की जारी रहेगी और वह तारीख, जिसको कुर्की समाप्त हो जाएगी, भी उपदर्शित करेगा।

(2) यदि न्यायालय ऐसा निदेश देने में लोप करे तो यह समझा जाएगा कि कुर्की समाप्त हो गई है।" ;

(xxv) उपशीर्षक "दावों और आक्षेपों का अन्वेषण" के स्थान पर तथा नियम 58 से लेकर 63 तक के स्थान पर निम्नलिखित उप-शीर्षक और नियम रखे जाएंगे, अर्थात् :—

"दावों और आक्षेपों का न्यायनिर्णयन

कुर्क की गई सम्पत्ति पर दावों का और ऐसी सम्पत्ति की कुर्की के बारे में आक्षेपों का न्याय-निर्णयन।

58. (1) जहां कि डिक्री के निष्पादन में कुर्क की गई किसी सम्पत्ति पर कोई दावा या उसकी कुर्की के बारे में कोई आक्षेप इस आधार पर किया जाता है कि ऐसी सम्पत्ति ऐसे कुर्क किए जाने के दायित्व के अधीन नहीं है वहां न्यायालय ऐसे दावे या आक्षेप का न्यायनिर्णयन करने के लिए इसमें अन्तर्विष्ट उपबंधों के अनुसार अग्रसर होगा :

परन्तु कोई ऐसा दावा या आक्षेप उस दशा में ग्रहण नहीं किया जाएगा जिसमें—

(क) दावा या आक्षेप करने से पूर्व कुर्क की गई सम्पत्ति का विक्रय कर दिया गया है ; या

(ख) न्यायालय समझता है कि दावा या आक्षेप करने में परिकल्प नापूर्वक या अनावश्यक रूप से विलम्ब किया गया है।

(2) इस नियम के अधीन कार्यवाही के पक्षकारों के बीच या उनके प्रतिनिधियों के बीच पैदा होने वाले तथा दावे या आक्षेप के न्यायनिर्णयन से सुसंगत सब प्रश्न (जिनके अन्तर्गत कुर्क की गई सम्पत्ति में अधिकार, हक या हित से संबंधित प्रश्न भी हैं) दावे या आक्षेप को निपटाने वाले न्यायालय द्वारा अवधारित किए जाएंगे, न कि पृथक् वाद द्वारा।

(3) उपनियम (2) में निर्दिष्ट प्रश्नों के अवधारण पर, न्यायालय ऐसे अवधारण के अनुसार,—

(क) दावे या आक्षेप को अनुज्ञात करेगा और सम्पत्ति को या तो पूर्णतः या उस विस्तार तक जिस तक वह ठीक समझे कुर्की से निर्मुक्त कर देगा ; या

(ख) दावे या आक्षेप को अननुज्ञात करेगा ; या

(ग) कुर्की को किसी व्यक्ति के पक्ष में किसी बंधक, प्रभार या अन्य हित के अधीन जारी रखेगा ; या

(ख) ऐसा आदेश पारित करेगा जो वह मामले की परिस्थितियों में ठीक समझे।

(4) जहां कि कोई दावा या आक्षेप इस अधिनियम के अधीन न्याय निर्णीत किया गया है वहां उस पर किए गए आदेश का ऐसा प्रभाव होगा और वह अपील या अन्य मामले में ऐसी शर्तों के अधीन होगा मानो वह डिक्री थी।

(5) जहां कि कोई दावा या आक्षेप किया गया हो और न्यायालय उपनियम (1) के परन्तुक के अधीन उसे ग्रहण करने से इन्कार करे वहां वह पक्षकार जिसके विरुद्ध ऐसा आदेश दिया जाए उस अधिकार को सिद्ध करने के लिए जिसके लिए वह विवादग्रस्त सम्पत्ति में दावा करता है वाद संस्थित कर सकेगा ; किन्तु ऐसे वाद के, यदि कोई हो, परिणाम के अधीन रहते हुए दावे या आक्षेप को ग्रहण करने से इस प्रकार इन्कार करने वाला आदेश निश्चायक होगा।

59. जहां कि कुर्क की गई सम्पत्ति दावे या आक्षेप के किए जाने से पूर्व विक्रय के लिए विज्ञापित की जा चुकी है वहां न्यायालय—

(क) यदि सम्पत्ति जंगम है तो दावे या आक्षेप के न्यायनिर्णयन तक केलिए विक्रय को मुलतवी करने का आदेश दे सकेगा; या

(ख) यदि सम्पत्ति स्थावर है तो यह आदेश दे सकेगा कि दावे या आक्षेप के न्याय निर्णयन तक सम्पत्ति का विक्रय नहीं किया जाएगा या ऐसे न्यायनिर्णयन तक सम्पत्ति का विक्रय किया जा सकता है किन्तु विक्रय को पुष्ट नहीं किया जाएगा,

और ऐसा कोई आदेश प्रतिभूति या अन्य बातों के बारे में ऐसे निबंधनों और शर्तों के अधीन किया जा सकेगा जिसे न्यायालय ठीक समझे।";

(xxvi) नियम 66 में,—

(क) नियम 2 के खण्ड (क) में "वह सम्पत्ति जिसका विक्रय किया जाना है" शब्दों के पश्चात् "या जहां संपत्ति का कोई भाग डिक्री की तुष्टि के लिए पर्याप्त होगा वहां वह भाग" शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे;

(ख) उपनियम (2) में निम्नलिखित परन्तुक जोड़े जाएंगे, अर्थात् :—

"परन्तु जहां कि उद्घोषणा के निबंधनों को तय करने की तारीख की सूचना नियम 54 के अधीन किसी आदेश के माध्यम से निर्णीत ऋणों को दी गई है वहां जब तक कि न्यायालय अन्यथा निदेश न दे निर्णीत ऋणी को इस नियम के अधीन सूचना देना आवश्यक नहीं होगा :

परन्तु यह और कि इस नियम की किसी बात का यह अर्थ नहीं किया जाएगा कि वह न्यायालय से यह अपेक्षा करती है कि वह विक्रय की उद्घोषणा में सम्पत्ति के मूल्य की बाबत अपने प्राक्कलन प्रविष्ट करे, किन्तु उद्घोषणा के अन्तर्गत दोनों पक्षकारों या उनमें से किसी के द्वारा दिया गया प्राक्कलन, यदि कोई हो, होगा।" ;

(xxvii) नियम 68 में,—

(क) "तीस दीन" शब्दों के स्थान पर "पन्द्रह दिन" शब्द रखे जाएंगे ;

(ख) "पन्द्रह दिन" शब्दों के स्थान पर "सात दिन" शब्द रखे जाएंगे ;

(xxviii) नियम 69 के उपनियम (2) में, "सात" शब्द के स्थान पर "तीस" शब्द रखा जाएंगा ;

(xxix) नियम 72 के पश्चात्, निम्नलिखित नियम अंत:स्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

बंधकदार का न्यायालय की इजाजत के बिना विक्रय में बोली न लगाना।

"72क. (1) नियम 72 में किसी बात के होते हुए भी स्थावर सम्पत्ति का कोई बंधकदार, बंधक पर डिक्री के निष्पादन में विक्रीत सम्पत्ति के लिए बोली नहीं लगाएगा या उसे क्रय नहीं करेगा जब तक कि न्यायालय उसे उस सम्पत्ति के लिए बोली लगाने या उसे क्रय करने की इजाजत न दे दे।

(2) यदि ऐसे बंधकदार को बोली लगाने की इजाजत दी जाती है तो न्यायालय बंधकदार के संबंध में कोई आरक्षित कीमत नियत करेगा और जब तक कि न्यायालय अन्यथा निदेश न दे आरक्षित कीमत—

(क) यदि सम्पत्ति का विक्रय एक लाट में किया जाता है तो बंधक के संबंध में मूलधन, ब्याज और खर्च मद्दे उस समय शोध्य रकम से अन्यून होगी ; और

(ख) किसी सम्पत्ति का विक्रय लाटों में किए जाने की दशा में उतनी राशि से कम नहीं होगा जितनी प्रत्येक लाट के सम्बन्ध में न्यायालय को यह प्रतीत हो कि वह बंधक पर मूलधन, ब्याज और खर्च मद्दे उस समय शोध्य रकम के संबंध में उस लाट के लिए उचित मानी जा सकती है।

(3) अन्य मामलों में, नियम 72 के उपनियम (2) और (3) के उपबंध उस नियम के अधीन डिक्रीदार द्वारा क्रय के संबंध में लागू होंगे।" ;

(xxx) नियम 89 के उपनियम (1) में, "या तो ऐसी सम्पत्ति का स्वामी या उसमें ऐसे हक के आधार पर, जो ऐसे विक्रय से पूर्व अर्जित किया गया था हितबद्ध कोई भी व्यक्ति" शब्दों के स्थान पर, "विक्रीत सम्पत्ति में विक्रय के समय या आवेदन करने के समय किसी हित का दावा करने वाला अथवा ऐसे व्यक्ति के लिए या उसके हित में कार्यशील कोई व्यक्ति" शब्द रखे जाएंगे ;

(xxxi) नियम 90 के स्थान पर निम्नलिखित नियम अंत:स्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

विक्रय को अनियमितता या कपट के आधार पर अपास्त कराने के लिए आवेदन।

"90. (1) जहां कि किसी डिक्री के निष्पादन में कोई स्थावर सम्पत्ति बेच दी गई है वहां डिक्रीदार, या क्रेता, या ऐसा कोई अन्य व्यक्ति जो आस्तियों के आनुपातिक वितरण में अंश पाने का हकदार है या जिसके हित विक्रय के द्वारा प्रभावित हुए हैं विक्रय को उसके प्रकाशन या संचालन में हुई तात्विक अनियमितता या कपट के आधार पर अपास्त कराने के लिए न्यायालय से आवेदन कर सकेगा।

(2) उसके प्रकाशन या संचालन में हुई अनियमितता या कपट के आधार पर कोई भी विक्रय अपास्त नहीं किया जाएगा जब तक साबित किए गए तथ्यों के आधार पर न्यायालय का समाधान नहीं हो जाता कि ऐसी अनियमितता या कपट के कारण आवेदक को सारवान् क्षति हुई है।

(3) इस नियम के अधीन विक्रय को अपास्त करने के लिए कोई आवेदन ऐसे किसी आधार पर ग्रहण नहीं किया जाएगा जिसे आवेदक उस तारीख को या उससे पूर्व प्रस्तुत कर सकता था जिसको कि विक्रय की उद्घोषणा तैयार की गई थी।

स्पष्टीकरण—विक्रीत सम्पत्ति की कुर्की का केवल अभाव या उसमें त्रुटि अपने आप में इस नियम के अधीन किसी विक्रय को अपास्त करने के लिए कोई आधार नहीं होगी ।" ;

(xxxii) नियम 92 में,—

(क) उपनियम (1) में, निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु जहां किसी संपत्ति का, ऐसी संपत्ति के किसी दावे का अंतिम निपटारा या उसकी कुर्की के लिए आक्षेप के लम्बित रहने तक डिक्री के निष्पादन में विक्रय किया गया है वहां न्यायालय ऐसे विक्रय को ऐसे दावे या आक्षेप के अंतिम निपटारे तब पुष्ट नहीं करेगा ।";

(ख) उपनियम (2) में, "वह न्यायालय विक्रय को अपास्त करने वाले आदेश करेगा" शब्दों के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाएगा, अर्थात् :—

"या उस दशा में जिसमें नियम 89 के अधीन निक्षिप्त रकम निक्षेपक की ओर से हुई किसी लिपिकीय या गणित संबंधी भूल के कारण कम पायी जाए और ऐसी कमी इतने समय के अन्दर पूरी कर दी जाती है जितना न्यायालय द्वारा नियत किया जाए, न्यायालय विक्रय को अपास्त करने वाला आदेश करेगा" ;

(ग) उपनियम (3) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अंत:स्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

"(4) जहां कि कोई अन्य पक्षकार नीलाम-क्रेता के विरुद्ध वाद फाइल करके निर्णीत ऋणी के हक को चुनौती देता है वहां डिक्रीदार और निर्णीत ऋणी वाद के आवश्यक पक्षकार होंगे ।

(5) यदि उपनियम (4) में निर्दिष्ट वाद की डिक्री दे दी जाती है तो न्यायालय डिक्रीदार को निदेश देगा कि वह नीलाम-क्रेता को धन राशि वापस कर दे और जहां ऐसा आदेश पारित किया जाता है वहां निष्पादन की कार्यवाहियां जिनमें विक्रय किया गया था उस दशा के सिवाय जिनमें कि न्यायालय अन्यथा निदेश देता है, उस प्रक्रम पर पुन: प्रवर्तित की जाएंगी, जिस पर विक्रय का आदेश दिया गया था ।" ;

(xxxiii) नियम 97 में, उपनियम (2) के स्थान पर, निम्नलिखित उपनियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

"(2) जहां कि कोई आवेदन उपनियम (1) के अधीन किया जाए वहां न्यायालय उस आवेदन पर न्यायनिर्णयन इसमें अन्तर्विष्ट उपबंधों के अनुसार करने के लिए अग्रसर होगा ।" ;

न्यायनिर्णयन के पश्चात् आदेश ।

(xxxiv) नियम 98 से लेकर 103 तक के नियमों के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखे जाएंगे, अर्थात् :—

"98. (1) नियम 101 में निर्दिष्ट प्रश्नों के अवधारण पर न्यायालय ऐसे अवधारण के अनुसार और उपनियम (2) के उपबंधों के अधीन रहते हुए,—

(क) आवेदन को मंजूर करते हुए और यह निदेश देते हुए कि आवेदक को सम्पत्ति का कब्जा दे दिया जाए या आवेदन को खारिज करते हुए आदेश करेगा ; या

(ख) ऐसा अन्य आदेश पारित करेगा जैसा वह मामले की परिस्थितियों में ठीक समझे ।

(2) जहां कि ऐसे अवधारण पर न्यायालय का समाधान हो जाता है कि निर्णीत ऋणी या उसके द्वारा उकसाहट पर किसी अन्य व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से या किसी अन्तरिती द्वारा, जहां ऐसा अन्तरण वाद या निष्पादन कार्यवाही के लम्बित रहने के दौरान किया गया था, प्रतिरोध किया गया था या बाधा डाली गई थी वहां वह निदेश देगा कि आवेदक को सम्पत्ति पर कब्जा दिलाया जाए और जहां कि तब भी कब्जा अभिप्राप्त करने में आवेदक का प्रतिरोध किया जाता है या उसे बाधा डाली जाती है वहां न्यायालय निर्णीत ऋणी या उसके द्वारा उकसाहट से या उसकी ओर से कार्य करने वाले व्यक्ति को ऐसी अवधि के लिए जो तीस दिन तक की हो सकेगी सिविल कारागार में निरुद्ध किए जाने का आदेश भी आवेदक की प्रार्थना पर दे सकेगा ।

डिक्रीदार या क्रेता द्वारा बेकब्जा किया जाना ।

99. (1) जहां कि निर्णीत ऋणी से भिन्न कोई व्यक्ति स्थावर सम्पत्ति पर कब्जे की डिक्री के धारक द्वारा या जहां कि ऐसी सम्पत्ति डिक्री के निष्पादन में बची जा चुकी है वहां उसके क्रेता द्वारा ऐसी सम्पत्ति पर से बेकब्जा कर दिया गया हो वहां वह ऐसे बेकब्जा किए जाने का परिवाद करते हुए न्यायालय से आवेदन कर सकेगा ।

(2) जहां ऐसा कोई आवेदन किया जाए वहां न्यायालय आवेदन पर न्यायनिर्णयन इसमें अन्तर्विष्ट उपबन्ध के अनुसार करने के लिए अग्रसर रहेगा ।

बेकब्जा का परिवाद करने वाले आवेदन पर पारित किया जाने वाला आदेश ।

100. नियम 101 में निर्दिष्ट प्रश्नों के अवधारण पर न्यायालय ऐसे अवधारण के अनुसार,—

(क) आवेदन को मंजूर करते हुए और यह निदेश देते हुए कि आवेदक को संपत्ति का कब्जा दे दिया जाए या आवेदन को खारिज करते हुए आदेश करेगा; या

(ख) ऐसा अन्य आदेश पारित करेगा जैसा वह मामले की परिस्थितियों में ठीक समझे ।

अवधारित किए जाने वाले प्रश्न ।

101. नियम 97 या नियम 99 के अधीन किसी आवेदन पर किसी कार्यवाही के पक्षकारों अथवा उनके प्रतिनिधियों के बीच पैदा होने वाले और आवेदन के न्यायनिर्णयन से सुसंगत सब प्रश्न (जिनके अन्तर्गत सम्पत्ति में अधिकार, हक या हित से संबंधित प्रश्न भी हैं), आवेदन को निपटाने वाले न्यायालय द्वारा अवधारित किए जाएंगे न कि पृथक वाद द्वारा और इस प्रयोजन के लिए न्यायालय, तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अन्तर्विष्ट किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी, ऐसे प्रश्न का विनिश्चय करने की अधिकारिता रखने वाला समझा जाएगा ।

वादकालीन अंतरिती को इन नियमों का लागू न होना ।

102. नियम 98 और 100 में की कोई भी बात स्थावर सम्पत्ति के कब्जे के लिए डिक्री के निष्पादन में उस व्यक्ति द्वारा किए गए प्रतिरोध या डाली गई बाधा को या किसी ऐसे व्यक्ति के बेकब्जा किए जाने को लागू नहीं होगी जिसे

निर्णीत ऋणी ने वह सम्पत्ति उस वाद के, जिसमें डिक्री पारित की गई थी संस्थित किए जाने के पश्चात् अन्तरित की है ।

स्पष्टीकरण—इस नियम में, "अंतरण" के अन्तर्गत विधि के प्रवर्तन द्वारा अंतरण भी है ।

आदेशों को डिक्री माना जाना ।

103. जहां कि किसी आवेदन पर न्यायनिर्णय नियम 98 या नियम 100 के अधीन किया गया है वहां उस पर किए गए आदेश का ऐसा ही प्रभाव होगा और वह अपील या अन्य बातों के बारे में ऐसी ही शर्तों के अधीन होगा मानो वह कोई डिक्री हो ।"

(XXXV) नियम 103 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

नियम 101 या नियम 103 के अधीन आदेश लम्बित वाद के परिणाम के अधीन होगा ।

"104. नियम 101 या नियम 103 के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, उस कार्यवाही के, जिसमें ऐसा आदेश किया जाए, प्रारंभ की तारीख को लम्बित किसी वाद के परिणाम के अधीन उस दशा में होगा जिसमें उस वाद में ऐसे पक्षकार द्वारा, जिसके विरुद्ध नियम 101 या नियम 103 के अधीन आदेश किया गया हो, ऐसा अधिकार स्थापित करना ईप्सित हो जिसका कि वह उस सम्पत्ति के वर्तमान कब्जे की बाबत दावा करता है ।

आवेदन की सुनवाई ।

105. (1) वह न्यायालय जिसके समक्ष इस आदेश के पूर्वगामी नियमों में से किसी के अधीन कोई आवेदन लम्बित हो उस सुनवाई के लिए एक दिन नियत कर सकेगा ।

(2) जहां कि नियत दिन या किसी अन्य दिन सुनवाई स्थगित की जाए, उस दिन मामले की सुनवाई के लिए पुकार होने पर आवेदक उपसंजात नहीं होता है वहां न्यायालय आदेश दे सकेगा कि आवेदन खारिज कर दिया जाए ।

(3) जहां कि आवेदक उपसंजात होता है और विरोधी पक्षकार, जिसको न्यायालय द्वारा सूचना दी गई है, उपसंजात नहीं होता है वहां न्यायालय आवेदन को एकपक्षीय रूप से सुन सकेगा और ऐसा आदेश पारित कर सकेगा जैसा वह ठीक समझे ।

स्पष्टीकरण—उपनियम (1) में निर्दिष्ट किसी आवेदन के अन्तर्गत नियम 58 के अधीन किया गया कोई दावा या आक्षेप भी है ।

एकपक्षीय रूप से पारित आदेशों आदि को अपास्त करना ।

106. (1) आवेदक, जिसके खिलाफ नियम 104 के उपनियम (2) के अधीन कोई आदेश दिया जाता है अथवा विरोधी पक्षकार, जिसके खिलाफ उस नियम की उपधारा (3) के अधीन अथवा नियम 23 के उपनियम (1) के अधीन कोई एकपक्षीय आदेश पारित किया जाता है, उस आदेश को अपास्त करने के लिए न्यायालय को आवेदन कर सकेगा, और यदि वह न्यायालय का समाधान कर देता है कि आवेदन की सुनवाई के लिए पुकार होने पर उसके उपसंजात न होने के लिए पर्याप्त कारण था तो न्यायालय खर्चों या अन्य बातों के बारे में ऐसे निबंधनों पर, जैसे वह ठीक समझे, आदेश अपास्त करेगा, और आवेदन की आगे सुनवाई के लिए एक दिन नियत करेगा ।

(2) उपनियम (1) के अधीन आवेदन पर कोई आदेश तब तक नहीं दिया जाएगा जब तक उस आवेदन की सूचना की तामील दूसरे पक्षकार पर न कर दी गई हो ।

(3) उपनियम (1) के अधीन आवेदन आदेश की तारीख से तीस दिन के अन्दर किया जाएगा, या जहां कि एकपक्षीय आदेश की दशा में सूचना की सम्यक् रूप से तामील नहीं हुई थी वहां उस तारीख से, जब कि आवेदक को आदेश की जानकारी हुई थी, तीस दिन के अन्दर किया जाएगा।" ।

आदेश 22 का संशोधन।

73. प्रथम अनुसूची में, आदेश 22 में,—

(i) नियम 4 में उपनियम (3) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

"(4) न्यायालय, जब कभी यह ठीक समझे, वादी को किसी ऐसे प्रतिवादी के, जो लिखित कथन फाइल करने में असफल रहा है या जो उसे फाइल कर चुकने पर, उपसंजात होने में और सुनवाई पर प्रतिवाद करने में असफल रहा है, विधिक प्रतिनिधि को प्रतिस्थापित करने की आवश्यकता से मुक्त कर सकेगा और ऐसे मामले में निर्णय उक्त प्रतिवादी के विरुद्ध ऐसे प्रतिवादी की मृत्यु के हो जाने पर भी सुनाया जा सकेगा और वह ऐसे ही प्रवृत्त होगा और उसका वैसा ही प्रभाव होगा मानो वह मृत्यु होने के पूर्व सुनाया गया था।

(5) जहां कि—

(क) वादी प्रतिवादी की मत्यु से अनभिज्ञ था और इस कारण से वह इस नियम के अधीन प्रतिवादी के विधिक प्रतिनिधि का प्रतिस्थापन करने के लिए आवेदन परिसीमा अधिनियम, 1963 में विनिर्दिष्ट कालावधि के अन्दर नहीं कर सका था और जिसके परिणामस्वरूप वाद का उपशमन हो गया है; और

1963 का 36

(ख) वादी, परिसीमा अधिनियम, 1963 में इसके लिए विनिर्दिष्ट कालावधि के अवसान के पश्चात्, उपशमन अपास्त करने के लिए आवेदन करता है और उस अधिनियम की धारा 5 के अधीन उस आवेदन को इस आधार पर ग्रहण किए जाने के लिए भी आवेदन करता है कि ऐसी अनभिज्ञता के कारण उक्त अधिनियम में विनिर्दिष्ट कालावधि के अन्दर आवेदन न करने के लिए उसके पास पर्याप्त कारण था;

1963 का 36

वहां न्यायालय उक्त धारा 5 के अधीन आवेदन पर विचार करते समय ऐसी अनभिज्ञता के तथ्य पर, यदि साबित हो जाए, तो सम्यक् ध्यान देगा।" ;

(ii) नियम 4 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

विधिक प्रतिनिधि न होने की दशा में प्रक्रिया।

"4क. (1) यदि किसी वाद में न्यायालय को यह प्रतीत हो कि ऐसे किसी पक्षकार का, जिसकी मत्यु वाद के लम्बित रहने के दौरान हो गई है, कोई विधिक प्रतिनिधि नहीं है, तो न्यायालय वाद के किसी पक्षकार के आवेदन पर मृत व्यक्ति की सम्पदा का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्ति की अनुपस्थिति में कार्यवाही कर सकेगा, या आदेश द्वारा महाप्रशासक या न्यायालय का कोई आफिसर या किसी ऐसे अन्य व्यक्ति को, जिसे वह मृत व्यक्ति की सम्पदा का प्रतिनिधित्व करने के लिए ठीक समझता है, वाद के प्रयोजन के लिए नियुक्त कर सकेगा, और वाद में तत्पश्चात दिया गया कोई निर्णय या किया गया कोई आदेश मृत व्यक्ति की सम्पदा पर उसी सीमा तक बाध्यकर होगा जितना कि वह तब था जब मृत व्यक्ति का निजी प्रतिनिधि वाद में पक्षकार रहा होता।

(2) न्यायालय इस अधिनियम के अधीन आदेश करने के पूर्व—

(क) ऐसे व्यक्तियों को (यदि कोई हों) जिनके बारे में न्यायालय यह ठीक समझता है कि वे मृत व्यक्ति की सम्पदा में हित रखते हैं, आदेश के लिए आवेदन की सूचना दी जाने की अपेक्षा कर सकेगा, और

(ख) यह अभिनिश्चित करेगा कि जिस व्यक्ति को मृत व्यक्ति की सम्पदा का प्रतिनिधित्व करने के लिए नियुक्त किया जाना प्रस्थापित है, वह इस प्रकार नियुक्त किए जाने के लिए रजामंद है और वह मृत व्यक्ति के हित के प्रतिकूल कोई हित नहीं रखता है।" ;

(iii) नियम 5 में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु जहां कि ऐसा प्रश्न अपील न्यायालय के समक्ष उद्भूत होता है, वहां वह न्यायालय प्रश्न का अवधारण करने के पूर्व किसी अधीनस्थ न्यायालय को यह निदेश दे सकेगा कि वह उस प्रश्न का विचारण करे और यदि कोई साक्ष्य जो ऐसे विचारण के समय अभिलिखित हो, तो उसे अपने निष्कर्षों और उसके कारणों के साथ वापस करे, और अपील न्यायालय उस प्रश्न का अवधारण करने में उसे ध्यान में रख सकेगा";

(iv) नियम 9 में निम्नलिखित स्पष्टीकरण अंत में जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"स्पष्टीकरण— इस नियम की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी पश्चात्वर्ती वाद में ऐसे तथ्यों पर आधारित प्रतिरक्षा का वर्जन करती है, जो उस वाद में वाद हेतुक बनते थे या जिसका उपशमन हो गया है या जो इस आदेश के अधीन खारिज कर दिया गया है।" ;

(v) नियम 10 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

न्यायालय को किसी पक्षकार की मृत्यु संसूचित करने के लिए प्लीडर का कर्तव्य।

"10क. वाद में पक्षकार की ओर से उपसंजात होने वाले प्लीडर को जब कभी यह जानकारी प्राप्त हो कि उस पक्षकार की मृत्यु हो गई है, तो वह न्यायालय को इसकी इत्तिला देगा और तदुपरांत न्यायालय ऐसी मृत्यु की सूचना दूसरे पक्षकार को देगा और इस प्रयोजन के लिए प्लीडर और मृत पक्षकार के बीच संविदा अस्तित्व में मानी जाएगी।

* * * *

आदेश 23 का संशोधन।

74. प्रथम अनुसूची में, आदेश 23 में,—

वाद का प्रत्याहरण या दावे के भाग का परित्याग।

(vi) नियम 1 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

"1. (1) वाद संस्थित किए जाने के पश्चात् किसी भी समय वादी सभी प्रतिवादियों या उनमें से किसी के विरुद्ध अपने वाद का परित्याग या अपने दावे के भाग का परित्याग कर सकेगा :

परन्तु जहां कि वादी अप्राप्तवय है या ऐसा व्यक्ति है, जिसे आदेश 32 के नियम 1 से 14 तक के उपबन्ध लागू होते हैं, वहां न्यायालय की इजाजत के बिना न तो वाद का और न दावे के किसी भाग का परित्याग किया जाएगा।

(2) उपनियम (1) के परन्तुक के अधीन इजाजत के लिए आवेदन के साथ वाद-मित्र को शपथपत्र देना होगा और यदि अप्राप्तवय

या ऐसे अन्य व्यक्ति का प्रतिनिधित्व प्लीडर द्वारा किया जाता है, तो प्लीडर को इस आशय का प्रमाणपत्र भी साथ देना होगा कि प्रस्थापित परित्याग उसकी राय में अप्राप्तवय या ऐसे अन्य व्यक्ति के फायदे के लिए है।

(3) जहां कि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि—

(क) वाद किसी प्ररूपिक त्रुटि के कारण विफल हो जाएगा, अथवा

(ख) वाद की विषयवस्तु या दावे के भाग के लिए नया वाद संस्थित करने के लिए वादी को अनुज्ञात करने के पर्याप्त आधार हैं,

वहां वह ऐसे निबन्धनों पर, जिन्हें वह ठीक समझे, वादी को ऐसे वाद की विषयवस्तु या दावे के ऐसे भाग के सम्बन्ध में नया वाद संस्थित करने की स्वतंत्रता रखते हुए ऐसे वाद से या दावे के ऐसे भाग से अपने को प्रत्याहृत करने की अनुज्ञा दे सकेगा।

(4) जहां कि वादी,—

(क) उपनियम (1) के अधीन किसी वाद का या दावे के भाग का परित्याग करता है, अथवा

(ख) उपनियम (3) में निर्दिष्ट अनुज्ञा के बिना वाद से या दावे के भाग से प्रत्याहृत कर लेता है;

वहां वह ऐसे खर्चे के लिए दायी होगा जो न्यायालय अधिनिर्णीत करे और वह ऐसी विषय-वस्तु या दावे के ऐसे भाग के बारे में कोई अन्य वाद संस्थित करने से प्रवारित होगा।

(5) इस नियम की किसी बात के बारे में यह न समझा जाएगा कि वह न्यायालय को अनेक वादियों में से किसी वादी को उपनियम (1) के अधीन वाद या दावे के किसी भाग का परित्याग करने या किसी वाद या दावे का अन्य वादियों की सम्मति के बिना उपनियम (3) के अधीन प्रत्याहरण करने की अनुज्ञा देने के लिए प्राधिकृत करती है;" ;

(ii) नियम 1 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

प्रतिवादियों को वादियों के रूप में पक्षान्तरण करने की अनुज्ञा कब दी जाएगी।

"1क. जहां कि नियम 1 के अधीन वादी द्वारा वाद का प्रत्याहरण या परित्याग किया जाता है और प्रतिवादी आदेश 1 के नियम 10 के अधीन वादी के रूप में पक्षान्तरित किए जाने के लिए आवेदन करता है, वहां न्यायालय ऐसे आवेदन पर विचार करते समय इस प्रश्न पर ध्यान देगा कि क्या आवेदक का कोई ऐसा सारवान् प्रश्न है जो अन्य प्रतिवादियों में से किसी के विरुद्ध विनिश्चित किया जाना है।";

(iii) नियम 3 में,—

(क) "किसी विधिपूर्ण करार या समझौते के द्वारा" शब्दों के स्थान पर "पक्षकारों द्वारा लिखित और हस्ताक्षरित किसी विधिपूर्ण करार या समझौते के द्वारा" शब्द रखे जाएंगे;

(ख) "और जहां तक कि वह वाद से सम्बन्धित है, वहां तक तदनुसार डिक्री पारित करेगा" शब्दों के स्थान पर "और जहां तक कि वह वाद के पक्षकारों से सम्बन्धित है, चाहे करार, समझौते

या तुष्टि की विषय-वस्तु वही हो या न हो जो कि वाद की विषय-वस्तु है, वहां तक तदनुसार डिक्री पारित करेगा" शब्द रखे जाएंगे;

(iv) नियम 3 में, निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु जहां कि एक पक्षकार द्वारा यह अभिकथन किया जाता है, और दूसरे पक्षकार द्वारा यह इंकार किया जाता है कि कोई समायोजन या तुष्टि तय हुई थी, वहां न्यायालय इस प्रश्न का विनिश्चय करेगा, किन्तु इस प्रश्न के विनिश्चय के प्रयोजन के लिए किसी स्थगन की मंजूरी तब तक नहीं दी जाएगी, जब तक कि न्यायालय अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से ऐसा स्थगन मंजूर करना ठीक न समझे।";

(v) नियम 3 के, अन्त में निम्नलिखित स्पष्टीकरण जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"**स्पष्टीकरण**—कोई ऐसा करार या समझौता, जो भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 के अधीन शून्य या शून्यकरणीय है, इस नियम के अर्थान्तर्गत विधिपूर्ण नहीं समझा जाएगा।" ; 1872 का 9

(vi) नियम 3 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

वाद का वर्जन।

"3क. डिक्री अपास्त करने के लिए कोई वाद इस आधार पर नहीं लाया जाएगा कि वह समझौता, जिस पर डिक्री आधारित है, विधियुक्त नहीं था।

प्रतिनिधि वाद में कोई करार या समझौता न्यायालय की इजाजत के बिना प्रविष्ट न किया जाना।

3ख. (1) प्रतिनिधि वाद में कोई करार या समझौता न्यायालय की ऐसी इजाजत के बिना, जो कार्यवाही में अभिव्यक्त रूप से अभिलिखित हो, नहीं किया जाएगा और न्यायालय की इस प्रकार से अभिलिखित इजाजत के बिना किया गया ऐसा कोई करार या समझौता शून्य होगा।

(2) ऐसी इजाजत मंजूर करने के पूर्व न्यायालय ऐसी रीति में सूचना, जिसे वह ठीक समझे, ऐसे व्यक्तियों को देगा जिनके बारे में उसे यह प्रतीत हो कि वे वाद में हितबद्ध हैं।

स्पष्टीकरण—इस नियम में "प्रतिनिधि वाद" से निम्नलिखित अभिप्रेत है :—

(क) धारा 91 या धारा 92 के अधीन वाद;

(ख) आदेश 1 के नियम 8 के अधीन वाद;

(ग) वह वाद, जिससे हिन्दू अविभक्त कुटुम्ब का कर्ता, कुटुम्ब के अन्य सदस्यों का प्रतिनिधित्व करते हुए चलाता है या उसके विरुद्ध चलाया जाता है;

(घ) कोई अन्य वाद, जिसमें पारित डिक्री इस संहिता के या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के उपबन्धों के आधार पर किसी ऐसे व्यक्ति पर, जो वाद में पक्षकार के रूप में नामित नहीं है, आबद्ध हो।"।

आदेश 26 का संशोधन।

75. प्रथम अनुसूची के आदेश 26 में,—

(i) नियम 1 में निम्नलिखित परन्तुक और स्पष्टीकरण जोड़े जाएंगे, अर्थात् :—

"परन्तु परिप्रश्नों द्वारा परीक्षा के लिए कमीशन तब तक नहीं निकाला जाएगा, जब तक कि न्यायालय अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से ऐसा करना आवश्यक न समझे।

स्पष्टीकरण—न्यायालय इस नियम के प्रयोजन के लिए ऐसे प्रमाणपत्र को, जो किसी व्यक्ति की बीमारी या अंगशैथिल्य के साक्ष्य के रूप में किसी रजिस्ट्रीकृत चिकित्सीय व्यवसायी द्वारा हस्ताक्षर किया गया तात्पर्यित है, चिकित्सीय व्यवसायी को साक्षी के रूप में आहूत किए बिना स्वीकार कर सकेगा ।" ;

(ii) नियम 4 में,—

(क) "उपनियम (1) में परीक्षा करने के लिए" शब्दों के स्थान पर "परिप्रश्नों द्वारा या अन्यथा परीक्षा करने के लिए" शब्द रखे जाएंगे ।

(ख) उपनियम (1) में निम्नलिखित परन्तुक जोड़े जाएंगे, अर्थात् :—

"परन्तु जहां कि आदेश 26 के नियम 19 के अधीन किसी व्यक्ति को न्यायालय में स्वयं उपस्थित होने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है, वहां, यदि उसका साक्ष्य न्याय के हित में आवश्यक समझा जाए, तो उसकी परीक्षा के लिए कमीशन निकाला जाएगा :

परन्तु यह और कि परिप्रश्नों के बारे में ऐसे व्यक्ति की परीक्षा के लिए कमीशन तब तक नहीं निकाला जाएगा, जब तक कि न्यायालय अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से ऐसा करना ठीक न समझे ।";

(iii) "(निकटतम आगामी नियम के उपबन्धों के अधीन रहते हुए)," कोष्ठक और शब्दों के स्थान पर "(नियम 8 के अधीन रहते हुए)" कोष्ठक और शब्द रखे जाएंगे ;

(iv) नियम 10 के पश्चात् निम्नलिखित शीर्षक और नियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

"वैज्ञानिक अन्वेषण, अनुसचिवीय कार्य करने और जंगम सम्पत्ति के विक्रय के लिए कमीशन"

वैज्ञानिक अन्वेषण के लिए कमीशन ।

10क. (1) जहां कि वाद में उद्भूत किसी प्रश्न में कोई ऐसा वैज्ञानिक अन्वेषण अन्तर्ग्रस्त है, जो न्यायालय की राय में न्यायालय के समक्ष सुविधापूर्वक नहीं किया जा सकता है, वहां न्यायालय, यदि न्याय के हित में आवश्यक या समीचीन समझे, तो ऐसे व्यक्ति के नाम, जिसे वह ठीक समझे, कमीशन उसे यह निदेश देते हुए निकाल सकेगा कि वह ऐसे प्रश्न की जांच करे और उसकी रिपोर्ट न्यायालय को दे ।

(2) इस आदेश के नियम 10 के उपबन्ध इस नियम के अधीन नियुक्त कमिश्नर के सम्बन्ध में यथाशक्य उसी प्रकार लागू होंगे, जिस प्रकार वे नियम 9 के अधीन नियुक्त कमिश्नर के सम्बन्ध में लागू होते हैं ।

अनुसचिवीय कार्य करने के लिए कमीशन ।

10ख. (1) जहां कि वाद में उद्भूत होने वाले किसी प्रश्न में कोई ऐसा अनुसचिवीय कार्य करना अन्तर्ग्रस्त है, जो न्यायालय की राय में न्यायालय के समक्ष सुविधापूर्वक नहीं किया जा सकता है, वहां अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से, यदि न्यायालय की यह राय हो कि न्याय के हित में ऐसा करना आवश्यक या समीचीन है, तो वह ऐसे व्यक्ति के नाम, जिसे वह ठीक समझे, कमीशन उसे यह निदेश देते हुए निकाल सकेगा कि वह उस अनुसचिवीय कार्य को करे और उसकी रिपोर्ट न्यायालय को दे ।

(2) इस आदेश के नियम 10 के उपबन्ध इस नियम के अधीन नियुक्त कमिश्नर के सम्बन्ध में उसी प्रकार लागू होंगे, जिस प्रकार वे नियम 9 के अधीन नियुक्त कमिश्नर के सम्बन्ध में लागू होते हैं ।

जंगम सम्पत्ति के विक्रय के लिए कमीशन ।

10ग. (1) जहां कि किसी वाद में किसी ऐसी जंगम सम्पत्ति का, जो वाद के अवधारण के लम्बित रहते समय न्यायालय की अभिरक्षा में है और जिसकी सुविधापूर्वक परिरक्षा नहीं की जा सकती है, विक्रय करना आवश्यक हो जाता है, वहां अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से यदि न्यायालय की यह राय हो कि न्याय के हित में ऐसा करना आवश्यक या समीचीन है, तो वह ऐसे व्यक्ति के नाम, जिसे वह ठीक समझे, कमीशन उसे यह निदेश देते हुए निकाल सकेगा कि वह ऐसे विक्रय का संचालन करे और उसकी रिपोर्ट न्यायालय को दे ।

(2) इस आदेश के नियम 10 के उपबन्ध इस नियम के अधीन नियुक्त कमिश्नर के सम्बन्ध में उसी प्रकार लागू होंगे जिस प्रकार वे नियम 9 के अधीन नियुक्त कमिश्नर के सम्बन्ध में लागू होते हैं ।

(3) ऐसा प्रत्येक विक्रय डिक्री के निष्पादन में जंगम सम्पत्ति के विक्रय के लिए विहित प्रक्रिया के यथाशक्य अनुसरण के लिए किया जाएगा ।";

(V) नियम 16 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् —

कमिश्नर के समक्ष आक्षेपित प्रश्न ।

"16क. (1) जहां कि इस आदेश के अधीन नियुक्त कमिश्नर के समक्ष कार्यवाहियों में साक्षी से पूछे गए किसी प्रश्न पर पक्षकार या उसके प्लीडर द्वारा आक्षेप किया जाता है, वहां कमिश्नर प्रश्न, उत्तर, आक्षेपों को और इस प्रकार आक्षेप करने वाले यथास्थिति, पक्षकार या प्लीडर का नाम लिखेगा :

परन्तु कमिश्नर किसी ऐसे प्रश्न का, जिस पर विशेषाधिकार के आधार पर आक्षेप किया गया है, उत्तर नहीं लिखेगा किन्तु वह साक्षी की परीक्षा, विशेषाधिकार का प्रश्न न्यायालय द्वारा विनिश्चित कराने के लिए पक्षकार पर छोड़ते हुए, जारी रख सकता है और जहां न्यायालय विनिश्चय करता है कि विशेषाधिकार का कोई प्रश्न नहीं है वहां साक्षी को कमिश्नर द्वारा पुनः बुलाया जा सकता है और उसके द्वारा परीक्षा की जा सकती है या न्यायालय द्वारा उस प्रश्न की बाबत, जिस पर आक्षेप विशेषाधिकार के आधार पर किया गया था, साक्षी की परीक्षा की जा सकती है ।

(2) उपनियम (1) के अधीन लिखे गए किसी उत्तर को वाद में साक्ष्य के रूप में न्यायालय के आदेश के बिना नहीं पढ़ा जाएगा ।";

(Vi) नियम 17 के उपनियम (1) में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् —

"परन्तु जब कमिश्नर सिविल न्यायालय का न्यायाधीश नहीं है, तब वह शास्तियां आधिरोपित करने के लिए सक्षम नहीं होगा, किन्तु ऐसे कमिश्नर के आवेदन पर ऐसी शास्तियां उस न्यायालय द्वारा, जिसने कमीशन निकाला था, अधिरोपित की जा सकेंगी ।" ;

(Vii) नियम 18 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् —

निष्पादन कार्यवाहियों को आदेश का लागू होना ।

"18क. इस आदेश के उपबन्ध डिक्री या आदेश के निष्पादन में कार्यवाहियों को यथाशक्य लागू होंगे ।" ;

18ख. कमीशन निकालने वाला न्यायालय वह तारीख नियत करेगा जिसको या जिसके पूर्व कमीशन निष्पादन के पश्चात् उसके पास वापस आएगा और इस प्रकार नियत की गई तारीख बढ़ाई नहीं जाएगी सिवाय उस दशा में जिसमें न्यायालय का अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से यह समाधान हो जाता है कि तारीख बढ़ाने के लिए पर्याप्त कारण है । न्यायालय द्वारा कमीशन की वापसी के लिए समय नियत किया जाना ।

(viii) नियम 22 में, "16, 17 और 18" अंकों और शब्दों के स्थान पर "नियम 16क का उपनियम (1), 17, 18 और 18ख" शब्द, कोष्ठक, अंक और अक्षर रखे जाएंगे ।

76. प्रथम अनुसूची के आदेश 27 में— आदेश 27 का संशोधन ।

(i) नियम 5 के अन्त में "किन्तु इस प्रकार बढ़ाया गया समय कुल मिलाकर दो मास से अधिक नहीं होगा" शब्द जोड़े जाएंगे ;

(ii) नियम 5 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात्—

"5क. जहां कि लोक आफिसर द्वारा पदीय हैसियत में किए गए अभिकथित किसी कार्य के बारे में नुकसानी या अन्य अनुतोष के लिए वाद उसके विरुद्ध संस्थित किया जाता है, वहां सरकार को वाद में पक्षकार के रूप में संयोजित किया जाएगा । लोक आफिसर के विरुद्ध वाद में सरकार को पक्षकार के रूप में संयोजित किया जाना ।

5ख. (1) ऐसे प्रत्येक वाद या कार्यवाही में, जिसमें सरकार या अपनी पदीय हैसियत में कार्य करने वाला लोक आफिसर पक्षकार है, न्यायालय का यह कर्तव्य होगा कि वह वाद की विषयवस्तु के बारे में निपटारा कराने में पक्षकारों की सहायता कराने के लिए हर प्रयास प्रथमतः करे जहां ऐसा करना मामले की प्रकृति और परिस्थितियों से संगत हो । सरकार या लोक आफिसर के विरुद्ध वादों में निपटारा कराने में सहायता करने के लिए न्यायालय का कर्तव्य ।

(2) यदि किसी ऐसे वाद या कार्यवाही के किसी प्रक्रम में न्यायालय को यह प्रतीत हो कि पक्षकारों के बीच निपटारा होने की युक्तियुक्त संभावना है, तो न्यायालय कार्यवाही को ऐसी कालावधि के लिए, जो वह ठीक समझे, स्थगित कर सकेगा, जिससे कि ऐसा निपटारा कराने के लिए प्रयत्न किए जा सकें ।

(3) उपनियम (2) के अधीन प्रदत्त शक्ति कार्यवाहियों को स्थगित करने के लिए न्यायालय की किसी अन्य शक्ति के अतिरिक्त है ।" ।

77. प्रथम अनुसूची के आदेश 27क में,— आदेश 27क का संशोधन ।

(i) शीर्षक में "संविधान के निर्वचन" शब्दों के पश्चात् "या किसी कानूनी लिखत की विधिमान्यता" शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे ;

(ii) नियम 1 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्—

"1क. किसी ऐसे वाद में, जिसमें न्यायालय को यह प्रतीत हो कि किसी कानूनी लिखत की विधिमान्यता के सम्बन्ध में कोई ऐसा प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है, जो नियम 1 में वर्णित प्रकृति का प्रश्न नहीं है, न्यायालय उन वादों में प्रक्रिया जिनमें किसी कानूनी लिखत की विधि-

मान्यता अन्तर्ग्रस्त है।

निम्नलिखित को सूचना दिए बिना प्रश्न का अवधारण करने के लिए अग्रसर नहीं होगा—

(क) यदि प्रश्न का सम्बन्ध सरकार से हो, तो सरकारी प्लीडर को, अथवा

(ख) यदि प्रश्न का सम्बन्ध सरकार से भिन्न किसी प्राधिकरण से हो, तो उस प्राधिकरण को, जिसने कानूनी लिखत जारी किया था ।" ;

(iii) नियम 2 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा,—

किसी कानूनी-लिखत की विधि-मान्यता सम्बन्धी वाद में सरकार या अन्य प्राधिकारी को प्रतिवादी के रूप में जोड़ने के लिए न्यायालय की शक्ति ।

"2क. न्यायालय किसी ऐसे वाद में, जिसमें कोई ऐसा प्रश्न, जो नियम 1क में निर्दिष्ट है, अन्तर्ग्रस्त है, कार्यवाहियों के किसी प्रक्रम में यह आदेश दे सकेगा कि सरकार या अन्य प्राधिकारी को प्रतिवादी के रूप में जोड़ा जाएगा, यदि यथास्थिति, सरकारी प्लीडर या ऐसे प्राधिकारी की ओर से, जिसने लिखत जारी किया था, मामले में उपसंजात होने वाला प्लीडर, चाहे नियम 1क के अधीन सूचना प्राप्त करने पर या अन्यथा, ऐसे जोड़े जाने के लिए आवेदन करता है, और न्यायालय का यह समाधान हो गया है कि ऐसा जोड़ा जाना प्रश्न के समाधानप्रद अवधारण के लिए आवश्यक या वांछनीय है ।";

(iV) नियम 3 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात:—

खर्चे।

"3. जहां कि सरकार या कोई अन्य प्राधिकारी वाद में प्रतिवादी के रूप में नियम 2 या नियम 2क के अधीन जोड़ा जाता है, वहां महान्याय-वादी, महाधिवक्ता या सरकारी प्लीडर या सरकार या अन्य प्राधिकारी उस न्यायालय में, जिसने जोड़े जाने का आदेश किया था, तब तक खर्चे के लिए हकदार या दायित्वाधीन नहीं होगा जब तक कि न्यायालय मामले की सभी परिस्थितियों को ध्यान में रख कर किसी विशेष कारण से अन्यथा आदेश न करे ।" ;

(V) नियम 4 के पश्चात् निम्नलिखित स्पष्टीकरण जोड़ा जाएगा, अर्थात—

"स्पष्टीकरण—इस आदेश में "कानूनी लिखत" से किसी अधि-नियमिति के अधीन बनाया गया नियम, अधिसूचना, उपविधि, आदेश, स्कीम या प्ररूप अभिप्रेत है ।" ।

आदेश 30 का संशोधन ।

78. प्रथम अनुसूची के आदेश 30 में—

(i) नियम 2 के उपनियम (3) के नीचे परन्तुक के स्थान पर निम्नलिखित परन्तुक रखा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु सारी कार्यवाहियां तब भी फर्म के नाम पर चालू रहेंगी किन्तु उपनियम (1) में विनिर्दिष्ट रीति से प्रकट किए गए भागीदारों के नाम डिक्री में प्रविष्ट किए जाएंगे ।" ;

(ii) नियम 8 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात्—

अभ्यापत्तिपूर्वक उप-संजाति ।

"8. (1) वह व्यक्ति, जिस पर समन की तामील भागीदार के रूप में नियम 3 के अधीन की गई है, यह प्रत्याख्यान करते हुए कि वह किसी तात्विक समय पर भागीदार था, अभ्यापत्तिपूर्वक उपसंजात हो सकेगा ।

(2) ऐसी उपसंजाति की जाने पर या तो वादी या उपसंजात होने वाला व्यक्ति वाद की सुनवाई और अन्तिम निपटारे के लिए नियत

तारीख के पूर्व किसी भी समय न्यायालय से इस बात का अवधारण करने के लिए आवेदन कर सकेगा कि क्या वह व्यक्ति फर्म का भागीदार था और ऐसे रूप में दायित्वाधीन था ।

(3) यदि ऐसे आवेदन पर न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता है कि वह तात्विक समय पर भागीदार था, तो यह बात उस व्यक्ति को प्रतिवादी के विरुद्ध दावे के रूप में फर्म के दायित्व का प्रत्याख्यान करते हुए प्रतिरक्षा फाइल करने से प्रवारित नहीं करेगी ।

(4) किन्तु यदि न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता है कि यदि ऐसा व्यक्ति फर्म का भागीदार नहीं था और उस रूप में दायित्वाधीन नहीं था, तो यह बात वादी को फर्म पर समन की अन्यथा तामील करने से और वाद आगे चलाने से प्रवारित नहीं करेगी, किन्तु उस दशा में वादी किसी ऐसी डिक्री के निष्पादन में, जो फर्म के विरुद्ध पारित की जाए, फर्म के भागीदार के रूप में उस व्यक्ति के दायित्व का अभिकथन करने से प्रवारित हो जाएगा ।" ;

(iii) नियम 10 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात्—

"10. स्वयं अपने नाम से भिन्न नाम या अभिनाम से कारबार चलाने वाले किसी भी व्यक्ति पर या किसी नाम से कारबार चलाने वाले हिन्दू अविभक्त कुटुम्ब पर वाद उसी नाम या अभिनाम से ऐसे लाया जा सकेगा मानो वह फर्म का नाम हो, और इस आदेश के सब नियम जहां तक कि उस मामले की प्रकृति से अनुज्ञात हो वहां तक लागू होंगे ।" ।

स्वयं अपने नाम से भिन्न नाम से कारबार चलाने वाले व्यक्ति के विरुद्ध वाद ।

79. प्रथम अनुसूची के आदेश 32 में—

आदेश 32 का संशोधन ।

(i) नियम 1 के अन्त में निम्नलिखित स्पष्टीकरण जोड़ा जाएगा, अर्थात्—

'**स्पष्टीकरण**—इस आदेश में "अप्राप्तवय" से वह व्यक्ति, जिसने भारतीय वयस्कता अधिनियम, 1875 की धारा 3 के अर्थान्तरर्गत अपनी वयस्कता प्राप्त नहीं की है, वहां अभिप्रेत है जहां कि वाद उस अधिनियम की धारा 2 के खण्ड (क) और (ख) में वर्णित विषयों में से किसी विषय या किसी अन्य विषय के सम्बन्ध से है ।' ;

1875 का 9

(ii) नियम 2 के पश्चात निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्—

"2क. (1) जहां कि अप्राप्तवय की ओर से उसके वादमित्र द्वारा वाद संस्थित किया जाता है, वहां न्यायालय वाद के किसी भी प्रक्रम में या तो स्वप्रेरणा पर या किसी प्रतिवादी के आवेदन पर और अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से वादमित्र को यह आदेश दे सकेगा कि वह प्रतिवादी द्वारा उपगत या उपगत किए जाने के लिए संभाव्य सभी खर्चों के संदाय के लिए प्रतिभूति दे ।

वादमित्र द्वारा प्रतिभूति का तब दिया जाना जब ऐसा करना आदिष्ट हो ।

(2) जहां कि निर्धन व्यक्ति द्वारा ऐसा वाद संस्थित किया जाता है, वहां प्रतिभूति के अन्तर्गत सरकार को संदेय न्यायालय फीस है ।

(3) जहां कि न्यायालय इस नियम के अधीन प्रतिभूति देने का निदेश देते हुए आदेश करता है, वहां आदेश 25 के नियम 2 के उपबन्ध वाद को यथाशक्य लागू होंगे ।" ;

(iii) नियम 3 में—

(क) उपनियम (4) में—

(i) "अप्राप्तवय को और" शब्दों का लोप किया जाएगा ;

(ii) "अप्राप्तवय के पिता या अन्य नैसर्गिक संरक्षक को," शब्दों के स्थान पर "वहां पिता को या जहां कि पिता नहीं है, वहां माता को या जहां कि पिता या माता नहीं हैं, वहां नैसर्गिक संरक्षक को" शब्द रखे जाएंगे ;

(iii) "या जहां कि पिता या अन्य नैसर्गिक संरक्षक नहीं है" शब्दों के स्थान पर "या जहां कि पिता, माता या अन्य नैसर्गिक संरक्षक नहीं है" शब्द रखे जाएंगे;

(ख) उपनियम (4) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्—

"4क. यदि न्यायालय किसी मामले में ठीक समझे, तो अप्राप्तवय को भी उपनियम (4) के अधीन सूचना निकाल सकेगा।" ;

(iv) नियम 3 के पश्चात निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्—

अप्राप्तवय के विरुद्ध डिक्री का तब तक अपास्त न किया जाना जब तक कि उसके हितों पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़ा हो।

"3क. (1) अप्राप्तवय के विरुद्ध पारित कोई डिक्री केवल इस आधार पर अपास्त नहीं की जाएगी कि अप्राप्तवय के वाद के लिए वादमित्र या संरक्षक वाद की विषय-वस्तु में अप्राप्तवय के विपरीत कोई हित रखता है, किन्तु यह तथ्य कि वाद के लिए वादमित्र या संरक्षक के ऐसे विपरीत हित के कारण अप्राप्तवय के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है, डिक्री अपास्त करने के लिए आधार होगा।

(2) इस नियम की कोई बात अप्राप्तवय को, वाद के लिए वादमित्र या संरक्षक की ओर से ऐसे अवचार या गम्भीर उपेक्षा के कारण जिसके परिणामस्वरूप अप्राप्तवय के हित पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है, विधि के अधीन उपलभ्य कोई अनुतोष अभिप्राप्त करने से प्रवारित नहीं करेगी।";

(v) नियम 4 में—

(क) उपनियम (3) में "सम्मति" शब्द के पूर्व "लिखित" शब्द अन्तःस्थापित किया जाएगा;

(ख) उपनियम (4) में "न्यायालय में की किसी ऐसी निधि में से जिसमें अप्राप्तवय हितबद्ध है," शब्दों के पश्चात् "या अप्राप्तवय की सम्पत्ति में से," शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे;

(vi) नियम 6 के उपनियम (2) में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात्—

"परन्तु न्यायालय वाद के लिए वादमित्र या संरक्षक को डिक्री या आदेश के अधीन धन या अन्य जंगम सम्पत्ति प्राप्त करने की इजाजत देते समय अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से ऐसी प्रतिभूति देने से अभिमुक्त वहां कर सकेगा, जहां कि ऐसा वादमित्र या संरक्षक—

(क) हिन्दू अविभक्त कुटुम्ब का कर्ता है और डिक्री या आदेश कुटुम्ब की सम्पत्ति या कारबार के सम्बन्ध में है, अथवा

(ख) अप्राप्तवय का पिता या उसकी माता है।";

(vii) नियम 7 के उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्त:-स्थापित किया जाएगा, अर्थात्—

"(1क) उपनियम (1) के अधीन इजाजत के लिए आवेदन के साथ, यथास्थिति, वाद के लिए वादमित्र या संरक्षक का शपथपत्र होगा, और यदि अप्राप्तवय का प्रतिनिधित्व प्लीडर द्वारा किया जाता है, तो प्लीडर का इस आशय का प्रमाणपत्र भी होगा कि प्रस्थापित करार या समझौता उसकी राय में अप्राप्तवय के फायदे के लिए है ;

परन्तु इस प्रकार प्रकट की गई राय, चाहे शपथ पत्र में हो या प्रमाणपत्र में, न्यायालय को यह जांच करने से प्रवारित नहीं करेगी कि प्रस्थापित करार या समझौता अप्राप्तवय के फायदे के लिए है,

(viii) नियम 15 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात्—

"15. नियम 1 से 14 तक (नियम 2क के सिवाय) ऐसे व्यक्तियों को यथाशक्य लागू होंगे जो वाद के लंबित रहने के पूर्व या दौरान विकृतचित्त के न्यायनिर्णीत किए जाते हैं और ऐसे व्यक्तियों को भी लागू होंगे जो यद्यपि ऐसे न्यायनिर्णीत नहीं किए जाते हैं, किन्तु जब वे वाद लाते हैं या उनके विरुद्ध वाद लाया जाता है, तब न्यायालय द्वारा जांच किए जाने पर किसी मानसिक या अंग-शैथिल्य के कारण अपने हित की संरक्षा करने में असमर्थ पाए जाते हैं।"; नियम 1 से 14 तक का (नियम 2क के सिवाय विकृतचित्त वाले व्यक्तियों को लागू होना।

(ix) नियम 16 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात्—

"16. (1) इस आदेश की कोई बात विदेशी राज्य के ऐसे शासक को लागू नहीं होगी, जो अपने राज्य के नाम से वाद लाता है या जिसके विरुद्ध उसके राज्य के नाम से वाद लाया जाता है या केन्द्रीय सरकार के निदेश से जिसके विरुद्ध वाद अभिकर्ता के नाम से या किसी अन्य नाम से लाया जाता है। व्यावृत्तियां।

(2) इस आदेश की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह अप्राप्तवयों द्वारा या के विरुद्ध या पागल या विकृतचित्त के अन्य व्यक्तियों द्वारा या के विरुद्ध वादों के संबंध में किसी तत्समय प्रवृत्त स्थानीय विधि के उपबन्धों पर प्रभाव डालती है या किसी रूप में उन्हें अल्पीकृत करती है।"।

80. प्रथम अनुसूची के आदेश 32 के पश्चात् निम्नलिखित आदेश अन्त:स्थापित किया जाएगा, अर्थात्— नए आदेश 32क का अन्त:स्थापन।

"आदेश 32क

कुटुम्ब से सम्बन्धित विषयों के बारे में वाद

1. (1) इस आदेश के उपबन्ध कुटुम्ब से संबंधित विषयों के बारे में वादों या कार्यवाहियों को लागू होंगे। आदेश का लागू होना।

(2) विशिष्टत: और उपनियम (1) के उपबन्धों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना इस आदेश के उपबन्ध निम्नलिखित वादों या कार्यवाहियों को लागू होंगे, अर्थात् :—

(क) विवाह विषयक अनुतोष के लिए कोई वाद या कार्यवाही जिसके अन्तर्गत किसी व्यक्ति के विवाह या विवाह विषयक हैसियत की विधिमान्यता के बारे में घोषणा के लिए वाद या कार्यवाही है;

(ख) किसी व्यक्ति के धर्मजत्व के बारे में घोषणा के लिए वाद या कार्यवाही;

(ग) किसी व्यक्ति की संरक्षकता या किसी अप्राप्तवय या किसी अन्य निःशक्त व्यक्ति की अभिरक्षा के बारे में कोई वाद या कार्यवाही ;

(घ) भरणपोषण के लिए कोई वाद या कार्यवाही;

(ङ) दत्तकग्रहण की विधिमान्यता या प्रभाव के बारे में कोई वाद या कार्यवाही;

(च) विल, निर्वसीयतता और उत्तराधिकार के बारे में कुटुम्ब के किसी सदस्य द्वारा संस्थित किया गया कोई वाद या कार्यवाही;

(छ) किसी ऐसे अन्य विषय के बारे में कोई वाद या कार्यवाही जिसके संबंध में पक्षकार अपनी स्वीय विधि के अधीन है;

(3) इस आदेश का उतना भाग जितना किसी ऐसे वाद या कार्यवाही के बारे में किसी विशेष विधि द्वारा उपबन्धित विषय के संबंध में है, उस वाद या कार्यवाही को लागू नहीं होगा।

कार्यवाहियों का बन्द कमरे में किया जाना।

2. ऐसे प्रत्येक वाद या कार्यवाही में, जिसे यह आदेश लागू होता है, यदि न्यायालय ऐसी वांछा करे तो, कार्यवाहियां बन्द कमरे में की जा सकेंगी और यदि दोनों पक्षकारों में से कोई ऐसी वांछा करे तो कार्यवाहियां बन्द कमरे में की जाएंगी।

निपटारे के लिए प्रयत्न करने का न्यायालय का कर्तव्य।

3. (1) ऐसे प्रत्येक वाद या कार्यवाही में, जिसे यह आदेश लागू होता है, न्यायालय वाद की विषय-वस्तु के बारे में निपटारा कराने में पक्षकारों की सहायता करने के लिए हर मामले में जहां ऐसा करना मामले की प्रकृति और परिस्थितियों से सुसंगत संभव हो, प्रथमतः प्रयास करेगा।

(2) यदि ऐसे किसी वाद या कार्यवाही के किसी प्रक्रम में न्यायालय को यह प्रतीत हो कि पक्षकारों के बीच निपटारे की युक्तियुक्त संभावना है, तो न्यायालय कार्यवाही को ऐसी कालावधि के लिए, जो वह ठीक समझे, इसलिए स्थगित कर सकेगा कि ऐसा निपटारा करने के लिए प्रयत्न किए जा सकें।

(3) उपनियम (2) द्वारा प्रदत्त शक्ति कार्यवाहियां स्थगित करने के लिए न्यायालय की किसी अन्य शक्ति के अतिरिक्त होगी, न कि उस शक्ति के अल्पीकरण के लिए।

कल्याण विशेषज्ञ से सहायता।

4. ऐसे प्रत्येक वाद या कार्यवाही में, जिसे यह आदेश लागू होता है, न्यायालय को ऐसे व्यक्ति की सेवाएं (विशेषकर जहां महिला की सेवा, यदि उपलब्ध हो) चाहे वह पक्षकारों का नातेदार हो या न हो, इसके अन्तर्गत कुटुम्ब के कल्याण की प्रोन्नति में लगा हुआ व्यवसायी व्यक्ति भी है, जिसे न्यायालय इस आदेश के नियम 3 द्वारा अधिरोपित कृत्यों के निर्वहन में न्यायालय की सहायता के प्रयोजन के लिए ठीक समझे, प्राप्त करने की स्वतंत्रता होगी।

तथ्यों की जांच करने का कर्तव्य।

5. ऐसे प्रत्येक वाद या कार्यवाही में, जिसे यह आदेश लागू होता है, न्यायालय का यह कर्तव्य होगा कि वह वादी द्वारा अभिकथित तथ्यों की और प्रतिवादी द्वारा अभिकथित किन्हीं तथ्यों की जांच वहां तक करे जहां तक कि वह युक्तियुक्त रूप से कर सकता है।

कुटुम्ब का अर्थ।

6. इस आदेश के प्रयोजनों के लिए निम्नलिखित व्यक्तियों में से प्रत्येक के बारे में यह समझा जाएगा कि उससे मिलकर कुटुम्ब बनता है, अर्थात् :—

(क) (i) एक साथ रहने वाले पुरुष और उसकी पत्नी;

(ii) कोई बालक जो उनकी या ऐसे पुरुष की या ऐसी पत्नी की संतान हो या हों;

(iii) कोई बालक जिसका या जिनका भरणपोषण ऐसे पुरुष और पत्नी द्वारा किया जाता है;

(ख) ऐसा पुरुष, जिसकी पत्नी न हो या जो अपनी पत्नी के साथ न रहता हो, कोई बालक, जो उसकी संतान हो या हों और कोई बालक, जो उसके द्वारा पोषित हो या हों;

(ग) ऐसी स्त्री, जिसका पति न हो या जो अपने पति के साथ न रहती हो, कोई बालक, जो उसकी सन्तान हो या हों और कोई बालक जो उसके द्वारा पोषित हो या हों;

(घ) कोई पुरुष या स्त्री और उस पुरुष या स्त्री का भाई, बहन, पूर्वज या पारम्परिक वंशज, जो उसके साथ रहता हो; और

(ङ) इस नियम के खण्ड (क), खण्ड (ख), खण्ड (ग) या खण्ड (घ) में विनिर्दिष्ट वर्गों में से एक या अधिक का कोई समुच्च।"।

स्पष्टीकरण—शंकाएं दूर करने के लिए इसके द्वारा यह घोषित किया जाता है कि नियम 6 के उपबन्ध किसी स्वीय विधि में या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में "कुटुम्ब" की धारणा पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होंगे।

आदेश 33 का संशोधन।

81. प्रथम अनुसूची के आदेश 33 में—

(i) शीर्षक के स्थान पर निम्नलिखित शीर्षक रखा जाएगा, अर्थात्—

"**निर्धन व्यक्तियों द्वारा वाद**";

(ii) आदेश में जहां कहीं भी "अकिंचन" शब्द आता है, उसके स्थान पर "निर्धन व्यक्ति" शब्द आवश्यकतानुसार व्याकरणिक रूपभेदों या सजातीय पदों सहित रखे जाएंगे;

(iii) नियम 1 में स्पष्टीकरण के स्थान पर निम्नलिखित स्पष्टीकरण रखे जाएंगे, अर्थात्—

"**स्पष्टीकरण** 1—कोई व्यक्ति निर्धन व्यक्ति तब है—"

(क) जबकि उसके पास इतना पर्याप्त साधन (डिक्री के निष्पादन में कुर्की से छूट प्राप्त संपत्ति से और वाद की विषय-वस्तु से भिन्न) नहीं है कि वह ऐसे वाद में वादपत्र के लिए विधि द्वारा विहित फीस दे सके; अथवा

(ख) जहां कि ऐसी कोई फीस विहित नहीं है, वहां जबकि वह एक हजार रुपए के मूल्य की ऐसी सम्पत्ति का, जो डिक्री के निष्पादन में कुर्की से छूट प्राप्त और वाद की विषय-वस्तु से भिन्न सम्पत्ति है, हकदार नहीं है।

स्पष्टीकरण 2—इस प्रश्न पर विचार करने में कि आवेदक निर्धन व्यक्ति है या नहीं, किसी ऐसी सम्पत्ति को ध्यान में रखा जाएगा, जिसको उसने निर्धन व्यक्ति के रूप में वाद चलाने की अनुज्ञा के लिए अपना आवेदन प्रस्तुत करने के पश्चात् और आवेदन का विनिश्चय होने के पूर्व अर्जित किया है।

स्पष्टीकरण 3—जहां कि वादी प्रतिनिधि की हैसियत में वाद लाता है, वहां इस प्रश्न का अवधारण कि वह निर्धन व्यक्ति है, उन साधनों के प्रसंग में किया जाएगा, जो ऐसी हैसियत में उसके पास है।";

(iV) नियम 1 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्—

निर्धन व्यक्तियों के साधनों की जांच।

"1क. इस प्रश्न की हर जांच कि कोई व्यक्ति निर्धन व्यक्ति है या नहीं जब तक कि न्यायालय अन्यथा निदेश न दे तब तक, प्रथम बार में न्यायालय के मुख्य अनुसचिवीय आफिसर द्वारा की जाएगी और न्यायालय ऐसे आफिसर की रिपोर्ट को अपने निष्कर्ष के रूप में मान सकेगा या न्यायालय इस प्रश्न की जांच स्वयं कर सकेगा।";

(V) नियम 3 में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु जहां एक से अधिक वादी हैं वहां यदि आवेदन उन वादियो में से किसी एक के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है, तो यह पर्याप्त होगा।"।

(Vi) नियम 5 में,—

(क) खण्ड (ग) में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु यदि आवेदक द्वारा व्ययनित सम्पत्ति के मूल्य को हिसाब में लेने पर भी आवेदक निर्धन व्यक्ति के रूप में वाद लाने का हकदार हो, तो कोई आवेदन नामंजूर नहीं किया जाएगा।";

(ख) खण्ड (ङ) में "या" शब्द अन्त में अन्तःस्थापित किया जाएगा;

(ग) खण्ड (ङ) के पश्चात् निम्नलिखित खण्ड अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

"(च) जहां कि आवेदन में आवेदक द्वारा किए गए अभिकथनों से यह दर्शित होता है कि वाद तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा वर्जित है, अथवा;

(छ) जहां कि किसी अन्य व्यक्ति ने मुकद्दमेंबाजी के विल-पोषण के लिए उसके साथ करार किया है।";

(Vii) नियम 7 के—

(क) "उपनियम (1) में उनके साक्ष्य के सार का ज्ञापन बनाएगा" शब्दों के स्थान पर "उनके साक्ष्य का पूर्ण अभिलेख तैयार करेगा" शब्द रखे जाएंगे;

(ख) उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्—

"(1क) उपनियम (1) के अधीन साक्षियों की परीक्षा नियम 5 के खण्ड (ख), खण्ड (ग) और खण्ड (ङ) में विनिर्दिष्ट विषयों तक ही सीमित रखी जाएगी, किन्तु

आवेदक या उसके अभिकर्ता की परीक्षा नियम 5 में विनिर्दिष्ट विषयों में से किसी भी विषय के सम्बन्ध में हो सकेगी ।" ;

(ग) उपनियम (2) में "एतस्मिन् उपबन्धित रूप में" शब्दों के स्थान पर "नियम 6 के अधीन या इस नियम के अधीन" शब्द और अंक रखे जाएंगे ;

(Viii) नियम 8 में "(आदेशिका की तामील के लिए देय फीस को छोड़कर)" कोष्ठक और शब्दों के स्थान पर "या आदेशिका की तामील के लिए देय फीस" शब्द रखे जाएंगे ;

(iX) नियम 9 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

जिस निर्धन व्यक्ति का प्रतिनिधित्व न हो उसके लिए न्यायालय द्वारा प्लीडर नियत किया जाना ।

"9क. (1) जहां किसी ऐसे व्यक्ति का, जिसे निर्धन व्यक्ति के तौर पर वाद लाने की अनुज्ञा दी गई है, प्रतिनिधित्व प्लीडर द्वारा नहीं किया जा रहा है, वहां न्यायालय उसके लिए प्लीडर तब नियत कर सकेगा जब मामले की परिस्थितियों में ऐसा किया जाना अपेक्षित हो ।

(2) उच्च न्यायालय राज्य सरकार के पूर्वानुमोदन से निम्नलिखित का उपबन्ध करने के लिए नियम बना सकेगा :—

(क) उपनियम (1) के अधीन नियत किए जाने वाले प्लीडरों के चयन की रीति;

(ख) न्यायालय द्वारा ऐसे प्लीडरों को दी जाने वाली सुविधाएं ;

(ग) कोई अन्य विषय जो उपनियम (1) के उपबन्धों को प्रभावी करने के लिए नियमों द्वारा अपेक्षित हो या उपबन्धित किया जाए ।" ;

(x) नियम 11 के खण्ड (क) में "ऐसी तामील के लिए" शब्दों के पश्चात् "या वादपत्र या संक्षिप्त कथन की प्रतियां उपस्थित करने के लिए" शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे ;

(Xi) नियम 15 में "परन्तु यह तब जब कि वह अकिंचन के तौर पर वाद लाने की इजाजत के लिए अपने आवेदन का विरोध करने में राज्य सरकार द्वारा और विरोधी पक्षकार द्वारा उपगत खर्चों को (यदि कोई हों) पहले दे दे" शब्दों के स्थान पर "परन्तु वादपत्र, यदि वह, या तो वाद के संस्थित किए जाने के समय या उसके पश्चात् ऐसे समय के भीतर जो न्यायालय मंजूर करे, संदाय नहीं करता है नामंजूर कर दिया जाएगा" शब्द रखे जाएंगे ।" ;

(xii) नियम 15 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

न्यायालय फीस के संदाय के लिए समय की मंजूरी ।

"15क. नियम 5, नियम 7 या नियम 15 की कोई बात न्यायालय को नियम 5 के अधीन आवेदन नामंजूर या नियम 7 के अधीन आवेदन इंकार करते समय इस बात से नहीं रोकेगी कि वह आवेदक को अपेक्षित न्यायालय फीस, ऐसे समय के अन्दर देने के लिए समय प्रदान करे, जो न्यायालय द्वारा नियत किया जाए । या समय-समय पर उसके द्वारा बढ़ाया जाए और ऐसा संदाय किए जाने पर और नियम 15 के उपनियम (2) में निर्दिष्ट खर्चों का संदाय उस समय के अन्दर किए जाने पर यह समझा जाएगा कि वाद उस तारीख को

संक्षिप्त किया गया था जिस तारीख को आवेदन उपस्थापित किया गया था।" ;

(xiii) नियम 16 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :–

निर्धन व्यक्ति द्वारा प्रतिरक्षा ।

"17. किसी ऐसे प्रतिवादी को, जो मुजरा या प्रतिदावे का अभिवचन करने की वांछा करता है, निर्धन व्यक्ति के रूप में ऐसा दावा पेश करने की अनुज्ञा दी जा सकेगी और इस आदेश में अन्तर्विष्ट नियम यावत्शक्य उसे इस प्रकार लागू होंगे, मानो वह वादी है और उसका लिखित कथन वादपत्र है।"।

आदेश 34 का संशोधन ।

82. प्रथम अनुसूची के आदेश 34 में––

* * * * *

(i) नियम 6 में, "अन्तिम पूर्ववर्ती नियम" शब्दों के स्थान पर "नियम 5" शब्द और अंक रख जाएंगे;

* * * * *

(ii) नियम 8क में,–

(क) "अन्तिम पूर्ववर्ती नियम" शब्दों के स्थान पर "नियम 8" शब्द और अंक रखे जाएंगे;

(ख) "प्रतिवादी द्वारा किए गए आदवेन पर" शब्दों के स्थान पर "प्रतिवादी द्वारा निष्पादन में किए गए आवेदन पर" शब्द रखे जाएंगे;

* * * * *

(iii) नियम 10 में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :––

"परन्तु जहां कि बन्धककर्ता बन्धक पर शोध्य रकम या ऐसी रकम, जो न्यायालय की राय में सारतः कम नहीं है, वाद के संस्थित किए जाने के पूर्व या के समय पर निविदत्त या निक्षिप्त कर देता है, वहां उसे बन्धकदार को वाद के खर्चे देने का आदेश नहीं दिया जाएगा और बन्धककर्ता वाद के अपने खर्चे को बंधकदार से वसूल करने के लिए तब तक हकदार रहेगा जब तक कि न्यायालय अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से अन्यथा निदेश न दे; " ;

(iv) नियम 10 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

अन्तःकालीन लाभ देने के लिए बन्धकदार को निदेश देने की न्यायालय की शक्ति ।

"10क. जहां कि पुरोबन्ध के लिए वाद में बन्धककर्ता ने बन्धक पर शोध्य राशि या ऐसी राशि जो न्यायालय की राय में सारतः कम नहीं है, वाद संस्थित किए जाने के पूर्व या के समय पर निविदत्त या निक्षिप्त कर दी है, वहां न्यायालय बन्धकदार को यह निदेश देगा कि वह बन्धककर्ता को वाद संस्थित किए जाने से प्रारम्भ होने वाली कालावधि के लिए अन्तःकालीन लाभ संदत्त करे" ;

(v) नियम 15 को उस नियम के उपनियम (1) में के रूप में पुनः-संख्यांकित किया जाएगा और इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(2) जहां कि डिक्री में धन संदाय करने का आदेश दिया जाता है और उसके संदाय में व्यतिक्रम किए जाने पर उस डिक्री को

स्थावर सम्पत्ति पर प्रभारित किया जाता है, वहां वह रकम उस डिक्री के निष्पादन में उस सम्पत्ति के विक्रय द्वारा वसूल की जा सकेगी ।"।

83. प्रथम अनुसूची के आदेश 36 में,— आदेश 36 का संशोधन ।

(i) नियम 3 में,—

(क) उपनियम (1) में "तो वह उस न्यायालय में फाइल किया जा सकेगा जिसकी" शब्दों के स्थान पर "तो वह उस न्यायालय में आवेदन के साथ फाइल किया जा सकेगा जिसकी" शब्द रखे जाएंगे ;

(ख) उपनियम (2) में,—

(i) "जबकि करार" शब्दों के स्थान पर "जबकि आवेदन" शब्द रखे जाएंगे;

(ii) "उसे उपस्थापित किया है" शब्दों के स्थान पर "आवेदन उपस्थापित किया है" शब्द रखे जाएंगे ;

(ii) नियम 5 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"6. नियम 5 के अधीन पारित किसी डिक्री की कोई अपील नहीं होगी ।" । नियम 5 के अधीन पारित डिक्री की अपील न होना ।

84. प्रथम अनुसूची के आदेश 37 में,— आदेश 37 का संशोधन ।

(i) शीर्षक में "परक्राम्य लिखितों के लिए" शब्दों का लोप किया जाएगा

(ii) नियम 1 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात्—

"1. (1) यह आदेश निम्नलिखित न्यायालयों को लागू होगा ; अर्थात्— वे न्यायालय और वादों के प्रवर्ग जिन्हें यह आदेश लागू होना है ।

(क) उच्च न्यायालय, नगर सिविल न्यायालय और लघुवाद न्यायालय; और

(ख) अन्य न्यायालय :

परन्तु उच्च न्यायालय उपखण्ड (ख) में निर्दिष्ट न्यायालयों के बारे में राजपत्र में अधिसूचना द्वारा इस आदेश के प्रवर्तन को वादों के केवल ऐसे प्रवर्गों तक निर्बन्धित कर सकेगा, जैसा वह उचित समझे, और इस आदेश के प्रवर्तन के अधीन लाए जाने वाले वादों के प्रवर्गों को, समय-समय पर राजपत्र में अधिसूचना द्वारा मामले की परिस्थितियों में यथाअपेक्षित और निर्बन्धित कर सकेगा, बढ़ा सकेगा या उसमें फेरफार कर सकेगा, जैसा वह उचित समझे ।

(2) उपनियम (1) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए यह आदेश निम्नलिखित वादों के संवर्गों को लागू होता है, अर्थात् :—

(क) विनिमय-पत्रों, हुण्डियों और वचन-पत्रों के आधार पर वाद;

(ख) ऐसे वाद जिनमें वादी प्रतिवादी द्वारा संदेय धन के रूप में ऐसे ऋण या परिनिर्धारित मांग को ब्याज सहित या ब्याज बिना

केवल वसूल करना चाहता है, जो निम्नलिखित के आधार पर उद्भूत होता है—

(i) लिखित संविदा ;

(ii) ऐसी अधिनियमिति जिसमें वसूल की जाने वाली राशि कोई निश्चित धनराशि या किसी शास्ति से भिन्न ऋणस्वरूप है, अथवा

(iii) ऐसी प्रत्याभूति जिसमें केवल किसी ऋण या परिनिर्धारित मांग के बारे में मूल धन के लिए दावा किया गया है;";

(iii) नियम 2 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा अर्थात् :—

संक्षिप्त वादों का संस्थित किया जाना ।

"2. (1) यदि वादी किसी ऐसे वाद को जिसे यह आदेश लागू होता है, एतदधीन आगे चलाने की वांछा करता है, तो वह वाद ऐसा वादपत्र उपस्थापित करके संस्थित किया जा सकेगा, जिसमें निम्नलिखित बातें होंगी :—

(क) इस आशय का विनिर्दिष्ट प्रकथन, कि वाद इस आदेश के अधीन फाइल किया जाता है ;

(ख) ऐसे किसी अनुतोष का दावा वादपत्र में नहीं किया गया है जो इस नियम के विस्तार के अन्तर्गत नहीं आता है ; और

(ग) वाद के शीर्षक में वाद की संख्या के ठीक नीचे निम्नलिखित अन्तर्लेखन किया गया है, अर्थात्—

"(सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 37 के अधीन)"

(2) वाद का समन परिशिष्ट ख के प्ररूप संख्या 4 में या किसी ऐसे अन्य प्ररूप में होगा, जो समय-समय पर विहित किया जाए ।

(3) प्रतिवादी उपनियम (1) में निर्दिष्ट वाद की प्रतिरक्षा तब तक नहीं करेगा, जब तक कि वह उपसंजात नहीं होता है और न्यायालय या न्यायाधीश से इस बात की इजाजत प्राप्त नहीं कर लेता कि वह वाद की प्रतिरक्षा करे, और उपसंजात होने में और प्रतिरक्षा करने के लिए ऐसी इजाजत प्राप्त करने में व्यतिक्रम होने पर वादपत्र में के अभिकथन स्वीकृत कर लिए गए समझे जाएंगे, और वादी किसी ऐसी राशि के लिए, जो समन में वर्णित राशि से अधिक न हो, डिक्री की तारीख तक विनिर्दिष्ट ब्याज दर पर, यदि कोई हो, तो ब्याज डिक्री की तारीख तक और खर्चे की ऐसी राशि के लिए, जो उच्च न्यायालय इस निमित्त बनाए गए, नियमों द्वारा समय-समय पर अवधारित करे, डिक्री के लिए हकदार होगा और ऐसी डिक्री तत्काल निष्पादित की जा सकेगी" ;

(iv) नियम 3 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात्—

प्रतिवादी की उपसंजाति के लिए प्रक्रिया ।

"3. (1) किसी ऐसे वाद में, जिसे यह आदेश लागू होता है, वादी प्रतिवादी पर वादपत्र और उसके उपाबन्धों की एक प्रति नियम 2 के अधीन समन के साथ तामील करेगा, और प्रतिवादी ऐसी तामील

के दस दिनों के अन्दर किसी भी समय या तो स्वयं या प्लीडर द्वारा उपसंजात हो सकेगा, और इन दोनों दशाओं में से किसी दशा में वह उस पर सूचनाओं की तामील के लिए पता न्यायालय में फ़ाइल करेगा ।

(2) जब तक कि अन्यथा आदेश न दिया गया हो, तब तक ऐसे सभी समन, सूचनाएं और अन्य न्यायिक आदेशिकाएं, जो प्रतिवादी पर तामील किए जाने के लिए अपेक्षित हों, उस पर सम्यक् रूप से तामील की गई तब समझी जाएंगी, जब वे उस पते पर, जो ऐसी तामील के लिए उसके द्वारा दिया गया था छोड़ दी गई हों ।

(3) उपसंजात होने के दिन ऐसी उपसंजाति की सूचना प्रतिवादी द्वारा वादी के प्लीडर को दी जाएगी, या यदि वादी स्वयं वाद लाता है, तो वादी को ही या तो ऐसी सूचना या पहले ही डाक महसूल दे दिए गए, पत्र द्वारा जो, यथास्थिति, वादी के प्लीडर या वादी के पते पर प्रत्यक्षतः परिदत्त की गई हो या भेजी गई हो, दी जाएगी ।

(4) यदि प्रतिवादी उपसंजात होता है, तो तदुपरांत वादी प्रतिवादी पर निर्णय के लिए समन परिशिष्ट ख में प्ररूप सं० 4क में या ऐसे प्ररूप में, जो समय-समय पर विहित किया जाए, तामील करेगा, जो तामील की तारीख से दस दिनों से अन्यून समय में वापस किए जाने वाला होगा और जिसका समर्थन वाद-हेतुक और दावाकृत रकम का सत्यापन करने वाले शपथपत्र द्वारा किया जाएगा और उसमें यह कथन किया गया होगा कि वाद में इस निमित्त कोई प्रतिरक्षा नहीं है ।

(5) प्रतिवादी निर्णय के लिए ऐसे समन की तामील से दस दिनों के अन्दर किसी भी समय शपथपत्र द्वारा या अन्यथा यह प्रकट करते हुए कि ऐसे तथ्य, जो प्रतिरक्षा करने के लिए उसे हकदार बनाने के लिए पर्याप्त समझे जाएं, ऐसे वाद की प्रतिरक्षा की इजाजत के लिए ऐसे समन पर आवेदन कर सकेगा और उसे प्रतिरक्षा करने की इजाजत बिना शर्त या ऐसे निबंधनों पर, जो न्यायालय या न्यायाधीश को न्यायसंगत प्रतीत हों, मंजूर की जा सकेगी :

परन्तु प्रतिरक्षा की इजाजत तब तक नामंजूर नहीं की जाएगी जब तक कि न्यायालय का यह समाधान नहीं हो जाता है कि प्रतिवादी द्वारा प्रकट किए गए तथ्य यह उपदर्शित नहीं करते हैं कि उसके पास कोई सारवान् प्रतिरक्षा है या कि प्रतिवादी द्वारा की जाने के लिए आशयित प्रतिरक्षा तुच्छ या तंग करने वाली है :

परन्तु यह और कि जहां वादी द्वारा दावा की गई रकम का कोई भाग प्रतिवादी द्वारा उससे शोध्य होना स्वीकार कर लिया जाता है तो वाद की प्रतिरक्षा की इजाजत तब तक मंजूर नहीं की जाएगी जब तक कि शोध्य होने के लिए इस प्रकार स्वीकार की गई रकम प्रतिवादी द्वारा न्यायालय में निक्षिप्त न कर दी जाए ।

(6) निर्णय के लिए ऐसे समन की सुनवाई के समय—

(क) यदि प्रतिवादी ने प्रतिरक्षा करने की इजाजत के लिए आवेदन नहीं किया है, या यदि ऐसा आवेदन किया गया है और इंकार

कर दिया जाता है, तो वादी तत्काल निर्णय के लिए हकदार हो जाएगा, अथवा

(ख) यदि प्रतिवादी को पूर्ण दावे या उसके किसी भाग की प्रतिरक्षा करने की अनुज्ञा दी गई है, तो न्यायालय या न्यायाधीश उसे निदेश दे सकेगा कि वह ऐसी प्रतिभूति और ऐसे समय के अन्दर दे, जो न्यायालय या न्यायाधीश द्वारा नियत किया जाए, और न्यायालय या न्यायाधीश द्वारा विनिर्दिष्ट समय के भीतर ऐसी प्रतिभूति देने में या ऐसे अन्य निदेशों का पालन करने में, जो न्यायालय या न्यायाधीश द्वारा दिए जाएं, असफल होने पर वादी तत्काल निर्णय के लिए हकदार हो जाएगा ।

(7) न्यायालय या न्यायाधीश प्रतिवादी द्वारा पर्याप्त कारण दर्शित किए जाने पर प्रतिवादी को उपसंजात होने या वाद की प्रतिरक्षा की इजाजत के लिए आवेदन करने में विलम्ब के लिए माफी दे सकेगा ।" ।

आदेश 38 का संशोधन ।

85. प्रथम अनुसूची के आदेश 38 में—

* * * *

(i) नियम 5 के उपनियम (3) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(4) यदि इस नियम के उपनियम (1) के उपबन्धों का अनुपालन किए बिना कुर्की का आदेश किया गया है तो ऐसी कुर्की शून्य होगी ।";

(ii) नियम 8 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

निर्णय के पूर्व कुर्क की गई सम्पत्ति के दावे का न्याय-निर्णयन ।

"8. जहां कि कोई दावा निर्णय के पूर्व कुर्क की गई सम्पत्ति के लिए किया गया है वहां ऐसे दावे का न्यायनिर्णय उस रीति से किया जाएगा जो धन के संदाय के लिए डिक्री निष्पादन में कुर्क की गई सम्पत्ति के दावों के न्यायनिर्णयन के लिए एतस्मिनपूर्व उपबन्धित है ।" ;

(iii) नियम 11 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

कुर्की को लागू होने वाले उपबन्ध ।

"11क. (1) इस संहिता के उपबन्ध, जो डिक्री के निष्पादन में की गई कुर्की को लागू होते हैं निर्णय के पूर्व की गई ऐसी कुर्की को यावत्शक्य लागू होंगे जो निर्णय के पश्चात् नियम 11 के उपबन्धों के बल पर जारी रहती है ।

(2) किसी ऐसे वाद में, जो व्यतिक्रम के कारण खारिज कर दिया जाता है, निर्णय के पूर्व की गई कुर्की केवल इस तथ्य के कारण पुनः प्रवर्तित नहीं होगी कि व्यतिक्रम के कारण वाद खारिज करने का आदेश अपास्त कर दिया गया है और वाद प्रत्यावर्तित हो गया है ।" ।

आदेश 39 का संशोधन ।

86. प्रथम अनुसूची के आदेश 39 में,—

(i) नियम 1 में—

(क) * * * *

(ख) खण्ड (ख) के पश्चात् निम्नलिखित खण्ड अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(ग) प्रतिवादी वादी को वाद में विवादग्रस्त किसी सम्पत्ति से बेकब्जा करने की या वादी को उस सम्पत्ति के सम्बन्ध में अन्यथा क्षति पहुंचाने की धमकी देता है ।" ;

(ग) "बेचे जाने, हटाए जाने या व्ययनित किए जाने से रोकने और निवारित करने के" शब्दों के पश्चात् "या वादी को वाद में विवादग्रस्त किसी सम्पत्ति से बेकब्जा करने या वादी का उस सम्पत्ति के सम्बन्ध में अन्यथा क्षति पहुंचाने" शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे ;

(ii) नियम 2 के उपनियम (3) और (4) का लोप किया जाएगा ;

(iii) नियम 2 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

व्यादेश की अवज्ञा या भंग का परिणाम ।

"2क. (1) नियम 1 या नियम 2 के अधीन अनुदत्त किसी व्यादेश या किए गए अन्य आदेश की अवज्ञा की दशा में या जिन निर्बन्धनों पर व्यादेश अनुदत्त या आदेश किया गया था उनमें से किसी निर्बन्धन के भंग की दशा में व्यादेश अनुदत्त करने वाला या आदेश करने वाला न्यायालय या ऐसा कोई न्यायालय, जिसे वाद या कार्यवाही अन्तरित की गई है, यह आदेश दे सकेगा कि ऐसी अवज्ञा या भंग करने के दोषी व्यक्ति की सम्पत्ति कुर्क की जाए और यह भी आदेश दे सकेगा कि वह व्यक्ति छह मास से अनधिक अवधि के लिए सिविल कारागार में तब तक निरुद्ध किया जाए जब तक कि बीच में ही न्यायालय उसकी निर्मुक्ति के लिए निदेश न दे दे ।

(2) इस अधिनियम के अधीन की गई कोई कुर्की एक वर्ष से अधिक समय के लिए प्रवृत्त न रहेगी, जिसके खत्म होने पर यदि अवज्ञा या भंग जारी रहे तो कुर्क की गई सम्पत्ति बेची जा सकेगी और न्यायालय आगमों में से ऐसा प्रतिकर, जैसा कि वह ठीक समझे, उस पक्षकार को दिलवा सकेगा जिसकी क्षति हुई हो, और यदि कुछ बाकी रहे तो उसे उसके हकदार पक्षकार को देगा ।" ;

(iv) नियम 3 में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु जहां यह प्रस्थापना की जाती है कि विरोधी पक्षकार को आवेदन की सूचना दिए बिना व्यादेश अनुदत्त कर दिया जाए वहां न्यायालय अपनी ऐसी राय के लिए कि विलम्ब द्वारा व्यादेश अनुदत्त करने का उद्देश्य विफल हो जाएगा, कारण अभिलिखित करेगा और आवेदक से यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह—

(क) व्यादेश अनुदत्त करने वाला आदेश किए जाने के तुरन्त पश्चात् व्यादेश के लिए आवेदन की प्रति निम्नलिखित के साथ—

(i) आवेदन के समर्थन में फाइल किए गए शपथपत्र की प्रति;

(ii) वादपत्र की प्रति ; और

(iii) उन दस्तावेजों की प्रतियां, जिन पर आवेदक निर्भर करता है;

विरोधी पक्षकार को प्रदत्त करे या उसे रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा भेजे; और

(ख) उस तारीख को जिसको ऐसा व्यादेश अनुदत्त किया गया है या उस दिन के ठीक अगले दिन को यह कथन करने वाला शपथ पत्र फाइल करे कि पूर्वोक्त प्रतियां ऐसे प्रदत्त कर दी गई हैं या भेज दी गई हैं;

(V) नियम 3 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

न्यायालय द्वारा व्यादेश के लिए आवेदन का तीस दिन के भीतर निपटाया जाना।

3क. जहां कोई व्यादेश विरोधी पक्षकार को सूचना दिए बिना अनुदत्त किया गया है तो वहां न्यायालय आवेदन को ऐसी तारीख से जिसको व्यादेश अनुदत्त किया गया था, तीस दिन के भीतर निपटाने का प्रयास करेगा और जहां वह ऐसा करने में असमर्थ है वहां वह ऐसी असमर्थता के लिए कारण अभिलिखित करेगा ।

(Vi) नियम 4 में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु यदि अस्थायी व्यादेश के लिए किसी आवेदन में या ऐसे आवेदन का समर्थन करने वाले किसी शपथपत्र में किसी पक्षकार ने किसी तात्विक विशिष्टि के सम्बन्ध में जानते हुए मिथ्या या भ्रामक कथन किया है और विरोधी पक्ष को सूचना दिए बिना व्यादेश अनुदत्त किया गया था तो न्यायालय व्यादेश को उस दशा में रद्द कर देगा जिसमें वह अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से यह समझता हो कि न्याय के हित में ऐसा करना आवश्यक नहीं है :

परन्तु यह और कि जहां किसी पक्षकार की सुनवाई का अवसर दिए जाने के पश्चात् व्यादेश के लिए आदेश पारित किया गया है वहां ऐसे आदेश को उस पक्षकार के आवेदन पर तब तक प्रभावोन्मुक्त, उसमें फेरफार या अपास्त नहीं किया जाएगा जब तक कि परिस्थितियों के बदल जाने से ऐसा प्रभावोन्मुक्त फेरफार या अपास्त किया जाना आवश्यक न हो गया हो या जब तक कि न्यायालय का यह समाधान न हो गया हो कि आदेश से पक्षकार को असम्यक् कष्ट हुआ है ।";

(Vii) नियम 8 के—

(क) उपनियम (1) में "प्रतिवादी को सूचना देने के पश्चात्" शब्दों का लोप किया जाएगा ;

(ख) उपनियम (2) में "वादी को सूचना देने के पश्चात्" शब्दों का लोप किया जाएगा ;

(ग) उपनियम (2) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्: —

"(3) इस प्रयोजन के लिए किए गए आवेदन पर नियम 6 या नियम 7 के अधीन आदेश करने के पूर्व न्यायालय उसकी सूचना विरोधी पक्षकार को देने का निदेश वहां के सिवाय देगा जहां यह प्रतीत हो कि ऐसा आदेश करने का उद्देश्य विलम्ब के कारण निष्फल हो जाएगा।"।

87. प्रथम अनुसूची के आदेश 41 में,— आदेश 41 का संशोधन।

(i) नियम 1 में,—

(क) उपनियम (1) में निम्नलिखित परन्तुक जोड़ा जाएगा, अर्थात् :—

"परन्तु जहां कि दो या दो से अधिक वादों का साथ-साथ विचारण किया गया है और उनके लिए एक ही निर्णय दिया गया है और उस निर्णय के अन्तर्गत किसी डिक्री के खिलाफ चाहे उसी अपीलार्थी द्वारा या भिन्न अपीलार्थियों द्वारा दो या दो से अधिक अपीलें फाइल की गई हैं वहां अपील न्यायालय की एक से अधिक प्रतियां फाइल करने की अभिमुक्ति दे सकेगा।";

(ख) उपनियम (2) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(3) जहां कि अपील धन के संदाय के लिए किसी डिक्री के निष्पादन में किए गए किसी आदेश के विरुद्ध है वहां अपीलार्थी इतने समय के अन्दर जितना अपील न्यायालय अनुज्ञात करे, अपील में विवादग्रस्त रक़म को निक्षिप्त करेगा या उसके सम्बन्ध में ऐसी प्रतिभूति देगा जैसी न्यायालय ठीक समझे।"; कुछ मामलों में रक़म का निक्षेप किया जाना या प्रतिभूति का दिया जाना।

(ii) नियम 3 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात :—

"3क. (1) जब कोई अपील उसके लिए विहित परिसीमाकाल के पश्चात् उपस्थापित की जाती है तब उसके साथ ऐसे शपथपत्र द्वारा समर्थित आवेदन होगा जिसमें वे तथ्य उपवर्णित होंगे जिनका अवलम्बन अपीलार्थी न्यायालय का यह समाधान करने के लिए लेता है कि ऐसी कालावधि के अन्दर अपील न करने के लिए उसके पास पर्याप्त कारण था। विलम्ब की माफी के लिए आवेदन।

(2) यदि न्यायालय यह समझता है कि प्रत्यर्थी को सूचना जारी किए बिना आवेदन को प्रतिक्षेपित करने का कोई कारण नहीं है तो उसकी सूचना प्रत्यर्थी को जारी की जाएगी और यथास्थिति नियम 11 या नियम 13 के अधीन अपील को निपटाने के लिए अग्रसर होने के पूर्व न्यायालय द्वारा उस मामले का अन्तिम रूप से विनिश्चय किया जाएगा।

(3) जहां कि उपनियम (1) के अधीन कोई आवेदन किया गया है वहां न्यायालय उस डिक्री के, जिसके विरुद्ध अपील फाइल किए जाने की प्रस्थापना है, वहां निष्पादन को रोकने के लिए आदेश उस समय तक नहीं करेगा जब तक न्यायालय, नियम 11 के अधीन सुनवाई के पश्चात्, अपील सुनने का विनिश्चय नहीं कर लेता है।";

(iii) नियम 5 के—

(क) उपनियम (1) में निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्त में अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"स्पष्टीकरण—डिक्री के निष्पादन को रोकने के लिए अपील न्यायालय का आदेश प्रथम बार के न्यायालय को ऐसे आदेश की संसूचना की तारीख से प्रभावी होगा, किन्तु निष्पादन को

रोकने के लिए आदेश की या उसके प्रतिकूल किसी आदेश की अपील न्यायालय से प्राप्त होने तक प्रथम बार का न्यायालय अपीलार्थी की उसकी वैयक्तिक जानकारी पर आधारित ऐसे शपथपत्र पर कार्यवाही करेगा जिसमें यह कथित हो कि डिक्री के निष्पादन को रोकने के लिए अपील न्यायालय द्वारा आदेश दे दिया गया है ।";

(ख) उपनियम (4) में, "उपनियम (3) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी," शब्दों के स्थान पर "उपनियम (3) के उपबन्ध के अधीन रहते हुए" शब्द रखे जाएंगे ;

(iv) उपनियम (4) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(5) पूर्वगामी उपनियमों में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी जहां अपीलार्थी नियम 1 के उपनियम (3) में विनिर्दिष्ट निक्षेप करने में या प्रतिभूति देने में असफल रहता है तो वहां न्यायालय डिक्री का निष्पादन रोकने वाला कोई आदेश नहीं करेगा ।";

(V) नियम 11 में उपनियम (3) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात :—

"(4) जहां कि कोई अपील न्यायालय, जो उच्च न्यायालय न हो, उपनियम (1) के अधीन किसी अपील को खारिज करता है वहां वह वैसा करने के लिए अपने आधारों को संक्षेप में अभिलिखित करते हुए निर्णय देगा और निर्णय के अनुसार डिक्री लिखी जाएगी ।";

(Vक) नियम 11 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

समय जिसके भीतर नियम 11 के अधीन सुनवाई समाप्त हो जानी चाहिए ।

"11क. प्रत्येक अपील नियम 11 के अधीन यथासंभव शीघ्रता से सुनी जाएगी और ऐसी सुनवाई उस तारीख से जिसको अपील का ज्ञापन फाइल किया गया है साठ दिनों के भीतर समाप्त करने का प्रयास किया जाएगा ।";

* * * * *

(Vi) नियम 14 में, उपनियम (2) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

"(3) प्रत्यर्थी पर तामील की जाने वाली सूचना के साथ अपील के ज्ञापन की एक प्रति होगी ।

(4) उपनियम (1) में अन्तर्विष्ट किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी, किसी अपील की प्रासंगिक किसी कार्यवाही की सूचना की तामील अपील न्यायालय में प्रथम बार पक्षकार बनाए गए व्यक्ति से भिन्न किसी प्रत्यर्थी पर करनी आवश्यक नहीं होगी जब तक कि प्रथम बार के न्यायालय में वह उपसंजात न हुआ हो और उसने तामील के लिए कोई पता फाइल न किया हो या वह अपील में उपसंजात न हुआ हो ।

(5) उपनियम (4) की कोई बात अपील में निर्दिष्ट प्रत्यर्थी को उसका प्रतिवाद करने से वर्जित नहीं करेगी ।";

(vii) नियम 17 के उपनियम (1) के अन्त में निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"**स्पष्टीकरण**—इस उपनियम की किसी बात का यह अर्थ नहीं किया जाएगा कि वह न्यायालय को गुणागुण के आधार पर अपील खारिज करने के लिए सशक्त करती है ।";

(viii) नियम 18 में, "सूचना की तामील के खर्चे को पूरा करने के लिए अपेक्षित राशि नियत कालावधि के अन्दर निक्षिप्त करने में" शब्दों के पश्चात "या यदि सूचना तामील किए बिना वापस की जाती है और यह पाया जाता है कि अपीलार्थी की असफलता के परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी को सूचना नहीं निकाली गई है तो सूचना की तामील के लिए किसी और प्रयत्न के खर्चे के पूरा करने के लिए अपेक्षित राशि तत्पश्चात नियत किसी कालावधि के अन्दर निक्षिप्त करने में" शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे ।

(ix) नियम 20 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया जाएगा और इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात्—

"(2) अपील के लिए परिसीमाकाल की समाप्ति के पश्चात् इस नियम के अधीन कोई प्रत्यर्थी नहीं जोड़ा जाएगा जब तक कि न्यायालय, ऐसे कारणों से जो अभिलिखित किए जाएंगे खर्चे के बारे में ऐसे निबंधनों पर, जो वह ठीक समझे, वैसा करने की अनुज्ञा नहीं दे देता ।" ;

(x) नियम 22 के—

(क) उपनियम (1) में, "उन आधारों में से किसी आधार पर कर सकेगा, जो निचले न्यायालय में उसके विरुद्ध विनिश्चित किए गए हों, बल्कि डिक्री के विरुद्ध कोई ऐसा प्रत्याक्षेप भी कर सकेगा", शब्दों के स्थान पर, "यह भी कथित कर सकेगा कि निष्कर्ष निचले न्यायालय में उसके विरुद्ध किसी विवाधक की बाबत उसके पक्ष में होना चाहिए था, बल्कि डिक्री के विरुद्ध कोई ऐसा प्रत्याक्षेप भी कर सकेगा" शब्द रखे जाएंगे;

(ख) उपनियम (1) के अन्त में निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"**स्पष्टीकरण**—कोई प्रत्यर्थी जो निर्णय में उस न्यायालय के किसी ऐसे निष्कर्ष से, जिस पर वह डिक्री, जिसके विरुद्ध अपील की गई है, आधारित है इस नियम के अधीन प्रत्याक्षेप, जहां तक कि वह उस निष्कर्ष के बारे में है, इस बात के होते हुए भी फाइल कर सकेगा कि न्यायालय के किसी अन्य निष्कर्ष पर विनिश्चय के कारण, जो उस वाद के विनिश्चय के लिए पर्याप्त है वह डिक्री पूर्णतः या भागतः उस प्रत्यर्थी के पक्ष में है ।";

(xi) नियम 23 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

अन्य मामले में प्रतिप्रेषण ।

"23क. जहां कि उस न्यायालय ने जिसकी डिक्री की अपील की गई है मामले का निपटारा किसी प्रारम्भिक बात पर करने से अन्यथा

किया है और डिक्री अपील में उलट दी गई है और पुनर्विचारण आवश्यक समझा गया है वहां अपील न्यायालय की वही शक्तियां होंगी जो उसकी नियम 23 के अधीन हैं।" ;

(xii) नियम 25 में "अपने कारणों के सहित—" शब्दों के पश्चात् "ऐसे समय के भीतर, जो अपील न्यायालय द्वारा नियत किया जाए या उसके द्वारा समय-समय पर बढ़ाया जाए" शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे ;

(xiii) नियम 26 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

प्रतिप्रेषण के आदेश में अगली सुनवाई का उल्लेख किया जाना ।

"26क. जहां कि अपील न्यायालय नियम 23 या नियम 23क के अधीन मामला प्रतिप्रेषित करता है या विवाद्यकों की विरचना करता है और उन्हें नियम 25 के अधीन विचारण के लिए निर्दिष्ट करता है वहां वह उस न्यायालय के समक्ष, जिसकी डिक्री की अपील की गई थी, मामले में आगे कार्यवाही के बारे में उस न्यायालय के निदेश प्राप्त करने के प्रयोजन के लिए पक्षकारों की उपसंजाति के लिए तारीख नियत करेगा।";

(xiv) नियम 27 के उपनियम (1) में खण्ड (क) के पश्चात् निम्नलिखित खण्ड अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(कक) अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने की ईप्सा करने वाला पक्षकार यह सिद्ध कर देता है कि वह सम्यक तत्परता का प्रयोग करने के बावजूद ऐसे साक्ष्य की जानकारी नहीं रखता था या उसे उस समय पेश नहीं कर सकता था जब वह डिक्री पारित की गई थी, जिसके विरुद्ध अपील की गई है, अथवा";

(xv) नियम 30 को उस नियम के उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया जाएगा और इस प्रकार पुनःसंख्याकित उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(2) जहां कि कोई लिखित निर्णय सुनाया जाता है, वहां यदि अवधार्य प्रश्न, उन पर विनिश्चय और अपील में पारित अन्तिम आदेश को पढ़ा जाए तो यह पर्याप्त होगा और न्यायालय के लिए सम्पूर्ण निर्णय को पढ़ना आवश्यक नहीं होगा किन्तु पक्षकारों या उनके प्लीडरों को परिशीलन के लिए सम्पूर्ण निर्णय की प्रति निर्णय सुनाए जाने के तुरन्त पश्चात् उपलब्ध करायी जाएगी।";

(xvi) नियम 33 में "यद्यपि ऐसे प्रत्यर्थियों या पक्षकारों ने कोई भी अपील या आक्षेप फाइल न किया हो;" शब्दों के पश्चात् "और जहां कि प्रतीप वादों में डिक्रियां हुई हों या जहां एक वाद में दो या अधिक डिक्रियां पारित की गई हों, वहां यद्यपि ऐसी डिक्रियों की अपील फाइल न की गई हो, यह शक्ति सभी डिक्रियों या उनमें से किसी के बारे में प्रयुक्त की जा सकेगी" शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे ।

आदेश 42 का संशोधन ।

88. प्रथम अनुसूची में, आदेश 42 के नियम 1 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किए जाएंगे, अर्थात् :—

न्यायालय की यह निदेश देने की शक्ति कि उसके द्वारा बनाए गए

"2. आदेश 41 के नियम 11 के अधीन द्वितीय अपील की सुनवाई के लिए आदेश किए जाने के समय न्यायालय धारा 100 द्वारा यथाअपेक्षित सारवान् विधि प्रश्न बनाएगा और ऐसा करने में न्यायालय निदेश कर सकेगा कि द्वितीय अपील इस प्रकार बनाए

गए प्रश्न पर सुनी जाएगी और अपीलार्थी द्वारा 100 के उपबन्धों के अनुसार न्यायालय की इजाजत के बिना अपील में किसी अन्य आधार पर बहस नहीं करेगा ।

प्रश्न पर अपील सुनी जाए ।

3. आदेश 41 के नियम 14 के उपनियम (4) में प्रथम बार के न्यायालय के प्रति निर्देशों का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वे किसी अपीली डिक्री या आदेश की अपील के मामले में उस न्यायालय के प्रति निर्देश है जिस में मूल डिक्री या आदेश की अपील की गई थी ।" ।

आदेश 41 के नियम 14 का लागू होना ।

89. प्रथम अनुसूची में, आदेश 43 के—

आदेश 43 का संशोधन ।

(i) नियम 1 में,—

(क) खण्ड (क) में "नियम 10 के अधीन दिया गया हो" शब्दों के स्थान पर "सिवाय उस दशा के जब आदेश 7 के नियम 10क में विनिर्दिष्ट प्रक्रिया का अनुसरण किया गया है नियम 10 के अधीन दिया गया हो" शब्द रखे जाएंगे ;

(ख) खण्ड (ख), (ङ), (छ), (ज), (ड), (ण) और (फ) का लोप किया जाएगा ।

(ग) खण्ड (य) के पश्चात् निम्नलिखित खण्ड अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(यक) आवेदन को नामंजूर करने का आदेश, जो आदेश 21 के नियम 106 के उपनियम (1) के अधीन किया गया हो परन्तु मूल आवेदन अर्थात् उस आदेश के नियम 105 के उपनियम (1) में निर्दिष्ट आवेदन पर आदेश अपीलनीय है," ;

(घ) खण्ड (ढ) के पश्चात् निम्नलिखित खण्ड अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"(ढक) निर्धन व्यक्ति के रूप में वाद लाने की अनुज्ञा के लिए आवेदन को नामंजूर करने का आदेश, जो आदेश 23 के नियम 5 या नियम 7 के अधीन दिया गया हो;";

(ङ) खण्ड (ढ) में "नियम 2," शब्द और अंक के पश्चात "नियम 2क" शब्द, अंक और अक्षर अन्तःस्थापित किए जाएंगे ;

(च) खण्ड (प) में "नियम 23" शब्द और अंक के पश्चात् "या नियम 23क" शब्द, अंक और अक्षर अन्तःस्थापित किए जाएंगे;

(ii) नियम 1 के पश्चात् निम्नलिखित नियम अन्तःस्थापित किया जाएगा; अर्थात :—

"1क. जहां कि इस संहिता के अधीन कोई आदेश पक्षकार के विरुद्ध किया जाता है और तदुपरान्त निर्णय ऐसे पक्षकार के विरुद्ध सुनाया जाता है और डिक्री तैयार की जाती है वहां ऐसा पक्षकार डिक्री के विरुद्ध अपील में यह प्रतिवाद कर सकेगा कि ऐसा आदेश वहीं किया जाना चाहिए था और निर्णय नहीं सुनाया जाना चाहिए था ।

अपील में डिक्रियों के विरुद्ध अपील न किए जा सकने वाले आदेशों पर आक्षेप करने का अधिकार ।

(2) ऐसी डिक्री के विरुद्ध अपील में, जो समझौता अभिलिखित करने के या समझौता अभिलिखित किया जाना नामंजूर करने के

पश्चात् वाद में पारित की गई है, अपीलार्थी को इस आधार पर डिक्री का प्रतिवाद करने की स्वतन्त्रता होगी कि समझौता अभिलिखित किया जाना चाहिए था या नहीं किया जाना चाहिए था ।" ।

आदेश 44 का संशोधन ।

90. प्रथम अनुसूची में, आदेश 44 में,—

(i) शीर्षक के स्थान पर निम्नलिखित शीर्षक रखा जाएगा, अर्थात् :— "निर्धन व्यक्तियों द्वारा अपीलें" ;

(ii) नियम 1 में—

(क) पार्श्व शीर्षक में "अकिंचन के तौर पर" शब्दों के स्थान पर "निर्धन व्यक्ति के तौर पर" शब्द रखे जाएंगे ;

(ख) उपनियम (1) में "अकिंचनों" या "अकिंचन" शब्द के स्थान पर, यथास्थिति, निर्धन व्यक्तियों "निर्धन या व्यक्ति" शब्द रखे जाएंगे ;

(ग) उपनियम 2 का लोप किया जाएगा ;

(iii) नियम 2 के स्थान पर निम्नलिखित नियम रखे जाएंगे, अर्थात :—

न्यायालय फीस के संदाय के लिए समय प्रदान किया जाना ।

"2. जहां कि आवेदन नियम 1 के अधीन नामंजूर किया जाता है वहां न्यायालय आवेदन नामंजूर करते समय आवेदक को यह अनुज्ञा दे सकेगा कि वह अपेक्षित न्यायालय फीस ऐसे समय के अन्दर, जो न्यायालय द्वारा नियत किया जाए या उसके द्वारा समय-समय पर बढ़ाया जाए, संदत्त करे और ऐसा संदाय कर देने पर उस अपील-ज्ञापन का बल और प्रभाव उसी तरह होगा मानों वह फीस प्रथम बार में संदत्त कर दी गई थी ।

आवेदक निर्धन व्यक्ति है या नहीं इसकी जांच ।

3. (1) जहां कि नियम 1 में निर्दिष्ट आवेदक को उस न्यायालय में, जिसकी डिक्री की अपील की गई है, निर्धन व्यक्ति के तौर पर वाद लाने या अपील करने के लिए अनुज्ञात किया गया था वहां यदि आवेदक ने यह कथन करते हुए शपथपत्र दिया है कि वह उस डिक्री की तारीख से, जिसकी अपील की गई है, निर्धन व्यक्ति न रहने से विरत नहीं हुआ है तो इस प्रश्न के बारे में कि वह निर्धन व्यक्ति है या नहीं कोई और जांच आवश्यक नहीं होगी किन्तु यदि सरकारी प्लीडर या प्रत्यर्थी ऐसे शपथपत्र में किए गए कथन पर विवाद करता है तो उपर्युक्त प्रश्न की जांच अपील न्यायालय द्वारा अपील न्यायालय के आदेशों के अधीन उसी न्यायालय के आफिसर द्वारा की जाएगी ।

(2) जहां कि नियम 1 में निर्दिष्ट आवेदक के बारे में यह अभिकथन किया जाता है कि वह उस डिक्री की तारीख से, जिसकी अपील की गई है, निर्धन व्यक्ति हो गया है वहां इस प्रश्न की जांच कि वह निर्धन व्यक्ति है या नहीं अपील न्यायालय द्वारा या अपील न्यायालय के आदेशों के अधीन उसी न्यायालय के आफिसर द्वारा उस दशा में की जाएगी जिसमें अपील न्यायालय मामले की परिस्थितियों में यह आवश्यक नहीं समझता कि जांच ऐसे न्यायालय द्वारा की जानी चाहिए जिसके विनिश्चय की अपील की गई है ।" ।

आदेश 45 का संशोधन ।

91. प्रथम अनुसूची में, आदेश 45 के नियम 2 को उसके उपनियम (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया जाएगा और इस प्रकार पुनःसंख्यांकित उपनियम (1) के पश्चात् निम्नलिखित उपनियम अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात :—

"(2) उपनियम (1) के अधीन हर अर्जी की सुनवाई यथासम्भव शीघ्रता से की जाएगी और आवेदन के निपाटारे को उस तारीख से, जिस

तारीख को अर्जी न्यायालय में उपनियम (1) के अधीन उपस्थापित की जाती है, साठ दिनों के अन्दर समाप्त करने का प्रयास किया जाएगा ।" ।

आदेश 47 का संशोधन ।

92. प्रथम अनुसूची में, आदेश 47 के,—

(i) नियम 1 में निम्नलिखित स्पष्टीकरण अन्त में अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"**स्पष्टीकरण**—यह तथ्य कि किसी विधि प्रश्न का विनिश्चय जिस पर न्यायालय का निर्णय आधृत है, किसी अन्य मामले में वरिष्ठ न्यायालय के पश्चात्वर्ती विनिश्चय द्वारा उलट दिया गया है या उपान्तरित कर दिया गया है, उस निर्णय के पुनर्विलोकन के लिए आधार नहीं होगा ।" ;

(ii) नियम 7 में, उपनियम (1) के स्थान पर निम्नलिखित उपनियम रखा जाएगा, अर्थात् :—

"(1) आवेदन नामंजूर करने वाले न्यायालय का आदेश अपीलनीय नहीं होगा किन्तु आवेदन मंजूर करने वाले आदेश पर आक्षेप, आवेदन मंजूर करने वाले आदेश की अपील करके या वाद में अन्तिम रूप से पारित डिक्री या किए गए आदेश की अपील में, तुरन्त किया जा सकेगा ।" ।

अध्याय 4

प्ररूपों का संशोधन

परिशिष्ट क का संशोधन ।

93. प्रथम अनुसूची में, परिशिष्ट क में, "(3) वादपत्र" शीर्षक के अधीन:—

(i) प्ररूप सं० 37 के पैरा 2 के स्थान पर निम्नलिखित पैरा रखा जाएगा,—

"*2. वादी ने न्यायालय की इजाजत इस बात को संस्थित करने के लिए अभिप्राप्त कर ली है ।"

(ii) प्ररूप सं० 45 में, पैरा 6 के उपपैरा (2) में "बाकी के लिए डिक्री" शब्दों के स्थान पर "बाकी के लिए" आदेश शब्द रखे जाएंगे ;

(iii) प्ररूप सं० 46 में, पैरा 6 में "और उसे अपने को" शब्दों के स्थान पर "और अन्तःकालीन लाभ के साथ उसे अपने को" शब्द रखे जाएंगे ।

परिशिष्ट ख का संशोधन ।

94. प्रथम अनुसूची में, परिशिष्ट ख में,—

(i) प्ररूप 2 में "और तुम्हें यह भी निदेश दिया जाता है कि तुम उस दिन उन सब दस्तावेजों को पेश करो जिन पर अपनी प्रतिरक्षा या अपने दावे के समर्थन में निर्भर करने का तुम्हारा आशय है" शब्दों के स्थान पर निम्नलिखित शब्द रखे जाएंगे :—

"और तुम्हें यह आगे निदेश दिया जाता है कि तुम उस दिन अपनी प्रतिरक्षा का लिखित कथन फाइल करो और उस दिन उन सब

"*जहां कि वाद महाधिवक्ता द्वारा संस्थित किया जाता है वहां यह लागू नहीं है ।"

दस्तावेजों को, जो तुम्हारे कब्जे या शक्ति में हों, पेश करो जिन पर तुम अपनी प्रतिरक्षा या मुजरा या प्रतिदावा निर्भर करते हो और जहां कि तुम किसी दस्तावेज पर, चाहे वह तुम्हारे कब्जे या शक्ति में हो या न हो, निर्भर करते हो, वहां तुम अपनी प्रतिरक्षा, मुजरा या प्रतिदावे के समर्थन में साक्ष्य के रूप में ऐसी दस्तावेजों को, लिखित कथन के साथ उपाबद्ध की जाने वाली सूची में, प्रविष्टि करोगे ।" ;

(ii) प्ररूप 4 के स्थान पर निम्नलिखित प्ररूप रखा जाएगा, अर्थात् :—

"संख्यांक 4

संक्षिप्त वाद में समन

(आदेश 37, नियम 2)

(शीर्षक)

प्रेषिती

(नाम, वर्णन और निवास-स्थान)

यतः.....ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 37 के अधीन तुम्हारे विरुद्ध .....रुपयों और ब्याज के लिए वाद संस्थित किया है अतएव एतद्द्वारा तुम्हें समन किया जाता है कि तुम अपनी उपसंजाति इसकी तामील होने के दस दिन के अन्दर कराओ । इसमें व्यतिक्रम होने पर वादी उक्त दस दिन की कालावधि के अवसान के पश्चात् किसी समय..... रुपए से अनधिक किसी राशि के लिए और खर्चों की बाबत..... रुपयों की राशि के लिए ऐसे ब्याज सहित, यदि कोई हो, जैसा न्यायालय आदिष्ट करे, डिक्री अभिप्राप्त करने का हकदार होगा ।

यदि तुम अपनी उपसंजाति कराओगे तो वादी तत्पश्चात् तुम्हें निर्णय के लिए समन तामील करेगा जिसकी सुनवाई के समय तुम वाद की प्रतिरक्षा करने की इजाजत के लिए न्यायालय से समावेदन करने के हकदार होंगे ।

यदि तुम शपथपत्र द्वारा या अन्यथा न्यायालय का यह समाधान कर देते हो कि वाद की प्रतिरक्षा गुणागुण के आधार पर है या यह युक्तियुक्त है कि तुम्हें प्रतिरक्षा करने के लिए अनुज्ञात किया जाना चाहिए तो प्रतिरक्षा करने की इजाजत दी जा सकेगी ।

आज 19.....के/की.....के..... दिन मेरे हस्ताक्षर से और न्यायालय की मुद्रा लगाकर प्रदत्त ।

न्यायाधीश ।" ;

(iii) प्ररूप संख्यांक 4 के पश्चात् निम्नलिखित प्ररूप अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"संख्यांक 4क

संक्षिप्त वाद में निर्णय के लिए समन

(आदेश 37, नियम 3)

(शीर्षक)

.....न्यायालय में, 19....

.....संख्यांक वाले वाद में

भ म य वादी

बनाम

क ख ग प्रतिवादी

न्यायालय, यथास्थिति, वादी या.....के शपथपत्र को पढ़ने के उपरांत निम्नलिखित आदेश करता है, अर्थात्—

सम्बद्ध सभी पक्षकार, यथास्थिति, न्यायालय न्यायाधीश के समक्ष 19.....के.....के दिन पूर्वाह्न, में .....बजे वादी के इस आवेदन की सुनवाई के लिए हाजिर हों कि वह प्रतिवादी के विरुद्ध (या यदि एक या कुछ या कई प्रतिवादी हों तो उसका या उनके नाम अन्तःस्थापित करें)..... रुपए के लिए और ब्याज तथा खर्चे के लिए इस वाद में निर्णय प्राप्त करने के लिए स्वतन्त्र होगा।

तारीख .....19 के दिन.....।"।

* * * *

परिशिष्ट ङ का संशोधन।

95 प्रथम अनुसूची में, परिशिष्ट ङ में—

(i) प्ररूप संख्यांक 7 में "समनुदेशन द्वारा" शब्दों के पश्चात् "या समनुदेशन के बिना" शब्द अन्तःस्थापित किए जाएंगे ;

(ii) प्ररूप संख्यांक 14 में, "आने" शब्द का लोप किया जाएगा,

(iii) प्ररूप संख्यांक 16 के पश्चात् निम्नलिखित प्ररूप अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"संख्यांक 16क

निर्णीत-ऋणी द्वारा आस्तियों के बारे में शपथपत्र दिया जाना

[आदेश 21, नियम 41(2)]

.....न्यायालय में

क ख डिक्रीदार

बनाम

ग निर्णीत-ऋणी

.....का मैं.....

शपथ

———————— पर निम्नलिखित रूप में कथन करता हूं--

सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान

1. मेरा पूरा नाम ..... है ।
(बड़े अक्षरों में)

2. मैं ..... में निवास करता हूं ।

*3. मैं विवाहित हूं
अविवाहित हूं
(विधुर विधवा
विच्छिन्न-विवाह)

4. निम्नलिखित व्यक्ति मुझ पर आश्रित हैं ।

5. मेरे नियोजन, व्यापार या व्यवसाय..... हैं ।
जो मैं ..... पर करता हुं,
मैं निम्नलिखित कम्पनियों का निदेशक हूं ।

6. मेरी वर्तमान वार्षिक/मासिक/साप्ताहिक आय आय-कर देने के पश्चात् निम्नलिखित रूप में है--

(क) मेरे नियोजन, व्यापार या व्यवसाय, से.....रु०

(ख) अन्य स्रोतों से ————————रु०

*7. (क) मैं उस गृह का स्वामी हूं जिसमें मैं निवास करता हूं, उसका मूल्य ..... रुपए है । मैं रेट के बंधक, ब्याज इत्यादि के रूप में..... रु० की वार्षिक राशि निर्गम देता हूं;

(ख) मैं भाटक के रूप में..... रुपए वार्षिक राशि देता हूं ।

8. मेरे पास निम्नलिखित चीजें हैं--

(क) बैंक में खाता ।
(ख) स्टाक और शेयर ।
(ग) जीवन और विन्यास पालिसियां ।
(घ) गृह सम्पत्ति ।
(ङ) अन्य सम्पत्ति ।
(च) अन्य प्रतिभूतियां ।

} (विशिष्टयां दीजिए)।

9. मुझ निम्नलिखित ऋण शोध्य हैं--
(विशिष्टियां दीजिए)

(क) ..... से .....रु०

(ख) ..... से/..... रु० (इत्यादि)

मेरे समक्ष शपथ लिया गया इत्यादि ।" ;

---

*अनपेक्षित शब्द काट दिए जाएं ।

(iv) प्ररूप संख्यांक 24 में प्रथम पैरा के पश्चात् निम्नलिखित पैरा अन्तः-स्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"यह भी आदिष्ट है कि तुम्हें विक्रय की प्रख्यापना के निबन्धन तय करने के लिए नियत तारीख की सूचना लेने के लिए 19.... के ... दिन को न्यायालय में हाजिर होना चाहिए ।",

(v) प्ररूप संख्यांक 29 में, सम्पत्ति की अनुसूची में विद्यमान स्तम्भों के पश्चात् निम्नलिखित स्तम्भ जोड़े जाएंगे, अर्थात् :—

डिक्रीदार द्वारा यथाकथित सम्पत्ति का मूल्य	निर्णीत-ऋणी द्वारा यथा-कथित सम्पत्ति का मूल्य

परिशिष्ट ज का संशोधन ।

96. प्रथम अनुसूची में, परिशिष्ट (ज) में,—

(i) प्ररूप संख्यांक 2 के पश्चात् निम्नलिखित प्ररूप अन्तःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :—

"संख्यांक 2क

वादी प्रतिवादी द्वारा आहूत किए जाने के लिए प्रस्थापित साक्षियों की सूची

(आदेश 16, नियम 1)

उस पक्षकार का नाम, जो साक्षी को आहूत करने की प्रस्थापना करता है	साक्षी का नाम और पता	टिप्पण"

(ii) प्ररूप संख्यांक 11 के स्थान पर निम्नलिखित प्ररूप रखे जाएंगे, अर्थात् :—

"संख्यांक 11

प्रमाणपत्र प्राप्त, नैसर्गिक या वस्तुतः संरक्षक को सूचना

(आदेश 32, नियम 3)

(शीर्षक)

(प्रमाणपत्र प्राप्त/नैसर्गिक/वस्तुतः संरक्षक)

प्रेषिती,

यतः उपर्युक्त वाद में *वादी की ओर से अप्राप्तवय प्रतिवादी* की ओर से वाद-संरक्षक की नियुक्ति के लिए आवेदन किया गया है, अतएव तुम से (न्यायालय द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक, नैसर्गिक संरक्षक या जिस व्यक्ति की देखरेख में अप्राप्तवय है, उस व्यक्ति का नाम लिखिए) एतद्द्वारा यह अपेक्षा की जाती है कि तुम यह सूचना ग्रहण करो कि यदि तुम न्यायालय के समक्ष मामले को सुनवाई के लिए नियत और उपाबद्ध समन में कथित दिन को या के पूर्व उपसंजात नहीं होते हो और अप्राप्तवय के लिए वाद संरक्षक के रूप में कार्य करने की अपनी सम्मति अभिव्यक्त नहीं करते हो,

*अनपेक्षित शब्द काट दिए जाएं ।

ती न्यायालय किसी अन्य व्यक्ति को उक्त वाद के प्रयोजनों के लिए अप्राप्तवय के संरक्षक के रूप में कार्य करने के लिए नियुक्त करने के लिए अग्रसर होगा ।

आज 19..... के / की के ..... दिन को मेरे हस्ताक्षर से और न्यायालय की मुद्रा लगाकर प्रदत्त ।

न्यायाधीश ।

संख्यांक 11क

अप्राप्तवय प्रतिवादी को सूचना

(आदेश 32, नियम 3)

(शीर्षक)

प्रेषिती,

अप्राप्तवय प्रतिवादी

यतः उक्त वाद में वादी की ओर से आवेदन तुम्हारे, अप्राप्तवय प्रतिवादी, के लिए, ... को* वाद-संरक्षक के रूप में नियुक्त करने के लिए उपस्थित किया गया है, अतएव तुमसे एतद् द्वारा यह अपेक्षा की जाती है कि तुम आवेदन के विरुद्ध हेतुक दर्शित करने के लिए इस न्यायालय में 19... के/की ..... के ..... दिन ..... बजे अपराह्न में स्वयं उपसंजात हो। ऐसे उपसंजात होने में असफल होने पर उक्त आवेदन की सुनवाई की जाएगी और उसका एकपक्षीय अवधारण किया जाएगा ।

आज 19..... के/की ..... के ..... दिन को मेरे हस्ताक्षर से और न्यायालय की मुद्रा लगाकर प्रदत्त ।

न्यायाधीश ।"।

अध्याय 5

निरसन और व्यावृत्तियां

निरसन और व्यावृत्तियां ।

97. (1) इस अधिनियम के प्रारम्भ के पूर्व राज्य विधान-मण्डल या उच्च न्यायालय द्वारा मूल अधिनियम में किया गया कोई संशोधन या अन्तःस्थापित कोई उपबन्ध, वहां तक के सिवाय जहां तक कि ऐसा संशोधन या उपबन्ध इस अधिनियम द्वारा यथासंशोधित मूल अधिनियम के उपबन्धों से संगत है, निरसित हो जाएगा ।

(2) इस बात के होते हुए भी कि इस अधिनियम के उपबन्ध प्रवृत्त हो गए हैं, या उपधारा (1) के अधीन निरसन प्रभावित हो गया है और साधारण खण्ड अधिनियम, 1897 की धारा 6 के उपबन्धों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना :— 1897 का 10

(क) इस अधिनियम की धारा 3 द्वारा मूल अधिनियम की धारा 2 के खण्ड (2) में किया गया संशोधन किसी ऐसी अपील पर प्रभाव नहीं

*यहां संरक्षक का नाम लिखा जाए ।

डालेगा जो धारा 47 में निर्दिष्ट किसी प्रश्न के अवधारण के विरुद्ध की गई है और प्रत्येक ऐसी अपील से ऐसे बरता जाएगा मानों उक्त धारा 3 प्रवृत्त नहीं हुई थी ;

(ख) इस अधिनियम की धारा 7 द्वारा यथासंशोधित मूल अधिनियम की धारा 20 के उपबन्ध किसी ऐसे वाद को जो उक्त धारा 7 के प्रारम्भ के ठीक पूर्व लम्बित था, लागू नहीं होंगे या उसे प्रभावित नहीं करेंगे और ऐसे हर वाद का वचारण ऐसे किया जाएगा, मानो धारा 7 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(ग) इस अधि नियम की धारा 8 द्वारा यथासंशोधित मूल अधिनियम की धारा 21 के उपबन्ध किसी ऐसे वाद को, जो उक्त धारा 8 के प्रारम्भ के ठीक पूर्व लम्बित था, लागू नहीं होंगे या उसे प्रभावित नहीं करेंगे और ऐसे वाद का विचारण ऐसे किया जाएगा, मानो धारा 8 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(घ) इस अधिनियम की धारा 12 द्वारा यथासंशोधित मूल अधिनियम की धारा 25 के उपबन्ध किसी ऐसे वाद, अपील या अन्य कार्यवाही को लागू नहीं होंगे जिसमें उक्त धारा 12 के प्रारम्भ के पूर्व धारा 25 के उपबन्धों के अधीन कोई रिपोर्ट की गई है और ऐसे हर वाद, अपील या अन्य कार्यवाही से ऐस बरता जाएगा मावो उक्त धारा 12 प्रवृत्त नहीं हुई थी ;

(ङ) इस अधिनियम की धारा 13 द्वारा यथासंशोधित मूल अधिनियम की धारा 34 के उपबन्ध उस दर को प्रभावित नहीं करेंगे, जिस दर पर ब्याज किसी ऐसे वाद में, जो उक्त धारा 14 के प्रारम्भ के पूर्व संस्थित किया गया था, डिक्री पर अनुज्ञात किया जाए और ऐसे वाद में पारित डिक्री पर ब्याज धारा 34 के उपबन्धों के, जिस रूप में वे इस अधिनियम की धारा 14 के प्रारम्भ के पूर्व थे, अनुसरण में ऐसे आदिष्ट किया जाएगा, मानो उक्त धारा 13 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(च) इस अधिनियम की धारा 14 द्वारा यथासंशोधित मूल अधिनियम की धारा 35क के उपबन्ध पुनरीक्षण की किसी ऐसी कार्यवाही को, जो उक्त धारा 14 के प्रारम्भ के पूर्व लम्बित थी, लागू नहीं होंगे या उसे प्रभावित नहीं करेंगे और ऐसी हर कार्यवाही से ऐसे बरता और उसका निपटारा इस प्रकार से किया जाएगा मानो उक्त धारा 14 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(छ) इस अधिनियम की धारा 23 द्वारा यथासंशोधित मूल अधिनियम की धारा 60 के उपबन्ध ऐसी किसी कुर्की को जो उक्त धारा 23 के प्रारम्भ के पूर्व की गई है, लागू नहीं होंगे;

(ज) इस अधिनियम की धारा 27 द्वारा मूल अधिनियम की धारा 80 का संशोधन किसी ऐसे वाद को, जो उक्त धारा 27 के प्रारम्भ के पूर्व संस्थित किया गया था, लागू नहीं होगा, या उसे प्रभावित नहीं करेगा और प्रत्येक ऐसे वाद से ऐसे बरता जाएगा मानो उक्त धारा 27 द्वारा धारा 80 का संशोधन नहीं किया गया था;

(झ) इस अधिनियम की धारा 28 द्वारा यथासंशोधित मूल अधिनियम की धारा 82 के उपबन्ध किसी ऐसी डिक्री को लागू नहीं होंगे या उसे प्रभावित नहीं करेंगे, जो भारत संघ या राज्य या यथास्थिति, लोक आफिसर

के विरुद्ध उक्त धारा 28 के प्रारम्भ के पूर्व पारित की गई थी या ऐसी किसी डिक्री के निष्पादन को, वे लागू नहीं होंगे या उसे प्रभावित नहीं करेंगे और ऐसी हर डिक्री या निष्पादन से ऐसे बरता जाएगा, मानो उक्त धारा 28 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(आ) इस अधिनियम की धारा 30 द्वारा यथासंशोधित मूल अधिनियम की धारा 91 के उपबन्ध किसी ऐसे वाद, अपील या कार्यवाही को लागू नहीं होंगे या प्रभावित नहीं करेंगे, जो उक्त धारा 30 के प्रारम्भ के पूर्व संस्थित या फाइल की गई थी और ऐसे हर वाद, अपील या कार्यवाही का निपटारा ऐसे से किया जाएगा मानो उक्त धारा 30 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(इ) इस अधिनियम की धारा 31 द्वारा यथासंशोधित मूल अधिनियम की धारा 92 के उपबन्ध ऐसे किसी वाद, अपील या कार्यवाही को लागू नहीं होंगे या प्रभावित नहीं करेंगे, जो उक्त धारा 31 के प्रारम्भ के पूर्व संस्थित या फाइल की गई थी और ऐसे हर वाद, अपील या कार्यवाही का निपटारा ऐसे इस प्रकार से किया जाएगा, मानो उक्त धारा 31 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(ठ) इस अधिनियम की धारा 33 द्वारा यथासंशोधित मूल अधिनियम की धारा 96 के उपबन्ध किसी ऐसी अपील पर प्रभाव नहीं डालेंगे या उसे लागू नहीं होंगे, जो उक्त धारा 34 के प्रारम्भ के पूर्व संस्थित किसी वाद में पारित डिक्री के विरुद्ध की गई है और ऐसी हर अपील ऐसे बरता जाएगा मानो धारा 34 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(ड) इस अधिनियम की धारा 37 द्वारा मूल अधिनियम में रखी गई धारा 100 के उपबन्ध अपीली डिक्री या आदेश की किसी ऐसी अपील को लागू नहीं होंगे या प्रभावित नहीं करेंगे, जो उक्त धारा 37 के प्रारम्भ के पूर्व आदेश 41 के नियम 11 के अधीन सुनवाई के पश्चात् ग्रहण की गई थी और ऐसे ग्रहण की गई हर अपील से ऐसे बरता जाएगा मानो उक्त धारा 37 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(ढ) इस अधिनियम की धारा 38 द्वारा मूल अधिनियम में यथा अन्तःस्थापित धारा 100क किसी लेटर्स पेटेन्ट के अधीन उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के विनिश्चय के विरुद्ध किसी ऐसी अपील को लागू नहीं होगी, या प्रभावित नहीं करेगी, जो उक्त धारा 38 के प्रारम्भ के पूर्व ग्रहण की गई थी और ऐसी हर अपील का निपटारा ऐसे किया जाएगा, मानो उक्त धारा 38 प्रवृत्त नहीं हुई थी ;

(ण) इस अधिनियम की धारा 43 द्वारा मूल अधिनियम की धारा 115 का संशोधन पुनरीक्षण की किसी ऐसी कार्यवाही को लागू नहीं होगा या प्रभावित नहीं करेगा, जो उक्त धारा 43 के प्रारम्भ के पूर्व, प्रारम्भिक सुनवाई के पश्चात् ग्रहण की गई थी और पुनरीक्षण की ऐसी हर कार्यवाही का निपटारा ऐसे किया जाएगा, मानो उक्त धारा 43 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(त) इस अधिनियम की धारा 47 द्वारा यथासंशोधित मूल अधिनियम की धारा 141 के उपबन्ध किसी ऐसी कार्यवाही को लागू नहीं होंगे या प्रभावित नहीं करेंगे जो उक्त धारा 47 के ठीक पूर्व लम्बित थी

और हर ऐसी ही कार्यवाही से ऐसे बरता जाएगा मानो उक्त धारा 47 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(च) इस अधिनियम की धारा 72 द्वारा यथास्थिति संशोधित या प्रतिस्थापित या अन्तःस्थापित प्रथम अनुसूची के आदेश 21 के नियम 31, 32, 48क, 57 से 59, 90 और 97 से 103 तक के उपबन्ध निम्नलिखित को लागू नहीं होंगे या प्रभावित नहीं करेंगे :—

(i) उक्त धारा 72 के प्रारम्भ के ठीक पूर्व विद्यमान कोई कुर्की; अथवा

(ii) कोई वाद, जो ऐसे प्रारम्भ के पूर्व उपर्युक्त नियम 63 के अधीन कुर्की की गई सम्पत्ति में अधिकार स्थापित करने के लिए या पूर्वोक्त नियम 103 के अधीन कब्जा स्थापित करने के लिए संस्थित किया गया था, अथवा

(iii) किसी स्थावर सम्पत्ति का विक्रय अपास्त करने के लिए कोई कार्यवाही,

और ऐसी हर कुर्की, वाद या कार्यवाही इस प्रकार से चालू रखी जाएगी, मानो उक्त धारा 72 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(छ) इस अधिनियम की धारा 73 द्वारा यथा प्रतिस्थापित प्रथम अनुसूची के आदेश 22 के नियम 4 के उपबंध उक्त धारा 73 के प्रारम्भ के पूर्व किए गए किसी उपशामन आदेश को लागू नहीं होंगे;

(ज) इस अधिनियम की धारा 74 द्वारा प्रथम अनुसूची के आदेश 23 में किए गए संशोधन या प्रतिस्थापन किसी ऐसे वाद या कार्यवाही को लागू नहीं होंगे जो उक्त धारा 74 के पूर्व लंबित थी;

(झ) इस अधिनियम की धारा 76 द्वारा यथा अन्तःस्थापित आदेश 27 के नियम 5क और 5ख के उपबन्ध किसी ऐसे वाद को लागू नहीं होंगे, जो उक्त धारा 76 के प्रारम्भ के ठीक पूर्व सरकार या किसी लोक आफ़िसर के विरुद्ध लंबित था और ऐसे हर वाद से ऐसे बरता जाएगा, मानों उक्त धारा 79 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(ञ) इस अधिनियम की धारा 77 द्वारा यथास्थिति, यथा अन्तःस्थापित या प्रतिस्थापित आदेश 27क के नियम 1क, 2क और 3 के उपबन्ध किसी ऐसे वाद को लागू नहीं होंगे या प्रभावित नहीं करेंगे, जो उक्त धारा 77 के प्रारम्भ के पूर्व लंबित था;

(ट) इस अधिनियम की धारा 79 द्वारा यथा अन्तःस्थापित या प्रतिस्थापित प्रथम अनुसूची के आदेश 32 के नियम 2क, 3क और 15 किसी ऐसे वाद को लागू नहीं होंगे, जो उक्त धारा 79 के प्रारम्भ के पूर्व लंबित था और ऐसे हर वाद से ऐसे बरता जाएगा और उसका निपटारा किया जाएगा मानो उक्त धारा 79 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(ठ) इस अधिनियम की धारा 81 द्वारा यथासंशोधित प्रथम अनुसूची के आदेश 33 के उपबन्ध किसी ऐसे वाद या कार्यवाही को लागू नहीं होंगे या प्रभावित नहीं करेंगे, जो उक्त धारा 81 के प्रारम्भ के पूर्व निर्धन के रूप में वाद लाने की अनुज्ञा के लिए लंबित थी और ऐसे हर वाद या कार्यवाही से ऐसे बरता जाएगा और उसका निपटारा किया जाएगा, मानो उक्त धारा 81 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(भ) इस अधिनियम की धारा 84 द्वारा यथासंशोधित प्रथम अनुसूची के आदेश 37 के उपबन्ध किसी ऐसे वाद को लागू नहीं होंगे, जो उक्त धारा 84 के प्रारम्भ के पूर्व लंबित था और ऐसे हर वाद से ऐसे बरता जाएगा और उसका निपटारा किया जाएगा, मानो उक्त धारा 84 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(म) इस अधिनियम की धारा 86 द्वारा यथासंशोधित प्रथम अनुसूची के आदेश 39 के उपबन्ध किसी ऐसे व्यादेश को लागू नहीं होंगे या प्रभावित नहीं करेंगे, जो उक्त धारा 86 के प्रारम्भ के ठीक पूर्व विद्यमान था और ऐसा हर व्यादेश और ऐसे व्यादेश की अवज्ञा के लिए कार्यवाही से इस प्रकार से ऐसे बरता जाएगा, मानो उक्त धारा 86 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(य) इस अधिनियम की धारा 87 द्वारा यथासंशोधित प्रथम अनुसूची के आदेश 41 के उपबन्ध किसी ऐसी अपील को लागू नहीं होंगे या प्रभावित नहीं करेंगे, जो उक्त धारा 87 के प्रारम्भ के ठीक पूर्व लम्बित थी और ऐसी हर अपील का निपटारा ऐसे किया जाएगा, मानो उक्त धारा 87 प्रवृत्त नहीं हुई थी;

(यक) इस अधिनियम की धारा 88 द्वारा यथासंशोधित, प्रथम अनुसूची के आदेश 42 के उपबन्ध किसी ऐसी अपीली डिक्री या आदेश से किसी अपील को लागू नहीं होंगे या उसे प्रभावी नहीं करेंगे जो उक्त धारा 88 के प्रारंभ के पूर्व, आदेश 41 के नियम 11 के अधीन सुनवाई के पश्चात ग्रहण की थी; और ऐसे ग्रहण की गई हर अपील से ऐसे बरता जाएगा मानों उक्त धारा 88 प्रवृत्त नहीं हुई थी।

(यख) इस अधिनियम की धारा 89 द्वारा यथासंशोधित प्रथम अनुसूची के आदेश 43 के उपबन्ध किसी ऐसी अपील को लागू नहीं होंगे, जो उक्त धारा 89 के प्रारम्भ के ठीक पूर्व लंबित किसी आदेश के विरुद्ध की गई थी और ऐसी हर अपील का निपटारा ऐसे किया जाएगा मानो उक्त धारा 89 प्रवृत्त नहीं हुई थी।

अध्याय 6

परिसीमा अधिनियम, 1963 का संशोधन

1963 के अधिनियम 38 की प्रनुसूची का संशोधन।

98. परिसीमा अधिनियम, 1963 की अनुसूची के द्वितीय स्तंभ की प्रविष्टि में अनुच्छेद 127 के सामने "तीस दिन" शब्दों के स्थान पर "साठ दिन" शब्द रखे जाएंगे।